

ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन

युधिष्ठिर मीमांसकः



ऋषि दयानन्द सरस्वती

का

पत्र-व्यवहार और विज्ञापन

(परिष्कृत तथा परिवर्धित संस्करण)

(द्वितीय भाग)

सम्पादक—

वैदिक वाङ्मय का इतिहास, भारतवर्ष का बृहद् इतिहास आदि अनेक ग्रन्थों
के रचयिता, शतशः लुप्त संस्कृत ग्रन्थों के उद्धारक, दयानन्द
महाविद्यालय लाहौर के भूतपूर्व अनुसन्धानाध्यक्ष
तथा महिला विद्यापीठ के संस्थापक

श्री पं० भगवद्दत्त जी बी० ए०

पत्रों के प्रमुख अन्वेषक—

श्री महाशय मामराज जी आर्य (खतौली)

परिष्कर्त्ता एवं परिवर्धक—

पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक

प्रकाशक:—

रामलाल कपूर ट्रस्ट,
बहालगढ़—१३१०२१
(सोनीपत-हरियाणा)

चतुर्थ संस्करण
ज्येष्ठ, २०५३ वि०
मई, सन् १९९६

विशेष—१. इस संस्करण में अनेक नये पत्र-पत्रांश, विज्ञापन-विज्ञापनांश, पत्र-पारसल-सूचना, तार-सारांश आदि प्रथम बार छपे हैं।
२. इसके दो भागों में ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन हैं।
३. तीसरे भाग में ऋषि दयानन्द को भेजे गये विविध व्यक्तियों के पत्र-पत्रांश, पत्र-सूचना आदि छपेंगे।

मूल्य—
प्रथम भाग—
द्वितीय भाग—
तृतीय भाग—
चतुर्थ भाग—

मुद्रक:—
रामकिशन सरोहा
सरोहा प्रिंटिंग प्रेस,
बहालगढ़—१३१०२१
(सोनीपत-हरियाणा)

ऋषि दयानन्द सरस्वती का पत्र-व्यवहार और विज्ञापन

द्वितीय भाग का सूची-पत्र

विषय	पृष्ठ
द्वितीय भाग का सूचीपत्र	क-ख
कतिपय सहायक ग्रन्थों का विवरण	ख-ग
चतुर्थ संस्करण की विशेषताएं	घ
सम्पादकीय	१
ऋषि दयानन्द के स्वरचित ग्रन्थों के विषय में विवरण-संग्रह	१३
ऋ० द० के ग्रन्थों के लेखकों के विषय में उन की सम्मति	१८
कतिपय आवश्यक विषयों पर ऋषि दयानन्द का लेख	१६
नाम-सूची-उन महानुभावों की जिन्हें पत्र-तार आदि भेजे गये	२२
ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन	
संवत् १६३८ के पत्र और विज्ञापन आदि पूर्ण सं० [५६८-६३८]	६०५
संवत् १६३६ ,, ,, ,, ,, [६३६-७८२]	६६६
संवत् १६४० ,, ,, ,, ,, [७८३-६४५]	८१३
प्रथम परिशिष्ट—	
'आर्य सन्मार्ग-सन्दर्शिनी सभा' कलकत्ता और स्वामी दयानन्द [उक्त सभा द्वारा किये गये आक्षेपों का विस्तृत उत्तर]	६५६
द्वितीय परिशिष्ट—	
मूल पाठ पर अवशिष्ट टिप्पणियां	६६६
तृतीय परिशिष्ट—	
ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन में निर्दिष्ट आवश्यक सामग्री का संकलन	१००७
बम्बई आर्यसमाज के २८ नियम और उनकी ऋषि दयानन्द कृत व्याख्या	१००८
विविध विषयक पत्र विज्ञापन आदि का संकलन	१०१६
ब्र० रामानन्द का ऋग्वेदभाष्य और यजुर्वेदभाष्य की हस्त-लिखित प्रतियों का स्थिति-निदर्शक महत्त्वपूण पत्र	१०४३

चतुर्थ परिशिष्ट—
आर्यसमाज-स्थापना की वास्तविक तिथि १०४६

पञ्चम परिशिष्ट—
आर्यभाषा (हिन्दी) के राजकार्यों में प्रचलित करने के लिये
ऋ० द० की प्रेरणा से भेजे गये मेमोरियलों के २ नमूने १०६४

षष्ठ परिशिष्ट—
ऋषि दयानन्द के वास्तविक चित्रों का वर्णन १०७६

सप्तम परिशिष्ट—
ऋ० द० के पत्र और विज्ञापन में स्मृत कतिपय विशिष्ट
व्यक्तियों का संक्षिप्त परिचय १०८७

अष्टम परिशिष्ट—
ऋ० द० के पत्र और विज्ञापनों में उद्धृत वचनों की सूची ११०२

नवम परिशिष्ट—
ऋ० द० के पत्र और विज्ञापनों में उल्लिखित व्यक्तियों
के नाम ११०६

दशम परिशिष्ट—
ऋ० द० के पत्र और विज्ञापनों में उद्धृत ग्रन्थों के नाम ११२३



ऋ० द० के पत्र और विज्ञापन के सम्पादन में

कतिपय सहायक ग्रन्थों का विवरण

१. **ऋषि दयानन्द का पत्र-व्यवहार** (भाग १)—सम्पादक महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) वि० सं० १९६६ ।

२. **ऋषि दयानन्द का पत्र-व्यवहार** (भाग २)—सं० पं० चमूपति। वि० सं० १९९२ ।

३. **ऋषि दयानन्द सरस्वती का जीवन चरित्र**—लेखक पं० लेखराम। उर्दू ।

४. **ऋषि दयानन्द सरस्वती का जीवन चरित्र**—लेखक पं० लेखराम।

हिन्दी संस्करण। प्रकाशक— आर्यसमाज, नया बांस, देहली। वि० सं० २०२८ (प्रथम बार)।

५. ऋषि दयानन्द का जीवन चरित्र—श्री पं० देवेन्द्रनाथ सं० पं० घासीराम। प्रकाशक – आर्यसाहित्य मण्डल, अजमेर। प्रथम द्वितीय भाग वि० सं० १९९० (प्रथमावृत्ति)। दोनों भागों की पृष्ठ संख्या क्रमिक होने से अनेक स्थानों पर भाग का निर्देश नहीं किया है।

६. आर्य धर्मेन्द्र जीवन—ले० बा० रामविलास शारदा, अजमेर। तृतीयावृत्ति।

७. कल्याणमार्ग का पथिक—ले० स्वा० श्रद्धानन्द। प्रकाशक—ज्ञान-मण्डल कार्यालय काशी। वि० सं० १९८१।

८. दानापुर में ऋषि दयानन्द का पदार्पण और प्रभाव—लेखक पं० बिभुमित्र शास्त्री, दानापुर। सन् १९७८।

९. पूना-प्रवचन—सं० युधिष्ठिर मीमांसक। प्रकाशक–ऋषि देवी रूप-लाल कपूर पब्लिक ट्रस्ट, बहालगढ़। प्रथम संस्करण, वि० सं० २०२६।

१०. फर्रुखाबाद का इतिहास—ले० गोपाल राव हरि। प्रकाशक—आर्यसमाज फर्रुखाबाद।

११. मुम्बई आर्यसमाजनो इतिहास—लेखक—दामोदर सुन्दरदास बम्बई। वि सं० १९८९।

१२. श्री आर्यसमाजना नियमो—सं० १९३२ में छपी।

१३. मुम्बई आर्यसमाजनी कार्यवाही—सं० १९५४ में छपी।

१४. मुम्बई आर्यसमाजनी कार्यवाही—सं० १९४५ में छपी।

१५. सत्यार्थप्रकाश—ले० स्वामी दयानन्द सरस्वती। प्रकाशक–राजा जयकृष्णदास। प्रथम संस्करण, सन् १८७५, काशी।

१६. सत्यार्थप्रकाश—ले० स्वामी दयानन्द सरस्वती। प्रकाशक–राम-लाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़। द्वितीय संस्करण, वि० सं० २०३२।



चतुर्थ संस्करण की विशेषताएं

१. इस संस्करण में तृतीय संस्करण की अपेक्षा ७२ नये पत्र-पत्रांश, सूचना आदि का संकलन हुआ है।

२. तृतीय संस्करण के प्रथम परिशिष्ट में पांच विषय संगृहीत किये गये थे। वर्त्तमान संस्करण में उनमें से चार विषय यथास्थान संयोजित कर दिये गये हैं। केवल आर्य सन्मार्ग संदर्शिनी सभा के आक्षेपों का उत्तर प्रथम परिशिष्ट में संकलित है।

३. तृतीय संस्करण के अष्टम परिशिष्ट को यथास्थान संयोजित कर दिया गया है।

४. तृतीय संस्करण के द्वादश परिशिष्ट को वर्त्तमान संस्करण में स्थान नहीं दिया गया है। कारण, पत्रों और विज्ञापनों की पूरी जानकारी यथास्थान टिप्पणियों में दे दी गई है।

५. आर्यसमाज स्थापना की वास्तविक तिथि से सम्बन्धित आवश्यक सामग्री का संकलन चतुर्थ परिशिष्ट में किया गया है।

६. ऋषि दयानन्द के पत्रों और विज्ञापनों में स्मृत व्यक्तियों का परिचय, उद्धृत वचनों, व्यक्तियों और ग्रन्थों की सूचियां परिशिष्टों में पूर्ववत् संकलित की गई हैं।



सम्पादकीय

[तृतीय संस्करण]

'ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन' के वर्तमान परिवर्धित तथा परिष्कृत तृतीय संस्करण का प्रथम भाग गत वर्ष प्रकाशित हो चुका है। अब यह द्वितीय भाग प्रकाशित किया जा रहा है। इस द्वितीय भाग के साथ ऋषि दयानन्द के पत्रों और विज्ञापनों का यह संग्रह १२ बारह परिशिष्टों के सहित पूर्ण हो रहा है। इसके तृतीय भाग, में ऋषि दयानन्द के प्रति लिखे गये पत्रों और विज्ञापनों का संग्रह होगा। यह भाग भी अगले वर्ष यथासम्भव शीघ्र प्रकाशित होगा। तृतीय भाग की पाण्डुलिपि तैयार है, उसे शोध कर प्रेस कापी बनाने का कार्य शेष है।

प्रथम भाग में संवत् १९२६ से संवत् १९३७ तक के पत्र एवं विज्ञापन छपे थे। इस भाग में सं० १९३८, १९३९, १९४० के पत्रों और विज्ञापनों को संगृहीत किया गया है। इसके अन्त में १२ विशिष्ट परिशिष्ट, जिनका ऋषि दयानन्द के पत्रों तथा विज्ञापनों से साक्षात् सम्बन्ध हैं, दिये गये हैं। इनमें कुछ परिशिष्ट द्वितीय संस्करण के समान ही हैं[1], तथापि—

प्रथम परिशिष्ट में पत्रों और विज्ञापनों के छप जाने के पश्चात् जो पत्र पत्रांश पत्र-सूचना तथा विज्ञापन विज्ञापनांश विज्ञापन-सूचना, तार-पारसल-सूचना और प्रश्नोत्तर संगृहीत हुए, उन का संग्रह किया गया है। पूर्व संस्करण के प्रथम परिशिष्ट के अंश यथा स्थान जोड़ दिये गये, परन्तु कुछ अंश भूल से रह गये। उन्हें भी हमने इसी परिशिष्ट में दे दिया है। श्री पं० लेखराम जी कृत जीवनचरित में सहारनपुर के प्रसङ्ग में, एक पौराणिक विद्वान् द्वारा किये गये प्रश्नों के जो उत्तर ऋषि दयानन्द ने दिये थे, वे प्रश्नोत्तर रूप में छपे हैं। यह अंश प्रथम परिशिष्ट के छप जाने

---

१. पूर्व प्रकाशित द्वितीय संस्करण में पत्र और विज्ञापनों के संग्रह के साथ मुद्रित प्रथम परिशिष्ट, जिसमें पत्र और विज्ञापनों के मुद्रण के पश्चात् उपलब्ध पत्र विज्ञापन तथा उनके सारांश वा सूचना आदि का संग्रह किया गया था, छपा था। अन्य परिशिष्ट २-८ तक पृथक् परिशिष्ट रूप में छापे गये थे।

के पश्चात् हमारी दृष्टि में आया। अतः इसे हमने अष्टम परिशिष्ट में 'प्रथम परिशिष्ट के अवशेष' के रूप में दे दिया है।

द्वितीय परिशिष्ट में ऋषि दयानन्द के पत्रों और विज्ञापनों के छप जाने पर जो विशिष्ट टिप्पणियां देनी आवश्यक समझीं उन का संग्रह है। यह परिशिष्ट यद्यपि पूर्व संस्करण के समान ही है तथापि पूर्व संस्करण के इस परिशिष्ट में दी गई टिप्पणियां इस संस्करण में यथास्थान जोड़ दी गई। ये टिप्पणियां उनसे भिन्न तथा नवीन हैं।

तृतीय परिशिष्ट का कुछ भाग पूर्व संस्करण वाला ही है, परन्तु इस में पर्याप्त नई सामग्री संकलित की गई है, जो पूर्व संस्करण में संकलित नहीं थी।

अपूर्व उपलब्धि—तृतीय परिशिष्ट के आरम्भ में आर्यसमाज बम्बई के आरम्भ में बनाये गये २८ नियमों को **ऋषि दयानन्द विरचित व्याख्या के साथ छापा है।** ऋषि दयानन्द ने पूर्ण संख्या २३, पृष्ठ ५८ पं० २-३ में लिखा है—**आर्यसमाज के नियम और उनकी व्याख्या पुस्तक छपता है।** यह व्याख्या पुस्तक की अचानक उपलब्धि हो गई। ये नियम और उनकी व्याख्या श्री दामोदरदास सुन्दरदास विरचित सन् १९३३ में प्रकाशित 'मुम्बई आर्यसमाजनो इतिहास' में पृष्ठ १०-२१ तक छपे हैं (विशेष पृष्ठ ९०८, ९०९ पर छपी टिप्पणी में देखें)।

उक्त व्याख्या के ऋषि दयानन्द कृत होने में अन्तरङ्ग साक्षी—बम्बई आर्यसमाज के २८ नियमों की व्याख्या ऋषि दयानन्द कृत हैं, इसे वह व्यक्ति भली प्रकार जान सकता है जो ऋषि दयानन्द की प्रारम्भिक भाषा-शैली से परिचित है। परन्तु हम यहां दो ऐसे अन्तरङ्ग प्रमाण उपस्थित करते हैं जिन से इस व्याख्या के ऋषि दयानन्द कृत होने की पुष्टि होती है। **प्रथम**—**१७वें नियम** के व्याख्यान के आरम्भ में महाभाष्य की **असिद्धं बहिरङ्गमन्तरङ्गे** परिभाषा को उद्धृत तथा उस की व्याख्या करके उक्त नियम का तात्पर्य समझाया गया है। इस महाभाष्यस्थ परिभाषा का निर्देश ऋषि दयानन्द के अतिरिक्त और कोई नियम-व्याख्याता नहीं कर सकता। **द्वितीय**—नियम १५ की व्याख्या में पुंसवन संस्कार का प्रयोजन 'वीर्यरक्षोपाय' लिखा है। पुंसवन का यह प्रयोजन दयानन्द ने ही अपने ग्रन्थों में लिखा है।[1] अन्य सभी आचार्य पुंसवन संस्कार का प्रयोजन पुमान् पुत्र की उत्पत्ति

१. द्वितीय तृतीय वा चतुर्थ मास में पुंसवन करना। पुरुषत्व का अर्थात् वीर्य

मानते हैं। अर्थात् उन के मत में यह संस्कार 'पुत्र ही उत्पन्न होवे पुत्री उत्पन्न न होवे' इस के लिये किया जाता है। ऋषि दयानन्द सम्भवतः स्वायम्भुव मनु[1] के पश्चात् प्रथम व्यक्ति हैं जो पुत्र और पुत्री में भेद स्वीकार नहीं करते।

चतुर्थ परिशिष्ट—यह परिशिष्ट इस संस्करण में नया जोड़ा गया है। ऋषि दयानन्द ने पण्डित गोपालराव हरि देशमुख को चैत्र शुक्ला ५ शनिवार को जो पत्र लिखा था, उस में मुम्बई में चैत्र शुद्ध ५ शनिवार के दिन आर्यसमाज के आरम्भ होने का उल्लेख किया है(द्र० प्रथम भाग पृष्ठ ५५)। यही स्थापना तिथि मुम्बई आर्यसमाज की प्रारम्भिक ११ मास की कार्यवाही जो सं० १९३२ माहा(माघ)वदि को प्रकाशित हुई थी, उसके आरम्भ में उल्लिखित है। ऋ० द० के सभी प्रमुख चरित-लेखकों ने भी इसी तिथि का निर्देश किया है। सन् १९३९ तक यही स्थापना तिथि मानी जाती रही। तत्पश्चात् मुम्बई आर्यसमाज में लगे एक शिलालेख के कारण इस विषय में विवाद उत्पन्न हुआ और सार्वदेशिक सभा ने शिलालेख के अनुसार चैत्र शुदि १ को आर्यसमाज स्थापना तिथि के रूप में मान्यता दे दी। इस परिशिष्ट में इस सम्बन्ध में विचार किया है।

पञ्चम परिशिष्ट—यह परिशिष्ट पूर्व संस्करण के परिशिष्ट में चतुर्थ स्थान पर था। यह पूर्ववत् ही है।

षष्ठ परिशिष्ट—यह परिशिष्ट पूर्व संस्करण में पञ्चम स्थान पर था। यह इस संस्करण में भी पूर्ववत् छपा है।

सप्तम परिशिष्ट—यह परिशिष्ट पूर्व संस्करण में अष्टम स्थान पर था। इसमें नाममात्र का संशोधन हुआ।

का लाभ जिससे करके होय सो कहावे पुंसवन। संस्कारविधि प्रथम सं० (सं० १९३२) पृष्ठ १९। पुंसवन संस्कार..........दूसरे वा तीसरे महिने में.......... करना चाहिये, जिससे पुरुषत्व अर्थात् वीर्य का लाभ होवे। संस्कार विधि, पृष्ठ ५८ (रामलाल कपूर ट्रस्ट शताब्दी संस्करण)। पुंसवन—इस संस्कार का प्रयोजन वीर्य को पुनः शरीर में किस प्रकार जमावें, इस योजना के सम्बन्ध से है। पूना-प्रवचन, सातवां प्रवचन, पृष्ठ ७८ (रामलाल कपूर ट्रस्ट सं०)।

१. यथैवात्मा तथा पुत्रः पुत्रेण दुहिता समा। मनु ९।१३०। तथा निरुक्त ३।४ में उद्धृत स्वायम्भुव मनु का मत।

अष्टम परिशिष्ट—इस परिशिष्ट में इस संस्करण में दिये गये प्रथम परिशिष्ट में छापने से रह गये प्रश्नोत्तरों को छापा है।

नवम परिशिष्ट—इसमें पत्र और विज्ञापनों में वेदादि ग्रन्थों के उद्धृत वचनों की सूची दी है।

दशम परिशिष्ट—पत्र और विज्ञापनों में उद्धृत व्यक्ति विशेषों के नामों की सूची दी है। इन नामों में उन व्यक्तियों के नामों का उल्लेख नहीं है, जिन को पत्र लिखे गये। किस किस व्यक्ति को कौन सा पत्र लिखा गया, इस की सूची पृथक् आगे दी जा रही है।

एकादश परिशिष्ट—इस परिशिष्ट में पत्र और विज्ञापनों में निर्दिष्ट ग्रन्थों के नामों की सूची दी गई है।

द्वादश परिशिष्ट—प्रस्तुत पत्र और विज्ञापन के संग्रह में छपा कौन सा पत्र कहां सुरक्षित है, इसका निर्देश किया है। यद्यपि सर्वत्र प्रतिपत्र वा विज्ञापन के नीचे टिप्पणी में यथास्थान इस का निर्देश कर दिया है तथापि सुगमता से पत्र के मूल स्थान का परिज्ञान हो जावे, इस लिये यहां नाम-निर्देश पूर्वक उल्लेख किया है।

इस प्रकार नवम दशम एकादश और द्वादश परिशिष्ट सर्वथा नये हैं। चतुर्थ नये परिशिष्ट को मिला **कर इस संस्करण में ५ सर्वथा नये परिशिष्ट जोड़े हैं।**

पूर्व मुद्रित परिशिष्ट छोड़े—पूर्व संस्करण के समय छापे गये परिशिष्टों में से 'ऋषि दयानन्द सरस्वती के स्थानान्तर में आगमन और प्रतिगमन' तथा 'ऋषि दयानन्द के निर्वाण के समय उनके संग्रह में विद्यमान पुस्तकों की सूची' शीर्षक दो परिशिष्ट इस संस्करण में छोड़ दिये हैं। इन को छोड़ने के दो कारण हैं—प्रथम ऋ० द० के पत्र और विज्ञापनों के साथ इनका सीधा सम्बन्ध न होना और ग्रन्थ का अधिक बढ़ जाना। इन दोनों का सीधा सम्बन्ध ऋषि दयानन्द के जीवन-चरित के साथ है। इसी प्रकार हमारे पास वि० सं० १९३१-१९४० तक की मास तिथि और वार के साथ अंग्रेजी सन् के मास और तारीख की तुलनात्मक सूची भी है। ऋ० द० के जीवन में कार्य के ये अन्तिम दस वर्ष ही महत्त्वपूर्ण हैं। अत: मैंने अपने कार्य के लिए इनकी तुलनात्मक सूची पुराने पञ्चाङ्गों से तैयार की थी। यह सूची ऋ० द० के जीवन-चरित तथा पत्र और विज्ञापनों में दी गई तिथि

वा तारीखों की शुद्धि के लिए महत्त्वपूर्ण साधन हैं।[1] अतः इन तीनों का मुद्रण हम **वेदवाणी के ३४वें वर्ष के प्रथम अङ्क** (नवम्बर १६८१) के विशेषाङ्क के रूप में तथा पृथक् पुस्तक रूप में कर रहे हैं। जिन सज्जनों को इनकी आवश्यकता हो वे इन्हें पृथक् पुस्तक रूप में प्राप्त कर सकते हैं।

ऋ० द० के सम्बन्ध में अनुसन्धान की आवश्यकता

यद्यपि अब बहुत काल बीत चुका है। इस बीच में पुरानी सामग्री लुप्त हो चुकी है[2], ऋ० द० और आर्यसमाज के इतिहास से परिचित व्यक्ति दिवङ्गत हो चुके हैं, तथापि हमारा विश्वास है कि अभी भी श्री पं० भगवद्दत्त जी और श्री मामराज जी सदृश ऋषि भक्त व्यक्ति अनुसन्धान के कार्य में जुट जायें तो कुछ न कुछ अलभ्य सामग्री कहीं न कहीं से प्राप्त हो सकती है। इस विश्वास का कारण यह है कि मुझे इस प्रकार की कुछ सामग्री उपलब्ध हुई है। बम्बई आर्य समाज के २८ नियमों की ऋषि दयानन्दकृत व्याख्या की उपलब्धि और अनेक पत्र विज्ञापनों की उपलब्धि इस बात के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

नई महत्त्वपूर्ण उपलब्धि

आर्य समाज काकड़वाड़ी बम्बई के स्वर्गीय विद्वान् पं० ऋषिमित्र जी

---

१. यद्यपि ऋ० द० के जीवन-चरित के शोधन के लिये वि० सं० १८८१ से वि० सं० १९३० तक के ५० वर्षों के तिथि वार और तारीखों के तुलनात्मक-पत्र भी अत्यन्त आवश्यक है तथापि हम उसे संगृहीत नहीं कर पाये। हां ऋ० द० के स्थानान्तर में गमन और प्रतिगमन की जो सूची (ऋ० द० कहां और कब) तैयार की है, उसमें तिथि वार और तारीखों का शुद्धीकरण पुराने पञ्चाङ्गों के अनुसार कर दिया है। अतः सं० १८८१ से सं० १९३० तक की उक्त प्रकार की तुलनात्मक सूची की अब विशेष आवश्यकता नहीं रही है। फिर भी कोई आर्य विद्वान् ऋ० द० के समग्र जीवनकाल के पञ्चाङ्गों का प्रकाशन कर दे तो यह महत्त्वपूर्ण कार्य होगा। हमारे मित्र जोधपुर निवासी श्री जगदीशसिंह जी गहलोत ने गत ४०० वर्षों का पञ्चाङ्ग तैयार किया था, पर वे अपने जीवन में उसे प्रकाशित नहीं कर पाये।

२. देहरादून लखनऊ अजमेर प्रभृति बहुत सी पुरानी आर्यसमाजों के पुराने संग्रह कार्यकर्त्ताओं के प्रमाद से नष्ट हो चुके हैं। ऋ० द० के इन समाजों में जो पत्र सुरक्षित थे वे भी सब दीमकों द्वारा उदरसात् कर लिये गये हैं। ऐसी ही प्रायः अन्यत्र की भी अवस्था हो चुकी है।

को सन् १८६५-६६ में आर्यसमाज बम्बई की पुरानी रद्दी में सन् १८७८ से सन् १८८३ तक की साप्ताहिक सत्संग की कार्यवाही का संग्रह प्राप्त हुआ था। सन् १८८२ के पूर्वार्ध में ऋषि दयानन्द बम्बई में लगभग ६ मास रहे। उन महिनों में आर्यसमाज के साप्ताहिक अधिवेशनों में ऋषि दयानन्द के जो व्याख्यान हुए, उन के कहीं विषय का और कहीं सारांश का लेखन इस में मिलता है। इसकी सूचना श्री पं० ऋषिमित्र जी ने मुझे दी थी। कुछ समय तक मेरा बम्बई जाना न हुआ और इसी बीच में श्री पण्डित जी का स्वर्गवास हो गया। उस कार्यवाही को देखने की लालसा बनी रही। अनेक बार यह भी मन में शङ्का हुई कि श्री माननीय पण्डित जी के साथ ही वह कार्यवाही भी कहीं समाप्त न हो गई हो।

मैं इसी वर्ष जनवरी में ३ दिन तक काकड़वाड़ी आर्यसमाज में ठहरा। आर्यसमाज के वेदोपदेशक श्री पं० दयाशङ्कर जी मेरे घनिष्ठ मित्र हैं। उन से इस विषय में चर्चा की तो उन्होंने मुझे बताया कि यह कार्यवाही सुरक्षित है। उन के प्रयत्न और आर्यसमाज के माननीय मन्त्री जी की कृपा से मुझे उसे देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। श्री पं० दयाशङ्कर जी ने उसके कुछ अंश सुनाए। यह कार्यवाही गुजराती भाषा में है और लिपि के कुछ अक्षर भी प्राचीन रूप के हैं।

मैंने श्री माननीय मन्त्री जी से अनुरोध किया कि मुझे उतने अंश की प्रतिलिपि या फोटोस्टेट कापी करा देवें, जितने भाग में ऋषि दयानन्द के उपदेशों का सारांश संगृहीत है। उन्होंने इस प्रार्थना को स्वीकार किया। बीच-बीच में श्री पं० दयाशङ्कर जी के माध्यम से उन्हें स्मरण दिलाता रहा।

श्री माननीय मन्त्री जी ने इस कार्यवाही की उपयोगिता को समझ कर इस पूरी कार्यवाही की फोटोस्टेट कापी करा ली। उन के इस सत्प्रयत्न से यह महत्त्वपूर्ण सामग्री अब ५०–६० वर्षों के लिए सुरक्षित हो गई। इस महत्त्वपूर्ण कार्य के लिये श्रीमाननीय मन्त्री जी का जितना धन्यवाद किया जाये उतना न्यून होगा। मैं जुलाई मास में बम्बई गया था। श्री पं० दयाशङ्कर जी से सम्पर्क जोड़ने पर २० जुलाई को उन्होंने दूरभाष से सूचना दी कि उक्त सम्पूर्ण कार्यवाही की फोटोस्टेट कापी करा ली है और आप को कुछ समय के लिये देना श्री माननीय मन्त्री जी ने स्वीकार कर लिया है। रात को ६ बजे आकर कार्यवाही की फोटोस्टेट कापी प्राप्त

कर लें। मैं नियत समय पर काकड़वाड़ी आर्यसमाज में गया और श्री-माननीय मन्त्री जी ने मुझे उक्त फोटोस्टेट कापी कुछ समय के लिये दे दी।

मुझे गुजराती भाषा का साधारण ज्ञान है और फोटोस्टेट कापी अनेक स्थलों पर अत्यन्त अस्पष्ट है। अतः पढ़ने में बहुत असुविधा हुई फिर भी इस समय तक जितना उसे पढ़ा है, समझा है, उसके आधार पर कह सकता हूं कि इस कार्यवाही का उतना अंश जितने में ऋ० द० के व्याख्यानों का सारांश दिया है, उसे यदि **बम्बई-प्रवचन** के नाम से छाप दिया जाये तो यह **पूना-प्रवचन** के समान ही महत्त्वपूर्ण कार्य होगा।

ऋषि दयानन्द की दीर्घ-दृष्टि

ऋ० द० के जीवन-चरितों, उनके ग्रन्थों, पत्र और विज्ञापनों से ऋषि दयानन्द की दीर्घदृष्टि के अनेक उदाहरण मिलते हैं। ऐसा ही एक प्रसङ्ग हम यहां उपस्थित कर रहे हैं। बम्बई आर्यसमाज की स्थापना से पूर्व की एक घटना 'मुम्बई आर्यसमाजनो इतिहास' ग्रन्थ में पृष्ठ ८ पर उल्लिखित है—

............त्यार बाद (शास्त्रार्थ में जीवनजी के पराभव के पश्चात्) एमना निवास स्थान मां एमने माटे मान धरावता मुम्बई ना सम्भावित गृहस्थो ए जाई ने धार्मिक चर्चा करता करतां मुम्बई मां आर्यसमाज स्थापन करवानी स्वामीजी ने 'विनत्ति करी। त्यारे एमणे सर्वने उद्देशी ने स्पष्ट जणावी दीधुं के' (उसके बाद [शास्त्रार्थ में जीवनजी के पराजय के पश्चात्] इनके निवासस्थान पर इनके प्रति सम्मान रखनेवाले बम्बई के संभ्रान्त गृहस्थों ने जाकर धार्मिक चर्चा करते करते बम्बई में आर्यसमाज की स्थापना की स्वामी जी से प्रार्थना की। इस पर उन्होंने सब को उद्देश करके स्पष्ट बता दिया कि)—

"भाई, हमारा कोई स्वतन्त्र मत नहीं मैं तो वेद के अधीन हुं और हमारे भारत में पच्चीस कोटि आर्य हैं। कई कई बात में किसी किसी में कुच्छ कुच्छ भेद है, सो विचार करने से आप ही छूट जायगा। मैं संन्यासी हुं और मेरा कर्त्तव्य यही है कि जो आप लोगों का अन्न खाता हुं इसके बदले जो सत्य समझता हूं उसका निर्भयता से उपदेश करता हुं। मैं कुछ कीर्ति का रागी नहीं हुं। चाहे कोई मेरी स्तुति करे, वा नींदा करे,मैं अपना कर्तव्य समझ के धर्मबोध कराता हुं, कोई चाहे माने वा न माने इसमें मेरी कोई हानि लाभ नहीं है"[1]।

---

१. ऋषि दयानन्द का उक्त कथन 'मुम्बई आर्यसमाजनो इतिहास' में आर्य भाषा और नागरीलिपि में ही छपा है। भाषा ऋ० द० की अपनी है।

त्यारे एक भाइ ए कह्यु ं के, अमे जो समाज स्थापन करीए, तो एमां कोई सार्वजनिक नुकसान छे ? ते नो जवाब स्वामी जीए दीधो के— (एक भाई ने कहा कि हम जो समाज स्थापित करें तो इसमें कोई सार्वजनिक नुकसान है ? इसका जवाब स्वामी जी ने दिया कि)—

"आप यदि समाज से पुरुषार्थ कर परोपकार कर सकते हों, समाज करलो इसमें मेरी कोई मनाई नहीं। परन्तु इसमें यथोचित व्यवस्था न रखोगे तो आगे गड़बड़ाध्याय हो जायगा। मैं तो मात्र जैसा अन्य को उपदेश करता हुं वैसा ही आपको भी करूंगा और इतना लक्ष में रखना कि कोई स्वतन्त्र मेरा मत नहीं है। **और मैं सर्वज्ञ भी नहीं हु ं। इससे यदि कोई मेरी भी गलती आगे पाइ जाय युक्तिपूर्वक परोक्षा करके इसी को भी सुधार लेना। यदि ऐसा न करोगे तो आगे यह भी एक मत हो जायेगा, और इसी प्रकार से बाबावाक्यं प्रमाणं करके इस भारत में नाना प्रकार के मतमतान्तर प्रचलित होके, भीतर भीतर दुराग्रह रखके धर्मान्ध होके लड़के नाना प्रकार की सद्विद्या का नाश करके यह भारतवर्ष दुर्दशा को प्राप्त हुआ है इसमें, यह भी एक मत बढ़ेगा।** मेरा अभिप्राय तो है की ईस भारतवर्ष में नाना प्रकार के मत मतांतर प्रचलित हैं तो भी वे सब वेदों को मानते हे, ईस से वेद शास्त्ररूपी समुद्र में यह सब नदी नाव पुनः मिला देने से धर्म ऐक्यता होगी। और धर्म ऐक्यता से संसारीक और व्यवहारीक सुधारणा होगी और ईस से कला कौशल्यादि सब अभीष्ट सुधारा होके मनुष्य मात्र का जीवन सफल होके अन्त में अपना धर्मबल से अर्थ काम और मोक्ष मील सकता है।"[1]

ऋषि दयानन्द के उपर्युक्त कथन से स्पष्ट प्रतीत होता है कि उन्होंने आर्यसमाज-स्थापना को स्वीकृति बहुत झिझकते हुए दी थी। मत-मतान्तरों का जो इतिहास उनके सामने था, उसको ध्यान में रखते हुए उन्हें यह आशङ्का होती थी कि कहीं आर्यसमाज भी मेरे पीछे मेरे नाम पर एक सम्प्रदाय न बन जावे। यह बात उपर्युक्त उद्धरण के मोटे टाइप में छापे गये अंश से स्पष्ट है।

ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज की नींव वेद पर रखी थी, अपने ग्रन्थों वा उपदेशों पर आर्यसमाज की स्थापना नहीं की थी। परन्तु जब से मैंने होश सम्भाला है, यह देख रहा हूं कि आर्यसमाज के विद्वान् वेद को पीछे

---

१. यह अंश भी पूर्ववत् आर्य भाषा वा देवनागरी लिपि में छपा है।

रख कर दयानन्द के ग्रन्थों का ही प्रामाण्य प्रथम कोटि में स्वीकार करते रहे हैं। आपस में मतभेद होने पर प्रतिपक्षी के वचन वा सिद्धान्त को वेद-विरुद्ध न कह कर दयानन्द वा उनके ग्रन्थों के विरुद्ध बता कर उनका तिरस्कार करते रहे हैं। यह प्रवृत्ति उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त होती गई। आज स्थिति यह है कि परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों में 'छापे की भी अशुद्धि नहीं है' ऐसा ताल ठोक कर कहने वाले ही दयानन्द के भक्त और आर्यसमाज के हितैषी समझे जाते हैं। हमारी यही गति रही तो क्या निकट भविष्य में ऋषि दयानन्द की आशङ्का चरितार्थ होकर नहीं रहेगी? यह आर्यसमाज के जीवन-मरण का प्रश्न है। आर्यसमाज के विद्वानों, नेताओं और स्वाध्याय-शील पाठकों को इस स्थिति पर गम्भीरता से विचार करना चाहिये। अन्यथा वह दिन दूर नहीं, जब आर्यसमाज भी एक मत बन जाये।

इस के साथ ही मैं उन आर्य बन्धुओं से, जो वेदादि सच्छास्त्रों का और ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का गम्भीर अध्ययन तथा मनन न कर के ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों में यत्र तत्र भूलें निकालते हैं, स्पष्ट कह देना चाहता हूं कि मेरी दृष्टि में इस धरातल पर मनुस्मृति के प्रवक्ता स्वायम्भुव मनु के पश्चात् यदि कोई ऐसा तत्त्ववेत्ता हुआ है, जिस के मन्तव्यों पर देश काल का कोई विशेष प्रभाव नहीं था, तो वह एकमात्र दयानन्द सरस्वती ही हैं। वे अपनी बात सीधी वेद के आधार पर कहते हैं। वेद के पश्चात् उन्होंने अपने ग्रन्थ में सब से अधिकतर महत्त्व दिया है तो मनुस्मृति को दिया है। अत; दयानन्द को समझने के लिए हमें न्यूनातिन्यून मनुस्मृति के प्रवचनकाल की स्थिति में बैठ कर उन लेखों पर विचार करना चाहिये।

ऋषि दयानन्द ने किन विषम परिस्थितियों में तथा अत्यन्त व्यस्त जीवन में अपने ग्रन्थों की रचना की, इसे भी हमें आंखों से ओझल नहीं करना चाहिये। ऋषि दयानन्द को लेखन मुद्रण आदि कार्यों में कैसे साधारण जनों से सहयोग लेना पड़ा, यह ऋषि दयानन्द के प्रस्तुत पत्र-व्यवहार से सूर्य की भांति विस्पष्ट है[1]। ऐसी अवस्था में लेखन और मुद्रण में साधारण भूलों का होना स्वाभाविक है। ऋषि दयानन्द को सारे जीवन में एकमात्र

१. इसके लिये आगे मुद्रित होने वाले 'ऋषि दयानन्द के स्वरचित ग्रन्थ-विषयक विवरण-संग्रह' में (पृष्ठ १८) पर पं० भीमसेन और पं० ज्वालाप्रसाद आदि के विषय में दिये गये उद्धरण द्रष्टव्य हैं।

मुंशी समर्थदान ही ऐसा व्यक्ति मिला, जो ऋषि का पूर्ण भक्त ईमानदार और ऋषि दयानन्द के कार्य की महत्ता को समझने वाला था। उसके समय में ऋषि के जो ग्रन्थ छपे, उन में उस ने बड़ी सतर्कता बरती। उसके समय में ऐसे भी प्रसङ्ग आये, जब उसने ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य आदि में कुछ अस्पष्टता का अनुभव करके तथा ऋषि के लेख का कोई अन्यथा अभिप्राय न ले लेवे, इस दृष्टि से ऋषि के द्वारा छपने को भेजे गये वेद-भाष्यादि के अंशों को वापस लौटाकर स्पष्ट करने का अनुरोध किया। द्रष्टव्य पत्र-विज्ञापन भाग २, पूर्ण संख्या ६३८ पत्र के पृष्ठ ६६६ का ८वां सन्दर्भ (पैराग्राफ)। इसी प्रकार के अन्य भी कई उदाहरण हैं।

ऋषि दयानन्द के लेखों को समझने के लिये यह भी ध्यान में रखना अत्यावश्यक है कि ऋषि दयानन्द की लेखन शैली पर महर्षि पतञ्जलि कृत महाभाष्य का अत्यधिक प्रभाव था। अतः जैसे महर्षि पतञ्जलि ने महाभाष्य में अनेक स्थानों पर प्रौढ़िवाद (जबरदस्ती से समाधान किये हैं, उसी प्रकार ऋषि के ग्रन्थों में भी कुछ स्थलों में प्रौढिवाद का आश्रयण लिया गया है। इस प्रकार के समाधान सामयिक होते हैं, सिद्धान्त नहीं माने जाते। प्रौढ़िवाद के आश्रय को ऋषि दयानन्द अवस्था-विशेष में स्वीकार करना अनुचित भी नहीं समझते थे। यह उनके शङ्कराचार्य के विषय में लिखे गये '**जो (शङ्कराचार्य ने) जैनियों के खण्डन के लिये उस (अद्वैत) मत का स्वीकार किया हो तो कुछ अच्छा है**' शब्द ध्यान देने योग्य हैं। इस दृष्टि से ऋषि दयानन्द का कौन सा लेख सिद्धान्तयुक्त है और कौन सा प्रौढिवाद से लिखा गया है। इसका भेद करना भी आवश्यक है। अन्यथा भूल से प्रौढिवाद से दिये गये समाधान को सिद्धान्त मान लेने पर कई स्थानों में वेदादि सच्छास्त्रों से विरोध होगा।

ऋ० द० के ग्रन्थों पर विचार का सुगम मार्ग

ऋषि दयानन्द ने सभी ग्रन्थ वेदादि सत्यशास्त्रों के आधार पर लिखे हैं। उनका अपना कोई स्वतन्त्र मन्तव्य नहीं था। यह उन्होंने बहुत्र उद्-घोषित किया है। अतः यदि उनके किसी लेख पर सन्देह होवे वा उसमें भूल प्रतीत होवे तो उसके लिये प्रथम हमें यह प्रयत्न करना चाहिये कि जिस विषय में सन्देह वा भूल प्रतीत होती है, उस विषय को उनके ही अन्य ग्रन्थों में अन्यत्र ढूंढना चाहिये।[1] क्योंकि बहुत से विषयों का प्रति-

---

१. ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों में दो एक स्थल ऐसे भी हैं जिनका एक स्थान पर

पादन उन्होंने अपने अन्य ग्रन्थों में भी किया है। इस प्रकार प्रयत्न करने से बहुत से सन्देह स्वयं दूर हो सकते हैं। और वह विषय यदि उनके ग्रन्थों में कहीं अन्यत्र न आया हो तो उन प्राचीन आर्ष ग्रन्थों को देखना चाहिये, जिनके आधार पर वह विषय लिखा गया है। ऐसा करने पर प्राचीन आर्ष ग्रन्थों का जो मत विदित होवे, उसे ही ऋषि दयानन्द का मत समझना चाहिये। यदि इस प्रकार हम किसी भी विवादास्पद विषय पर विचार करें तो सभी शङ्काएं सरलता से अल्प काल में सुलझाई जा सकती हैं। प्राचीन वेदादि सच्छास्त्रों का आश्रयण न करके यदि हम केवल ऋषि दयानन्द के शब्दों की बाल की खाल ही निकालते रहें तो कभी भी विवाद हल नहीं होंगे। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपनी अपनी बात दयानन्द पर लादने का प्रयत्न करेगा।

ऋ० द० के चित्र और पत्रों की प्रतिकृतियां

ऋ० द० के पत्र और विज्ञापनों के पूर्व जो दो संस्करण हमने छापे थे। उनमें एक ब्र० रामानन्द के साथ खींचा गया ऋ० द० का चित्र तथा ४-५ पत्रों की प्रतिकृतियां (फोटो) छापी थीं। इस संस्करण में हम केवल एक चित्र ऋ० द० का दे रहे हैं। ऋषि दयानन्द के ५-६ असली चित्र और १० पत्रों की प्रतिकृति अलग से छपवाने का विचार है। इसके दो कारण हैं। एक— द्वितीय भाग का अनुमानित आकार से अत्यधिक बढ़ जाना और दूसरा ब्लाक बनवाने और आर्ट पेपर पर छपवाने में अत्यधिक व्यय का होना। हां, हम यह प्रयास करेंगे कि पत्र और विज्ञापनों के ग्राहकों को यह संग्रह लागत मूल्य में दे सकें।

चित्रों और प्रतिकृतियों को इस संग्रह में न देने का एक कारण यह भी है कि हमें अभी एक दो असली चित्रों और कुछ मूल पत्रों की प्राप्ति की आशा है। इसके लिये हम बराबर प्रयत्न कर रहे हैं। उनकी प्रतिकृतियों का भी सन्निवेश हम इसी संग्रह में करना चाहते हैं।

ऋ० द० के पत्र और विज्ञापनों के सम्बन्ध में जो जो नई सामग्री द्वितीय भाग के छपने तक उपलब्ध हुई है, उसे यथास्थान सन्निविष्ट करने

विस्तार से निर्देश है और अन्यत्र पूर्वलिखित विषय का सामान्यरूप से निर्देश किया है यथा सृष्टि-संवत् का ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में विस्तार से वर्णन करके अन्त में जो वर्ष संख्या लिखी है उस वर्ष संख्या का ही मेला चांदपुर आदि में निर्देश मिलता है। ऐसे पुनरुक्त स्थल मूल में विवादग्रस्त होने से निर्णय में सहायक नहीं होते।

से द्वितीय भाग का आकार पूर्व सम्भावित आकार से लगभग सवाया हो गया है। इसी प्रकार तृतीय भाग का आकार भी छपने तक बढ़ने की सम्भावना है, क्योंकि नई नई सामग्री उपलब्ध हो रही है। इस प्रकार ग्रन्थ के आकार के बढ़ने से तथा मंहगाई के उत्तरोत्तर बढ़ने से इस ग्रन्थ के प्रकाशन का व्यय पूर्व चिन्तित व्यय से भी पर्याप्त अधिक हो जायगा पुनरपि हम इसका मूल्य पूर्व जो निर्धारित कर चुके हैं उतना ही रखने का प्रयत्न कर रहे हैं। जिससे पाठकों को इस ग्रन्थ को खरीदने में सुभीता होवे।

धन्यवाद

ऋ०द० के पत्र और विज्ञापन के इस परिवर्धित और परिष्कृत संस्करण को तैयार करने और प्रकाशित करने में जिन जिन महानुभावों ने हमें सहयोग दिया है, उन सब का मैं हृदय से धन्यवाद करता हूं। विशेष करके मेरी प्रार्थना पर जिन वैदिक-धर्म-प्रेमियों और ऋषिभक्त जनों ने इस संस्करण के छापने में रामलाल कपूर ट्रस्ट की आर्थिक सहायता की है, उन सभी का रामलाल कपूर ट्रस्ट की ओर से भी धन्यवाद करना अपना कर्त्तव्य समझता हूं। यदि इन महानुभावों की ओर से हमें आर्थिक सहयोग न मिलता तो इस अत्यन्त मंहगाई के काल में इस महाग्रन्थ को छापने में ट्रस्ट कभी समर्थ नहीं होता, यह वास्तविक स्थिति है। मैं आशा करता हूं कि आगे भी आप महानुभाव इसी प्रकार समय समय पर ट्रस्ट की सहायता करते रहेंगे।

पूज्य गुरुवर श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु के स्वर्गवास के पश्चात् विगत सत्रह वर्षों के अल्प काल में साधन-विहीन रामलाल कपूर ट्रस्ट ने वैदिक आर्ष ग्रन्थों और ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों को प्रकाशित करने का जो महान् प्रयत्न किया है, वह वैदिक धर्मप्रेमी ऋषि-भक्त आर्य महानुभावों के द्वारा दी गई आर्थिक सहायता से ही सम्भव हुआ है।

ऋ० द० के पत्र और विज्ञापन के प्रथम भाग के मुद्रण तक जिन महानुभावों ने इस महान् कार्य में आर्थिक सहायता की थी, उनके नाम धन्यवाद पूर्वक प्रथम भाग के आरम्भ में प्रकाशित कर चुके हैं। उसके पीछे इस द्वितीय भाग के प्रकाशन तक जिन जिन महानुभावों ने आर्थिक सहायता की है, उनके नाम धन्यवाद पूर्वक इस भाग के आरम्भ में दे दिये हैं।

रामलाल कपूर ट्रस्ट — **युधिष्ठिर मीमांसक**
बहालगढ़ (सोनीपत-हरियाणा) — सं० २०३८, श्रावण शुक्ला १५

ऋषि दयानन्द के स्वरचित ग्रन्थों

के विषय में

विवरण-संग्रह

अनुभ्रमोच्छेदन—तैयार हो गया है, ज्वालादत्त के नाम से छपेगा ५३८, १६-१७[1] (भीमसेन के नाम से छपा)। छप चुका है ६०६,२ ॥

अष्टाध्यायीभाष्य—बनाने और छपवाने की इच्छा है १८७, १३-१४। १००० ग्राहक होने पर छपेगा २१३,७। तैयार होने लगा है २४०,७-८। आरम्भ हो गया है २६४,१। चार अध्याय अभी तैयार हुए हैं ३४२,१७; ३४३,२२। शीघ्र छपने वाला है ४१६,१३ ॥

आत्मचरित—५१,६-१८। देवनागरी और अंग्रेजी में करवा कर भेजेंगे ३७३,८-६। थोड़ा सा लिखकर भेजते हैं ३७४,२। उनका समाचार (पत्रों) में छापने का समय आ गया है ३७४,४। असंभव बातें नहीं लिखीं ३८४,१-२। यही एक काम होता तो लिखवाकर भिजवा देते ४०१,१५-१६ ॥

आर्यसमाज बम्बई के २८ नियमों की व्याख्या—आर्यसमाज के नियम और उनकी व्याख्या पुस्तक छपता है[2] ७६,१२।

आर्याभिविनय—बनने की तैयारी है ६६,२२। २ अध्याय बन गये ४ आगे बनने हैं ७६,१०-११ ॥

आर्योद्देश्यरत्नमाला—आजकल में तैयार हो जाएगा १५०,१३-१४ ॥

कुरान हिन्दी—पूरा तैयार है, छापा नहीं गया ३४२,१५-१६; ३४३,२०-२१। जितना शोधा जाय भेज दें ४२१,१ ॥

---

१. यहां प्रथम संख्या पृष्ठ की है, दूसरी पंक्ति की। जहां एक ही संख्या है वह पृष्ठ की है।

२. आर्य समाज के २८ नियम और उनकी व्याख्या तृतीय परिशिष्ट में पृष्ठ १००७–१०१६ तक देखें। यह व्याख्या ऋ० द० कृत है। द्र०—सम्पादकीय वक्तव्य (भाग २) पृष्ठ २।

गोकरुणानिधि—छप गई ६०६,२। अंग्रेजी अनुवाद के विषय में—शीघ्र भेजें ५६६,८-६। विलम्ब क्यों हुआ ६१६,४-५। समय निकालना चाहिये ६४५,५। बम्बई में और लोगों से [अंग्रेजी] बनवानी पड़ी ६८८,१२-१३ ॥

गौतम अहल्या की कथा—७३६,१६। (संक्षेप में पृ० १०१) ॥

जालन्धर की बहस—६६४,८॥

पञ्चमहायज्ञविधि—(सन्ध्याभाष्य) प्रथम सं० तैयार होने को चहै है ६६, २२-२३। छपवाया गया है ७५,१-२ ॥

पञ्चमहायज्ञविधि—द्वितीय संस्करण—यह संस्करण संशोधित और परिवर्धित है १७१,११-२२; १७१,३० ॥ तैयार हो गई है १७२,१४; १७३,३ ॥

पोपलीला—६६४,७। एक पुस्तक भेजा है ७०६।१६।

प्रतिमापूजन-विचार—(विज्ञापन रूप में) २० ॥

प्रश्नोत्तर-हलधर—१६०,२० मूल्य–)

प्रश्नोत्तर-उदयपुर—मौलवी से, लिखे जाते हैं ७४५,११-१२ ॥

प्रश्नोत्तरी (जगन्नाथ कृत) का उत्तर— भेज चुके ७०३,११। विस्तार से लिख के भेजते हैं ६२६,२५। प्रश्नोत्तरी समीक्षा-पत्र ७१६ (टिप्पणी देखो ७१६ टि० ३) ॥

भ्रमोच्छेदन —जब तक प्रकाशित न हो किसी को न दिखाना ४४०,१६-१७। शिवप्रसाद का खण्डन तैयार कर लिया है ४३७,१५। २४ जून को भेजा था ४४६,१५-१६। आठ दिन में छप सकता था ४४८,१-२। कहां कहां भेजना ४४०,१६-२०। जहां तहाँ पहुंचा वा नहीं ४४५,६-७।

मेला चांदपुर—उर्दू में—१२-४-१८७८ से पूर्व छपा था १६०,१६। उर्दू हिन्दी में अलग अलग क्यों नहीं छापा? ४८२,२२। उर्दू हिन्दी में सम्मिलित सितम्बर १८८० में छपा था ॥

वेद-भाष्य— के लिये शेयर बेचना ७६,२। आरम्भ भाद्र शु० १ सं० १६३३ से हुआ ६४,७-८। अपूर्वता का विज्ञापन ६७। भाद्र शु० सं० १६३३ से मार्ग० शु० १५ (३॥ मास में) दस हजार श्लोक प्रमाण बना ६६, १२-१५। दो तीन घण्टे में २४ गायत्री या १२ त्रिष्टुप् या १० जगती छन्दवाले मन्त्रों का भाष्य बनता है ८२५,१४-१६ ॥ **मैक्समूलर और मोनियर विलियम** वेदभाष्य के ग्राहक, दोनो से मूल्य भिजवा देना ३६२,२०-२१ ॥

अंग्रेजी अनुवाद के विषय में— ३६७-३६८, ३७०-३७१ ॥

अशुद्ध-मुद्रण— अशुद्ध न छपे ४६६,४-६ । भाषा बहुत कांट छांट रक्खी है ५७५,१-२। नमूने के तौर पर लिखकर भेजते है ५६६,१३;५८६,३ । पद छूटना भाषा बनाने और शुद्ध लिखनेवाले की भूल है ७४२,२-३ । पद की गणना रामानन्द और दूसरे पण्डित से गिनाये थे, कोई पद रह गया होगा ८०२,१३-१४ ।(भीमसेन ने) कई के अर्थ छोड़ दिये, कई पद अन्वय में छोड दिये, कई आगे-पीछे कर दिये ८०५,९-१० । ज्वालादत्त पोपलीला न घुसेड़ दे ८६९,५-६ । ज्वालादत्त नई (संस्कृत से भिन्न) भाषा बनाता है, गोलमाल देवता शब्द रख दिया ८७२,२-९ । पदार्थ कुछ और है और भाषा कुछ और ही बनाई गई आदि ९११,९-१० ।

नमूने का अंक—शीघ्र निकलेगा ९२,२१; ९३,११ । पौष शुदि ४ सं० १९३३ तक छप गया था १०५,७ ।

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका— नवम्बर सन् १८७६ के मध्य तक बन गई थी(टि०) १०४,३० । संस्कृत और हिन्दी मिलाकर ८ हजार श्लोक प्रमाण हैं १०४,२२-२३ । लगभग (छपाई) समाप्ति को आ रही है १५२,२५; १५३,१५ ॥

ऋग्वेदभाष्य—माघ वदि १३ गुरु १९३४ तक १० सूक्त तक बना १८२, २-३। ८६ सूक्त ६ मंत्र से आगे १११ [सूक्त] मन्त्र तक भेजते हैं ५८६, २०-२१ । छठा मण्डल पूरा हो गया ९१२,७-८ । बाकी १ वर्ष में पूरा हो जायगा ९१२,८-९ ॥

यजुर्वेदभाष्य—माघ वदी १३ गुरु १९३४ तक १ अध्याय बन गया १८२, २-३ । सातवां अध्याय बनता है ५०८,१८ । ७वें अध्याय के २३वें मन्त्र का भाष्य हो रहा है ५१६,१२-१३ । ८वां अध्याय पूरा होने को आया ५३८,१९ । अ० १३ मं० ४७-५२ । जहां जहां मांस भक्षण था ठीक कर दिया ८०५,१४-१५ । कोई रह गया हो तो काट देना ८०५, २४-२५ । मार्ग कृ० १ सं० १९३९ को समाप्त हुआ ७५५,८ ॥

साम-अथर्ववेद के भाष्य में— १–डेढ वर्ष लगेगा ९१२,९ ॥

वेदविरुद्धमतखण्डन— छप गया ६९,२५ । मया निर्मितः २१९,२६-२८ ॥

वेदान्तिध्वान्त-निवारण—मया निर्मितः २१९,२६-२८ ॥

व्यवहारभानु—भीमसेन से शुद्धाशुद्धपत्र लिखवाकर लगवा दो ४३८,१५-१६ । (सामान्य ४३५,१८-१९;४४७,५-६) ॥

शिक्षापत्रीध्वान्त-निवारण—शिक्षा की पुस्तक छपी कि नहीं ? ६६,१२। गुजराती भाषा व्याख्या हो गई ७७,८-६ ॥

संस्कारविधि—प्रथम सं०—बनने की तैयारी हो रही है ६६,२०। शीघ्र बनेगी ७४,३; ७६,११-१२। बनाने के लिए पण्डित की खोज हो रही है ८०,१७-१८। [मांसादि का वर्णन] तत्तद्ग्रन्थों का मत जताने के लिए है २११,५-६ ॥

संस्कारविधि—द्वितीय सं०—बना सोधकर भेज देंगे ८६६.१८। अमावस्या (भाद्र १६४०) तक बन चुकेगी ६१२,१०-११। छपने के लिये १-४७ पृष्ठ भेजे हैं ६३८,१; ६५४,२-३। प्रति संस्कार सामग्री का सूचीपत्र लिख कर भेजेंगे ६३८,६-१२ (टि० ३ भी देखें) ॥

संस्कृतवाक्यप्रबोध—काशी के पण्डितों का आक्षेप ४६३,१६। के एक ठिकाने अशुद्ध भी छपा है ४६४,१-२। अशुद्ध छपने के कारण ४६४,२-४६५,२। मिथ्या आक्षेपों का उत्तर ४६६,२०-४६६,१। छपने में एक अशुद्धि ८१०,५-७ ॥

सत्यार्थप्रकाश—प्रथम सं०—सितम्बर १८७४ तक लिखकर समाप्त हो गया था ५६ (टिप्पणी ३)। १३ वां समु० कुरान मत समीक्षा और १४वां समु० गौरण्ड मत समीक्षा था ५६ (टि० २)। हस्तलेख के १४ समु० के अन्त में लिखा विज्ञापन ५०,१०–५६,५। कुरान के अध्याय (१३ समु०) का शोधन ६६,१५। बाइबल का अध्याय (१४ समु०) छापने की आज्ञा ६६,१८। (१३,१४ समु० के शोधने में देरी होने से न छप सके)। १२० पृष्ठ तक छप गया ६६,३; ७६,१० (टि० २)। अभी (१२० पृ०) एक एक रुपये में मिलता है ७०,२। स० प्र० कितने अध्याय छपा ६६,६। दूसरा भाग (समु० १३,१४) नहीं छापा गया, विचार था १७४,२०-२१। मृत पितरों का श्राद्ध वा तर्पण लिखने वा शोधने वालों की भूल से छप गया था २११,१२-१७ ॥

सत्यार्थप्रकाश—द्वितीय सं०—छपने को भेजा—५ पृ० भूमिका, १-३२ पृष्ठ प्रथम समु० के ७३८,१४-१५। ३३–५७ पृ०[1] तक कल भेजेंगे ७५०, ११। पृष्ठ २४८—२७८ (?) तक ६१४,११-१२। आर्यसमाज वंशावली ६१५,३। २७२ से २१६ पृ० तक १२ समु० ६३३,२-३। १३वां

१. पृष्ठ ७५० पं० ११ का पाठ इस प्रकार शोधें—**'कल तुम्हारे पास ३३ पृष्ठ से ५७ पृष्ठ [तक] सत्यार्थप्रकाश के पत्रे'**।

समु० भेजेंगे ६३८, १५-१६ । ३२०—३४४ तक तौरेत और जबूर का विषय ६५३,२३—६५४,१ । (अल्लोपनिषद् समीक्षा ८६५,१२—८६६, ६। छापना आरम्भ कर दो ७४४,२७) । (आश्विन कृष्ण पक्ष संवत् १६३६ को छपना आरम्भ हुआ, देखो स० प्र० द्वि० सं० में मुंशी समर्थदान का निवेदन)। ५ पृ० भूमिका और सत्यार्थ प्र० के छपे फारम पहुंच गये ७६६,१८ । स० प्र० द्वि० सं० सम्भवत: आश्विन सु० ३ सं० १६३६ तक लिखा जा चुका था, इसमें प्रमाण—एक फारम में कितने पृष्ठ लगते हैं लिखो, तब अनुमान करके लिखेंगे स० प्र० में इतने फारम होंगे ७५०,१३-१६ ॥

भाषा-संशोधन—तुम (समर्थदान) शोध लिया करो ७५०,६-७ । कोई अनुचित हो शब्द निकाल देना ६०६,२ ॥

टिप्पणी—जहां जहां उचित समझो नोट दे दो ७४२,१५-१६; ७४७,१४-१५ । नोट पर किसी का नाम मत दो ७७०,४-७ ॥

संशोधक का नाम—टाइटल पेज पर तुम्हारा (समर्थदान का) नाम रहना चाहिये ७७०,५-६ ॥

सत्यासत्य-विवेक—(स्काट के साथ शास्त्रार्थ)जब छपेगा तब तुम्हारे पास भेजा जायगा ३७५,१७—३७६,१ । मूल्य ।) ५७१,१६ (प्रथम सं० उर्दू में छपा) ॥

वेदाङ्गप्रकाश—भीमसेन को कहो व्याकरण की पुस्तक शीघ्र लिखकर शुद्ध कर तैयार कर दे ६६३,२२-२३ । अपना लिखवाया और तुम्हारा शोधा पुस्तक भी मंगा लिया करेंगे ५७५,१७-१८ । हमने भीमसेन के शोधे पुस्तक देखे तो बहुत भूल निकलती है ७००,११-१२ ॥

पठन-पाठन—रामानन्द [वेदाङ्ग-प्रकाश] पढ़ना ६४८,११-१२ । क्रम से वेदाङ्ग-प्रकाश पढ़वाना ७२६,७-८ । राजकीय पाठशाला में लगा दिये ७६४,२१ ॥

वर्णोच्चारण-शिक्षा—पेश्तर शिक्षा की पुस्तक छपवाई जावे ४१६,२०-२१ ॥

संधिविषय—शीघ्र शीघ्र छपना ४३४,१७ । छपना आरम्भ न हुआ होगा ४४७,४-५ । संधिविषय के पत्रे भी शोधे जाते हैं ४४८,११-१२ ॥ संधिविषय की तरह अशुद्ध न होने पाये ५७५,४। जो हमने शुद्ध कर लिखा है सो भी भेज देंगे ४३८,१२-१३ । शुद्धाशुद्धि पत्र ५७५,५ । कीमत ।।) रक्खो ५६५,१८ ॥

नामिक—संशोधन में अशुद्धियां ५८८,१४-१६। शुद्धि अशुद्धि पत्र ५८६, २-३। नवीन रचना की जरूरत नहीं ५६८,२० ॥

आख्यातिक—कितना छप गया ५७३,३। ज्वालादत्त ने बनाना आरम्भ किया—द्र० ७४२,८-१०; ७४४,१६-२१। ज्वालादत्त से न बन सके तो यहां भेज दो, भीमसेन से बनवायेंगे ७४२,१०-११; ७४४,२२-२५ ॥

पारिभाषिक—६,१० दिन में तैयार कराकर भेजेंगे ७४६,१८-१६। भूमिका सहित ४३ पृ० भेजे हैं ७५०,११-१२ ॥

सौवर—हमने भेजा था, छापते होंगे ७४६,१८ ॥

उणादि-कोष—सुगम संस्कृत में वृत्ति बनाई, तैयार हो गया, सूचीपत्र बाकी है ७६६,११-१३॥ उणादि पाणिनि मुनि रचित ३५,२-३; ७१,१६ ॥

निघण्टु—सूचिपत्र सहित तुम्हारे पास भेज दिया ७६६,१४ ॥

अव्ययार्थ—छपे बहुत दिन हो गये ७००,६ ॥

निरुक्त ब्राह्मण आदि के प्रसिद्ध शब्दों की सूची—बनाकर भेजेंगे, निघण्टु की सूची के अन्त में छापना ७६६,१५-१६ ॥

पाणिनि के ग्रन्थ—अष्टाध्यायी, धातुपाठ गण, उणादि गण, शिक्षा और प्रातिपदिकगण ४६,७-८ ॥

आलङ्कारिक कथा—प्रजापति और उसकी दुहिता १००-१०१। गौतम और अहल्या १०१-१०२। इन्द्र और वृत्रासुर १०२-१०४ ॥

ऋ० द० के ग्रन्थों के लेखकों के विषय में उनकी सम्मति

भीमसेन—निष्कपट है ५३५,१३। व्याकरणादि शास्त्रों को पढ़ा है, उतना ही पाण्डित्य है, अन्यत्र बालक है ६३६,१२। भाषा बहुत ढीली बनाता है ६७३-१। भीमसेन के शोधे भये पुस्तकों में भूल बहुत निकलती है ७००,११-१२। भीमसेन को अत्यन्त अयोग्यता के कारण सब दिन के लिये निकाल दिया ७८२,१८-७८३,१। भीमसेन बकवृत्ति और मार्जारलिङ्गी है ८०४,१६-१७। भीमसेन काम के अयोग्य तथा बुरे स्वभाव का है ८०८,१६-२०। आर्यसमाज में रखने योग्य नहीं ८०८,२१। दूसरे पण्डित से न्याय दर्शन पूरा कर ले ४५४,२६—४५५,१ ॥

ज्वालादत्त—शोधने में बहुत गलती रहती है ५६८,६-१३। ये दोनों भी (भीम० ज्वाला०) एक से हैं कामचोर है ७३६,५-७। व्याकरण का

अभ्यास वा बोध कम है ७४२,९-१०; ७४४,२१। वैसा ही उस (भीम०) से विलक्षण दम्भी क्रोधी हठी और स्वार्थसाधनतत्पर ज्वालादत्त भी है। मेरी समझ में भीमसेन का छोटा भाई ज्वालादत्त है ८०४, १७-२१। घर पै जाके दशगात्रादि मृतक कर्म करके मुर्दावधान खाया करेगा ८२५,२२-२३। पहिले जैसी भाषा नहीं बनाता ९०८,१०-११। अब भाषा अच्छी नहीं बनाता, घास काटता है, पदार्थ कुछ और है, भाषा बनाई कुछ और ही ९११,७-११॥

अन्य पण्डित आदि का उल्लेख—दिनेशराम ४७,९-११। स्वामी पूर्णानन्द ६४,१९; ८४,७। सहजानन्द ७९९,६। लक्षमण शास्त्री ८४,६-७। रामानन्द ८३९,१७-१८। शिवदयालु ९०४,११-१२। रामनाथ ५१०,१२; ५१५,१८; ७९७,९।

कतिपय आवश्यक विषयों पर ऋ० द० का लेख

थियोसिफिकल सोसाइटी—के विषय में—पृष्ठ १९२,२०६,२१३,२३६, २४०,३२६, ३४४,३४८, ४६९,४७१,४७३, ४७५,५५३,५५४,६०२, ६३५,६७५-६९०, ८८२-८८३॥

संस्कृत पाठशाला—फर्रुखाबाद १७,५ काशी ४७,२; ४८,६॥

राजकुमार (क्षात्र) पाठशाला—६६९,२२-२३; ८६०,१०; ८९९,१७॥

शिल्पशिक्षा—के लिये जर्मनी से पत्र व्यवहार ४७९,२७-२८; ४८२,५; ४८५,१९,२०; ५१०,१८; ५२१,११; ५२१,१३; ५६०,१७-२२॥

गोरक्षा-आन्दोलन और उस के लिए सही कराना—६६०,१२-६६२,१४; ६६२, २०-६६५,२५; ६६८,२१; ७२९,३-७३०,७; ७३२,७-७३३; ७३६,१९-२०; ७८०,६; ८९२,७-१०॥

संस्कृत और आर्यभाषा—संस्कृत से ही देश का कल्याण होगा ५८,२३। अल्काट आदि ने संस्कृत पढ़ना आरम्भ किया कि नहीं ३३२,२२-२३। सं०पाठ० खोलने की सुनकर प्रसन्नता हुई ३३१,१५; ३३२,८। अधिक करके संस्कृत की उन्नति पर ध्यान रखना चाहिए ६१२,७-८। आप लोगों की पाठशाला में संस्कृत कम, उर्दू, फारसी, अंग्रेजी अधिक है ६१४,५-७। संस्कृत की उन्नति होनी चाहिए ६१६,३२; ६१८,९। संस्कृत मातृभाषा है ६१८,९। अंग्रेजी, फारसी में धन व्यर्थ जाता है ७३७,२-३। संस्कृत विरुद्ध भाषाओं की उन्नति नहीं करनी चाहिए ७५९,२१। तुम्हारी पाठशाला में अलिफ बे और कैट बैट की भर्मार

है, जो आर्यसमाज का कर्त्तव्य नहीं ८२२,४-५। राजकुमारों को आर्ष-ग्रन्थ और संस्कृत पढ़ानी चाहिए ९२७,१६-१७। वेदभाष्य के लिफाफे पर देव नागरी क्यों नहीं लिखी गई २८४,६-७। संस्कृत और मध्य देश की भाषा (हिन्दी) के लिए सही करके भिजवाई जावें ६७४,१-३; ७३२,८-९; ७३२,१०-११; ७३४,२८-७३५,१४॥

प्राचीन आर्ष ग्रन्थ छपवाये जावें—४९०,४; ४९५,५-६; ८९९,१५-१६ क्या पढ़ने पढ़ाने के सब आवश्यक ग्रन्थ तैयार हैं? ३४२:१२; ४६४, ९॥

आर्य राजा—(जो उस समय थे) १०७,६-९॥

आर्यसमाज की स्थापना—बम्बई में चैत्र सुदी ५ शनिवार सायंकाल साढ़े पांच बजे सं० १९३१[1] पृष्ठ ७३,१८-२० (विशेष द्रष्टव्य परिशिष्ट ४, पृष्ठ १०४६-१०६४)।

जातपात—आजकल आर्य शुद्ध हुओं के साथ व्यवहार न करेंगे ६०९,१७-१८॥

पत्रों में उद्धृत पुस्तकें—ऋग्वेद की दो जिल्द भेंट कीं ६६,१। कामसूत्र २८६,९-१०। चन्द्रालोक वा काव्यालङ्कार सूत्र ५२९,४। काव्य-प्रकाश, सर्वदर्शनसंग्रह, जैन प्रभाकर तथा जैन बौद्ध मत के ग्रन्थ ५३२ ११-१२। चन्द्रालोक सर्वदर्शन जैनमत की पुस्तकें ५२९,३-७। जैनियों के ग्रन्थों के विषय में ५८४,११[2]। पूना के व्याख्यान[3] छपवाते हैं ७८, १०-११।

प्रामाणिक ग्रन्थ की सूची[4]—६-१०; ९८,१-१०॥

---

१. यह गुजराती संवत् है। उत्तर भारतीय सं० १९३२।

२. इस विषय में सेवकलाल कृष्णदास, मन्त्री आ० स० बम्बई १५ जनवरी १८८१ का पत्र तीसरे भाग में देखें। उसमें जैनियों के ग्रन्थों की विस्तृत सूची दी है। उस सूची की तुलना सत्यार्थप्रकाश की भूमिका (सं० १९४०) में दिये गये जैन ग्रन्थों से भी करें।

३. ये १५ व्याख्यान उपदेश मञ्जरी तथा पूना प्रवचन के नाम से विविध स्थानों से छपे हैं। इन का एक शुद्ध संस्करण 'पूना-प्रवचन' के नाम से रामलाल कपूर ट्रस्ट ने भी छापा है।

४. इस सूची के विषय में पृष्ठ २,३ पर छपी ३ संख्या की टिप्पणी तथा पृ० ३९२ पर छपा १३वां प्रश्न वा उसका उत्तर भी देखें।

स्वामी जी के फोटो—मेरठ में उतारा ३१९,१३। रामानन्द को देना ८३९,१७; ८४०,४। (इस विषय में षष्ठ परिशिष्ट पृष्ठ १०७९-१०८७ भी देखें[1]) ॥

मुक्ति—नित्य सुखरूप जो मोक्ष ६६,१२-१३ (मार्ग शु० १५ सं० १९३३)। पुनरावृत्ति ७२१,१७-७२२,९। (फर्रूखाबाद के इतिहास के पृष्ठ १३४ के साथ तुलना करो) ॥

विधवा—सम्पत्ति का अधिकार ४७८,११-१८; ४८०,२०-२६। नियोग का मसविदा ४८६,१५। जो मसौदा तैयार किया ५००,२-५०५,२॥

वैदिक-यन्त्रालय—आर्यप्रकाश यन्त्रालय नाम ४२०,२। वैदिक यन्त्रालय (वैदिक प्रेस) नाम रक्खा ४२४,२७; ४२५,१९। बाहर का काम छापने के लिये नहीं है, सत्य ग्रन्थों के प्रकाश के लिये बनाया है, बाहर के काम से हानि होती है। बाहर का काम बन्द कर दो, नहीं तो दण्ड देंगे इत्यादि ७४४,१२-१४; ८३५,२०-२१; ८४१,८-९; ८५३,२-३ ॥

वसीयतनामा (स्वीकार पत्र)—४८८,१-४९३,११; ७८७,४-७९३,१७॥

श्रौताग्निहोत्र आरम्भ करना—७३१,१३-१४; ८३३,११-१३; ८६०,९-१० ॥

राजाओं की नीति की आलोचना—६९६,१४-२१ ॥

समाधि और ब्रह्मानन्द को छोड़ कर—वेदभाष्य करना ५९१,६-७ ॥

सब काम वेदभाष्यादि छोड़ देंगे—५९५,१७-१८ ॥

अद्यतन का लक्षण—१०७,२ ॥

माता पिता की सेवा—दुराचारी होने पर भी अन्न वस्त्र से ७५४,१-२ ॥



---

१. इस परिशिष्ट में वर्णित कई असली चित्र तथा ऋ० द० के कतिपय मूल पत्रों की फोटो अलग स्वतन्त्र संग्रह में आर्ट पेपर पर छाप रहे हैं।

नामं-सूची

उन महानुभावों की जिन्हें पत्र-तार-पारसल भेजे गये

क्रम संख्या	पत्रादि	उपलब्ध-पत्रादि	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पूर्ण संख्या
१	पत्र	२	अङ्गद शास्त्री	शाहजहांपुर, अम्बागढ़	३४२,३४३
	पत्र-सूचना	२	,,	,,	१७,१६
२	पत्र, तार	१७	अज्ञात नाम	विविध स्थानों को	३१,३४,१६५,१६६[२],१७४, १७५[३],२७६,२७६,३०२, ३०४,३२१,३५२,६४१,६४५, ६७८,६८४,६०७
	पत्र-सूचना	३	,, ,,	,,	६५,४२७,४२८
३	पत्र	१	अधिकार-पत्र	सहारनपुर	३१२
४		१	अन्तिम हस्ताक्षर (मनिआर्डर फार्म पर)	जोधपुर	६४४
५	लेख	१	अबोधनिवारण की अशुद्धि	काशी	४४६

६	पत्र	२	अब्दुल्ला मौलवी	मेरठ	२०७,२०८
७	पत्र-सूचना	१	अशुद्धभाषा का नमूना	काशी	८९५
८	मन्त्रार्थ	१	'अकृष्णेन रजसा' का अर्थ	बम्बई	५०
९	सूचना	१	आक्षेपखण्डन-सूचना	,,	५१
१०	पत्र	२	आत्माराम जी जैन पण्डित	गुजरांवाला	४९०,४९२
११	पत्र	१	आनन्दविजय	,,	५३६
१२	,,	१	आनन्दीलाल जी मन्त्री	मेरठ	५९०,७४०
	पत्र-सूचना	१	आर्य-समाज		
			,, ,,	,,	७५०
	तार	३	,, ,,	मुल्तान	१३५,१३९,१९७
१३	पत्र	२	आर्यसमाज लाहौर के अधिकारी	लाहौर	१०३,१०५
	पत्र-सारांश	१	अधिकारी अमृतसर	अमृतसर	३०३
१४	प्रशंसा-पत्र	१	आर्यसमाजस्थ प्रधान मंत्री	सामान्य बम्बई	५९३
१५	पत्र	११	आलकाट करनल साहब	अमेरिका बम्बई	१५१,१७६,२४८,२९२,३३०, ३८०,३८७,३९६,४३८,५६४, ६४०

१. एक पत्र के प्रारम्भ में जहां कई व्यक्तियों के नाम उल्लिखित हैं, उन नामों का इस सूची में पृथक् पृथक् निर्देश किया है।
२. पूर्ण संख्या १६५,१६६ के पत्र रुड़की के किसी व्यक्ति को लिखे थे।
३. पूर्ण संख्या १७४,१७५ में से एक पत्र सम्भवत: थियोसोफिकल सोसाइटी इंगलैंड के प्रधान डा० मासि को भेजा था।

क्रमसंख्या	पत्रादि	उपलब्ध-पत्रादि	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पूर्ण संख्या
	पत्र-सूचना	१	आलकाट करनल साहब	अमेरिका बम्बई	२९४
	तार	२	आलकाट करनल साहब	अमेरिका बम्बई	३०१,३११
१६	पत्र-सूचना	१	आशी: पत्र (महाराणा सज्जनसिंह)	उदयपुर	७५१
१७	पत्र	१	इन्द्र नारायण प्रधान आ० स०	लखनऊ	७२४
१८	पत्र	४	इन्द्रमणि जी मुंशी	मुरादाबाद	३७७,४५०,५०२,५०६
	पत्र-सूचना	१	,, ,,	,,	५०७
	तार	१	,, ,,	,,	४९९
१९	पत्र	१	ईश्वरानन्द स्वामी	प्रयाग	७९५
	पत्र-सूचना	१	,, ,,	,,	८९२
२०	,,	१	उमरावसिंह मन्त्री आ०स०	रुड़की	२७३
	तार	१	,,	,,	२७६
२१	पत्र	१	औषधि-पत्र	जोधपुर	९३७
	पत्र-सूचना	२	औषधिपत्र-सूचना	उदयपुर	८१७,९०२
२२	पत्र	१	कन्हैयालाल जी चौबे	जलालाबाद	५७०
२३	पत्र	१	कन्हैयालाल इञ्जिनियर	?	४२५

२४	पत्र	१०	कमलनयनजी मन्त्री आ० स०	अजमेर	७८५,८२७,८४४,८५४,८६६ ८७६,९०५,९१३,९१५,९३५
	पत्र-सूचना	२	,, ,,	,,	९२३,९४२
	तार	१	,, ,,	,,	८२०
२५	पत्र	२६	कालीचरण-रामचरणजी मन्त्री आ० स०	फर्रुखाबाद	४७७,४९६,५२५,५२८,५३२, ५५१,५५२,५५५,५६६,५७५, ६३७,६६१,६६४,६७३,६७४, ६७७,६९१,६९५,६९८,७०१, ७२३,७२७,७९१,८०९,८३७, ८३८
	पत्र-सूचना	१	,, ,,	,,	५५३
	पारसल-सूचना	२	,, ,,	,,	६५६,६९२
२६		४	कालूरामजी शर्मा योगी	रामगढ़ चूरू (राज्य जयपुर)	७७,७८,१२६,७८२
			काश्मीर महाराजा	श्रीनगर	द्र० महाराजा काश्मीर
२७		२	किशनसहायजी	मेरठ	२१५,२१६
२८		७	किशन(कृष्ण) सिंह जी बारट मन्त्री महाराणा सज्जनसिंह उदयपुर।	उदयपुर	७८१,८५७,८५६,८७०,८७५, ९१२,९३३
	पारसल-सूचना	१	,, ,,	,,	८५८

क्रमसंख्या	पत्रादि	उपलब्ध-पत्रादि	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पूर्ण संख्या
२९		७	कृपारामजी स्वामी, जंगल-विभाग	देहरादून	२८६,३०८,४५६,५०४,५६८, ६३६,७३०
	पत्र-सूचना	१	” ” ”	”	४५४
३०	”	१	कृष्णलाल साहू	अल्मोड़ा	६३०
३१	”	५	केशवलाल निर्भयराय	बम्बई	६६,७१,३२५,३३५,३६७
३२	पत्र	२	खाडेराव पाण्डुरंग	खण्डुवा	६७०,६७२
	पत्र-सूचना	१	” ”	”	६७५
३३	पत्र	३	गङ्गादत्त जी चौबे पण्डित (सहपाठी श्री स्वामी जी)	कन्नौज, मथुरा	२१,२५,३६
	पत्र-सूचना-सारांश	३	” ” ”	”	२३,२६,२७
	मनि-आर्डर	१	” ” ”	”	२४
३४	पत्र-सूचना	१	गणेशदास एण्ड कम्पनी	काशी	७६६
३५	पत्र	२	गणेशप्रसाद पण्डित	फर्रुखाबाद	५१३,५१६
३६	पत्र	१	गण्डासिंह जी सरदार	रोपड़	२५२
३७	पत्र	१	गश्ती पत्र	सब समाजों को	४४३
३८	पत्र	८	गोपालराव हरि देशमुख	अहमदाबाद	५२,५३,५५,५७,६०,६२,६४,११६

			रायबहादुर जज	पूना, बम्बई	११८,१२०,१२१,२५३,२६४, ५४३,८६७
	पत्र-सूचना	४	,, ,,	,,	४६६,४६७,८६०,८६७
	पारसल-सूचना	१	,, ,,	,,	११७
३६	पत्र	४	गोपालराव हरि पण्डित इंस्पेक्टर आफ़ स्कूल्ज	फर्रुखाबाद	४१३,५६१,७०२,८०३
	पत्र-सूचना	१	,, ,, ,,	,,	३६५,५६०
४०	पत्र-सूचना	१	गोपालनन्द स्वामी परमहंस	जयपुर	४
			गोविन्द रानाडे		देखो महादेव गोविन्द रानाडे
४१	पत्र	१	गौरीशङ्कर पण्डित	बम्बई	७४५
४२	पत्र-सूचना	२	चिदानन्द साधु	सोरों	१८,१६
४३	,,	१	चीफ कमिश्नर	बनारस (?)	३७३
			चूरू के सेठों के सरपञ्च	चूरू (राज्य जयपुर)	देखो सरपञ्च चूरू के सेठों का
४४	पत्र	५	छगनलाल द्विवेदी श्रीमाली	मसूदा	७१७,७६८,८७१,६३१,६४१
	पत्र-सूचना	१	,, ,, ,,	,,	७०४
	प्रशंसा-पत्र	१	,, ,, ,,	,,	५६३
४५	पत्र	१	छबिलदास देवीदास आदि	पूना	६३
४६	पत्र	१	छेदीलाल जी रायबहादुर (कानपुर निवासी)	मेरठ	५८४

क्रम संख्या	पत्रादि	उपलब्ध-पत्रादि	नाम	पत्र पहुंच ,, स्थान	पूर्ण संख्या
४७	पत्र	१	जगन्नाथ बाबू	विलासपुर	६८२
४८	पत्र-सूचना	१	जगन्नाथ पण्डित बरेली वाले	अम्बागढ़	२०
४९		१	जती जी जैन साधु	जयपुर	६
			जयकृष्ण व्यास	बम्बई	द्र० व्यास जी जयकृष्ण
५०	पत्र-सूचना	१	जयपुर के पण्डित	जयपुर	५
५१	पत्र	१	जबाहर	रावलपिण्डी	११४
५२	,,	१०	जवाहरसिंह सरदार मन्त्री आर्यसमाज	लाहौर, शाहपुरा	५७४,५८७,७५३,७५४,७६२, ७७७,७८३,७९७,८२४,८८७ ८४०,८४२
	पत्र-सूचना	२	,, ,,	,,	
५३	पत्र	६	जालिमसिंह जी चौधरी ठाकुर रईस	रूपधनी (एटा)	५६५,५६६,७६८,७७९,९०८, ९२०
५४	पत्र	१	जालिमसिंह राणा कच्छ दरबार	कच्छभुज	५४२
५५	पत्र	१	जी. डब्ल्यू लाइटनर एम.ए.बार.एट.ला.	शिमला	१००
५६	पत्र	१	जीवनगिरि स्वामी	हरिद्वार	२९९

५७	पत्र	४	जीवनदास लाला	लाहौर	१३४,१३६,१४३,६५६
५८	पत्र	१	जी० वाईज़ एलवर्ट् स	वैडन (जर्मनी)	४५६
५९	पत्र	१	जीवाराम टीकाराम	काशी	४१५
६०	लेख	१	जैनमत के सम्बन्ध में प्रश्न और समीक्षा	मसूदा	५८२
६१	पत्र-सूचना	१	जैन साधु	बम्बई	५६
६२	पत्र	१	जैसराम गोटीराम	कलकत्ता	३७२
६३	पत्र-सूचना	१	जोशीलाल जी कल्याण जी	कानपुर	७५५
६४	पत्र	१	जोसेफ कुक साहब	बम्बई	६०६
६५		३	ज्वालादत्त पण्डित लेखक तथा प्रूफ शोधक	काशी	५१०,५१७,५३१
	पत्र-सूचना	६	,, ,, ,,	,,	४०१,४०२,४०३,५१४,५२०,५२७
	पारसल-सूचना	१	,, ,, ,,	,,	५२१
६६		१	टिप्पणी (स्त्रैणतद्धित)	काशी	५६७
		१	,, (पत्र पर)	बम्बई	२१८
६७	पत्र	४	ठाकरदास जी जैनी	गुजरांवाला	४३५,४६१,४६०,६६८
६८		१	डी. रे० ए० राजा पाकसा	मदुरा (लंका)	७५८
			तुकोजीराव महाराजा	इन्दौर	द्र० महाराजा तुकोजीराव
६९	पत्र	५	तेजसिंह रावराजा	जोधपुर	८०१,८०७,८१६,९३६,९४०

क्रम संख्या	पत्रादि	उपलब्ध-पत्रादि	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पूर्ण संख्या
	पत्र-सूचना	१	तेजसिंह रावराजा	जोधपुर	९२६
७०	पत्र	१	थियोसोफिस्ट के सम्पादक	बम्बई	३७९,३८६
७१	पत्र	१	दयाराम वर्मा मास्टर मन्त्री आ० स०	मुलतान	५२३
७२	पत्र	७	दयाराम पण्डित प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय	प्रयाग	१७८,५९६,५९८,६०१,६०२,६१२,६६२
	पत्र-सूचना	३	,, ,, ,,	,,	६११,६१८,६२१
	पारसल-सूचना	३	,, ,, ,,	,,	५९१,५९२,६५५
७३	पत्र	१	दिनचर्या के नियम महाराणा सज्जनसिंह	उदयपुर	७२९
७४	पत्र	१	दीनानाथ गांगोली बाबू	दार्जीलिंग	९८
७५	पत्र	१	दुर्गाचरण जी प्रधान आर्यसमाज	मुरादाबाद	८३२
७६	पत्र	१८	दुर्गाप्रसाद जी सेठ (राय बहादुर)	फर्रुखाबाद	४५८,४६२,४७१,४८३,४८८,५७९,५८१,६६५,७००,७३१,

					७४०,७४७,७५६,७६५,८३०, ८४६,८६६,९२२
७७	पत्र	५	देशहितैषी अजमेर	अजमेर	६१४,६३४,६९३,७४२,८६५ तथा मुन्नालाल पं० के नाम
७८	पत्र	१	द्वारकाप्रसाद जी	ऐतमादपुर (आगरा)	५२४
७९	,,	१	धर्मशी भाई	बम्बई	४४
	तार	१	,, ,,	,,	४५
८०		६	नन्दकिशोरसिंह जी ठाकुर सभासद् राज्यपरिषद	जयपुर	६५३,६६६,७९९,८५१,८८८, ९२९
	पारसल-सूचना	२	,, ,,	,,	६५०,८००
८१	पत्र	१	नाथुराम	बम्बई	६८
८२	पत्र	१	नारायण किशन जी मुंशी	गुजरांवाला	५३५
८३	,,	१४	नाहरसिंह जी महाराजाधि-राज शाहपुराधीश	शाहपुरा (मेवाड़)	६३९,६८०,६९९,७६१, ७९६(?),८१९,८२१,८२५, ८३४,८५३,८५५,८८१,९०९, ९१०
	पत्र-सूचना	१	,, ,,	,,	६८१
८४	पत्र-सूचना	१	नियोग का मसविदा	मेरठ	४५२
८५		३	निर्भयरामजी सेठ मारवाड़ी बिसाउ निवासी	फर्रुखाबाद	४७८,५५६,५७७,

क्रमसंख्या	पत्रादि	उपलब्ध-पत्रादि	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पूर्ण संख्या
	पत्र-सूचना	२	निर्भयराम जी मारवाड़ी	फर्रुखाबाद	४१६,५६७
	पारसल-सूचना	१	,, ,,	,,	५४७
८६		९	निवास सूचना पं० स्वा० दयानन्द सरस्वती		९०,९३,९५,१०२,१०४,१०७, ११०,११२,१२७
८७	पत्र-सूचना	१	नीलकण्ठ शास्त्री	प्रयाग	३९
८८	पत्र	१	पञ्चायत सरावगियां	लुधियाना	४८६,४९०
८९	पत्र	१	पञ्जाब सरकार	लाहौर	९९
९०	पत्र-सूचना	१	पण्डित वर्ग	अजमेर	१३
	,, ,,	१	,, ,,	जयपुर	५
९१	पत्र-सूचना	१	पीटर डैविसन	स्काटलैण्ड	३३३
९२	पत्र	१	पूर्णानन्द स्वामी	बम्बई	९८
९३	पत्र	१	पोहलोराम जी लाला मन्त्री आ०स०	गुजरांवाला	१४१
९४	पत्र	१	प्यारेलाल जी बाबू	लाहौर	२७८
९५	पत्र	२	प्यारेलाल जी मुंशी	चांदापुर	८३,८५
९६	पत्र	१	प्रतापसिंह जी महाराजा मंत्री	जोधपुर	८४३

	पत्र-सूचना	१	प्रतापसिंहजी महाराजा मंत्री जोधपुर		९२५
९७	पत्र	१	प्रभुदयाल जी खत्री	रावलपिण्डी	११४
९८	पत्र	१	प्रभुदयाल पण्डित	तेरही (बांदा)	८०६
९९	पत्र-सूचना	२	प्राणजीदास काहनदास	बम्बई	३२४,७२०
१००		१	प्रशंसा-पत्र (छगनलाल)	मसूदा	५६३
१०१	प्रश्नोत्तर	२	प्रश्न-उत्तर सम्बन्धी	अनेक स्थानों पर	६६,८८
१०२	पत्र	१	प्रसन्नता-पत्र (मुं. समर्थदान)	?	५७२
१०३	पत्र-सूचना	१	फतेहसिंह जी राजराणा	देलवाड़ा (मेवाड़)	६९६
१०४		१	फर्रुखाबाद के पौराणिक पण्डितों के प्रश्नों के उत्तर	फर्रुखाबाद	३४९ (विज्ञापन रूप में)
१०५	पत्र	१	फ्रेयर	बम्बई	६७६
१०६	पत्र	२८	बख्तावरसिंह प्रबन्धकर्ता वैदिक यन्त्रालय, सम्पादक, आर्यदर्पण	काशी शाहजहांपुर	४०५,४०६,४०९,४१०,४१४, ४१६,४१७,४२१,४२३,४२९, ४३१,४३२,४३७,४४०,४४१, ४४४,४४८,४५३,४५७,४६०, ४६३,४६५,४९८,५३४,५३७, ५४४,५४८,५५४
	पत्र-सूचना	५	,,	,, ,,	२८३,४०४,४०८,४६८,४८१
	पारसल-सूचना	३	,,	,, ,,	४२२,४३०,४३३,४६४

क्रमसंख्या	पत्रादि	उपलब्ध-पत्रादि	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पूर्ण संख्या
१०७	पत्र	१	बलदास[1] जी	लाहौर	१४३
१०८	पत्र	१	बलदेवसिंह शर्मा	भारोल (मैनपुरी)	४२
१०९	पत्र-सूचना	१	बलदेवसिंह	देहरादून	४५५
११०	पत्र-सूचना	२	बल्लभदास जी	लाहौर	२१८,३७४
१११	पत्र	१	बहादुरसिंह जी राव मसूदा नरेश	मसूदा अजमेर	८२२
	पत्र-सूचना	२	,, ,,	,,	७०३,९३०
११२	पत्र	१	बालकराम बाजपेयी	अजमेर	८९१
११३	पत्र	३	बिहारीलाल जी पण्डित	जयपुर	७७८,७८७,९०३
११४	पत्र	१	बिहारीलाल	इन्दौर	८८३
११५	पत्र	२	बेचरभाई	अहमदाबाद	५७,६०
११६	पत्र	८	ब्लेवट्स्की मैडम	अमेरिकादि	३३१,३८०,४३८,५००,५६४, ५८६,६४०,६४२
	पत्र-सूचना	२	,, ,,	,,	५२६,५७३
११७	पत्र	२	भगवती माई	हरियाना(होशियारपुर)	७२५,७३४
११८	पत्र-सूचना	१	भागराम पण्डित	अजमेर	९१४
११९		१	भागवत अशुद्धिपत्र	,,	१३

१२०	पत्र	२	भारतमित्र सम्पादक	कलकत्ता	८६३,८७८ तथा द्र० मनोहर दास नाम
	पत्र-सूचना	१	,, ,, ,,	,,	६३१
१२१	पत्र	१	भारतसुदशाप्रवर्तक संपादक	फर्रुखाबाद	८६४
१२२	पत्र	६	भीमसेन पण्डित लेखक तथा प्रूफ शोधक	काशी,प्रयाग	७०,४३४,४७५,४७६,४८०, ४९१,४९३,६२०,७०५
	पत्र-सूचना	३	,, ,, ,,	,,	९५७,८६४,९२१
	पारसल-सूचना	२	,, ,,	,,	४७३,४७४
१२३	पत्र	१	भूपालसिंह ठाकुर (रिसालदार) रईस	ऐरव (अलीगढ़)	१८३
	पत्र-सूचना	१	,, ,, ,,	,,	२३३
१२४	पत्र	२	भोलानाथ जी	अहमदाबाद	५७,६०
१२५	पत्र	१	मजिस्ट्रेट काशी	काशी	३७१
१२६	पत्र-सूचना	१	मथुरादास जी	मियांमीर	६४३
१२७	पत्र	१	मनसुखराय जी	अमृतसर	१०६
१२८	मनिआर्डर-सूचना	१	मनिआर्डर-सूचना	बम्बई	८३६
	,, -फार्मांश	१	मनीआर्डर-फार्मांश	?	६४४
१२९	पत्र	१	मनोहरलाल जी मुंशी	पटना	३८५

१. सम्भवत: यह नाम बल्लभदास हो। द्र० पूर्वसंख्या २१८ का पत्र।

क्रमसंख्या	पत्रादि	उपलब्ध-पत्रादि	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पूर्ण संख्या
१३०	पत्र	२	मनोहरदास खत्री सम्पा० भारतमित्र	कलकत्ता	८४८,८७३ तथा द्र० भारतमित्र सम्पादक
१३१	पत्र	१	मन्त्री-आर्यसमाज	शाहजहांपुर	३१६
१३२	पत्र	१	,, ,,	अमृतसर	३१८
१३३	पत्र	१	,, ,,	गुरुदासपुर	१५६
१३४	पत्र	१	,, ,,	मुलतान	१६७
१३५	पत्र	२	,, ,,	गुजरांवाला	१५६,४८५
१३६	पत्र	१	,, ,,	फर्रुखाबाद	५०८
१३७	पत्र	१	,, ,,	दानापुर	६२४
१३८	पत्र	१	,, ,,	लाहौर	७६४
१३९	पत्र	१	,, ,,	सर्वत्र	६४६
१४०	पत्र	१	(बिना नाम का)	,,	६४५
१४१	पत्र	१	महादेव गोविन्द रानाडे	पूना	५४३
	पत्र-सूचना	२	,, ,,	,,	४६६,४६७
१४२	पत्र-सूचना	२	महाराजा काश्मीर	जम्मू	२६०
१४३	तार	१	महाराजा तुकोजी राव	इन्दौर	६०७
१४४	पत्र	२	महीपतिराम शर्मा	अहमदाबाद	५७,६०

१४५	पत्र	२१	माधोलाल (प्रसाद) जी मन्त्री आ० स०	दानापुर (पटना)	१३०,१३१,१४७,१४६, १७३,१८५,१६४,२१३,२२२, २२६,२४५,२६३,३०६,३१०, ३१७,३४८,३५३,३५७,३६१, ३६६,३६८
	पत्र-सूचना	२	,, ,, ,,	,,	३४४,६६७
	पारसल-सूचना	४	,, ,, ,,	,,	१४६,१४८,१६५,३६७
	धन प्राप्ति रसीद	१	,, ,,	,,	२११
१४६	मुख्तियारनामा	१	मुख्तियारनामा	अलीगढ़	३२२
१४७	पत्र	६	मुन्नालाल पण्डित सं० देश-हितैषी	अजमेर	५८८,५६४,७७६,८२६,८३६, ६०६ तथा द्र० देशहितैषी सम्पादक
	पत्र-सूचना	१	,, ,,	,,	६८७
१४८	पत्र	१	मुकुन्दसिंह ठाकुर	छलेसर (अलीगढ़)	१८२,३६४
१४६	पत्र	७	मुहम्मद कासिम अली मौलवी, देवबन्दी	रुड़की	१८७,१८६,१६२,१६३,१६८, १६६,२०१
१५०	पत्र	२०	मूलराज जी एम. ए. राय-बहादुर	गुजरात तथा लाहौर	१७६,१८१,१८४,१६६,२०२, २०३,२०४,२०६,३८६,४३६, ४४५,४७२,५०३,५०६,५२६, ५५८,५७८,६००,६०३,६५८

क्रम संख्या	पत्रादि	उपलब्ध-पत्रादि	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पूर्ण संख्या
	पत्र-सूचना	१	मूलराज एम. ए. रा. ब.	गुजरात तथा लाहौर	४४२
	पारसल-सूचना	५	,, ,,	,,	१८०,३६०,४६६,५५७,६५१
१५१	पत्र-सारांश	१	मोक्षमूलर (मैक्समूलर)	इङ्गलैण्ड	६४
१५२	पत्र	१	मोहनलाल जी प्रधान आ. स.	लाहौर	१६४
१५३	पत्र	२	मोहनलाल विष्णुलाल पांड्या मन्त्री परोपकारिणी सभा	उदयपुर	७७३,७७५
१५४		१	यजुर्वेदभाष्य संबन्धी टिप्पणी		५८०
१५५		३	यजुर्वेदभाष्य समाप्ति सूचना		७२८
१५६	पत्र	१	यशवन्तसिंह जी राठौर महाराजा जोधपुर नरेश	जोधपुर	८७२,९११,९४५
	पत्र-सूचना	२	,, ,,	,,	८८९,९२४
१५७	तार	१	युधिष्ठिरसिंह	रिवाड़ी	२७४
१५८	पत्र-सूचना	१	रघुनाथसिंह ठाकुर	जयपुर	७८६
१५९	पत्र	१	रङ्गाचार्य	वृन्दावन	३२
१६०	पत्र	२	रजिस्ट्रार पंजाब यूनिवर्सिटी कालेज	शिमला	१००,१०१

१६१	पत्र	१	रणजीतसिंह ठाकुर जागीरदार	अचरौल जयपुर	६,२३४
	पत्र-सारांश	१	,, ,,	,,	
	पत्र-सूचना	३	,, ,,	,,	७,१४,२३०
१६२	पत्र	२	रमाबाई पण्डिता	कलकत्ता	४१२,४२६
१६३	पत्र	१	रमादत्त त्रिपाठी	नैनीताल	८८०
१६४		१	रसीद (वेदभाष्य के चन्दे की)	मथुरा	५०५
१६५	पत्र	१	राजराणा जी झालावाड़ नरेश	झालावाड़	६३२
१६६	पत्र	२	रामचरण कालीचरण	फर्रुखाबाद	६२५,८३७
१६७	पत्र	१	रामदयाल मुदर्रिस	?	७४८,७५२
१६८	पत्र	१०	रामनारायण	प्रयाग	८७,६६,११६,१४०,१५०, २०५,२१०,२१६,२३६,२५०
१६९	पत्र-सूचना	१	रामरतन	अजमेर	११
१७०	पत्र	१०	रामशरणदास जी सेठ मन्त्री प्रथम परोपकारिणी सभा	मेरठ	२८४,४७६,४८२,४८४,४८७, ५३०,५३८,५६२,५ १,६०८
	पत्र-सूचना	१	,, ,,	,,	७४६
	पारसल-सूचना	२	,, ,,	,,	५६३,६३५
१७१	पत्र-सूचना	१	रामसनेहियों के महन्त	अजमेर	१२
१७२	पत्र	२३	रामाधार वाजपेयी ट्रेजरी क्लर्क	लखनऊ	७३,८१,८२,८४,८६,६२,६७, १०६,१२२,१२३,१२४,१२५, १२८,२०६,२३१,२३८,२४२,

क्रमसंख्या	पत्रादि	उपलब्ध-पत्रादि	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पूर्ण संख्या
			रामाधार वाजपेयी ट्रेजरी क्लर्क	लखनऊ	२४३,३३६,३४०,३६२,६१६, ६२६
	पत्र-सूचना	२	,, ,,	,,	२२४,६५२
१७३	पत्र	१	रामानन्द ब्रह्मचारी (लेखक) स्वामी जी	फर्रुखाबाद	८१०
१७४	पत्र-सारांश	१	रामानुज सम्प्रदाय	पुष्कर	८
१७५	पत्र	१	रिवाड़ी के पण्डित	रिवाड़ी	२७७
१७६	,,	१२	रूपसिंह जी सर्दार (ट्रेजरी-क्लार्क)	कोहाट (गुजरांवाला)	४२४,५६६,६०४,६१३,६२३, ६६३,६८३,६६४,७१८,७२६, ७५६,८४५
१७७	पत्र	१	लक्ष्मण शास्त्री	बम्बई	६८
१७८	पत्र	१	लक्ष्मण जी चौधरी (स्वामी लक्ष्मणानन्द जी)	अमृतसर	३८१
१७९	पत्र-सूचना	१	लालजी कल्याण जी जोशी	कानपुर	७५५
१८०	पत्र	३	लालजी बैजनाथ	बम्बई	७४१,८३५,६०१
१८१	पत्र	२	लीलाधर हरिदास सेठ प्रधान आ० स०	,,	२४४,७८०

१८२	पत्रपत्र-सूचना	१	लेखराम आर्य मुसाफिर	पेशावर	६३२,६३३,६४६
१८३	पत्र	१	लेफ्टिनेण्ट गवर्नर पंजाब	लाहौर	६१
१८४	पत्र-सूचना	१	लेफ्टिनेण्ट संयुक्तप्रान्त[1]	इलाहाबाद	३७३
१८५	पत्र	१	वनमाली सिंह (लेखक स्वामी) जी	काशी	७५
१८६		१	विनयमाधव		१०८
१८७		१	विपक्षीयपत्र-अशुद्धि-संशोधन		११५
१८८		३	विरजानन्द जी स्वामी (स्वामी जी के गुरु)	मथुरा	१,२,१५
१८९	पत्र	१	विशुद्धानन्द स्वामी	हरिद्वार	२९८
१९०	पत्र-सूचना	१	विश्वनाथ जी	जयपुर	७९६
१९१	पत्र	८	विश्वेवरसिंह बाबू (वैदिक यन्त्रालय)	नैनीताल प्रयाग	४२०,८११,८३३,८४१,८५०, ८८६,९०४,९१६
१९२	पत्र	१	वृद्धिचन्द जी	मसूदा (अजमेर)	९३१
	पत्र		वेदभाष्यसम्वन्धीपत्र रजिस्ट्रार पंजाब यूनिवर्सिटी	लाहौर	द्र० रजिस्ट्रार पञ्जाब यूनिवर्सिटी नाम
१९३	तार	१	व्यास जी जयकृष्ण वृद्य	वम्बई	४५
	पत्र-सारांश	१	" " "	"	४४

१. अर्थात् वर्तमान 'उत्तरप्रदेश'

क्रम संख्या	पत्रादि	उपलब्ध-पत्रादि	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पूर्ण संख्या
१९४	पत्र	६	शादीराम जी रईस मेरठवाले प्रबन्धकर्ता वैदिक यन्त्रलय	काशी	५११,५१८,५२२,५४०,५४५,५४९
	पत्र-सूचना	१	" " "	"	४९४
	पारसल-सूचना	५	" " "	"	५१५,[1]५३२,[1]५३९,५४६,५५०
१९५	पत्र	१	शालिग्राम पण्डित मन्त्री आ०स०	विलासपुर (सी० पी०)	६८२
१९६	घोषणा	१	शास्त्रार्थ की घोषणा	अमृतसर	१५६
१९७	नियम	२	शास्त्रार्थ के नियम	रुड़की, मेरठ	१९०,२१४
	सूचना		" "	"	१९१
१९८	पत्र-सूचना	१	शिवनारायण बाबू	मेरठ	६२२
१९९	पत्र	२	शिवप्रसाद जी राजा	काशी	३९९,४००
	पारसल-सूचना	१	" "	"	४११
२००	पत्र	१	शिवसहाय जी गौड़ मन्त्री आ० स०	कानपुर	३७
	प्रमाण पत्र	१	" "	"	३५

१. ५१५, ५३२ के पारसल प्रबन्धकर्त्ता वै० य० के नाम से है। उन दिनों शादीराम प्रबन्धक थे।

२०१	पत्र-सूचना	३	शुकदेवप्रसाद जी	नसीराबाद (अजमेर)	२६८,३८२,८६२
२०२	सूचना	१	शुद्धि-अशुद्धि-पत्र (वेदभाष्य-नामिक)	काशी	५२०
२०३	पत्र	२	शेरसिंह जी ठाकुर	करणवास	४४६,८१४
२०४	पत्र	२०	श्यामजी कृष्ण वर्मा पंडित प्रबन्धकर्ता वेदभाष्य तथा प्रो० आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी	बम्बई लन्दन	१५८,१६६,२१७,२२६,२२८, २४१,२५१,२५[illegible],२६०,२६६, २७२,२८०,२८१,२८२,२८७, २८८,२८६,३२८,४१८,४७०,
	पारसल-सूचना	१	,, ,,	बम्बई	२६३
२०५	तार	८	श्यामलदास जी कविराज	उदयपुर	१५८,[illegible],६१५,६८७,७८४, ८०२,८१२,९३४
	पत्र-सूचना	२	,, ,,	,,	८५२,८६३
	पारसल-सूचना	१	,, ,,	,,	६१६
	पत्र	१	,, ,,	,,	६८८
२०६	पत्र	७	श्यामसुन्दरदास जी साहू	मुरादाबाद	३२६,४८६,५०१,७३३,७३६, ८१३,८१८,[illegible]३२
२०७	लेख	१	श्राद्ध पर लेख	बम्बई	३६३
२०८	पत्र-सूचना	१	श्रीप्रसाद जी बाबू मोहतिम बन्दोबस्त	अजमेर	२२३
२०९	लेख-सूचना	१	संस्कृत कालेज, कलकत्ता	कलकत्ता	२६

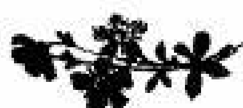
क्रम संख्या	पत्रादि	उपलब्ध-पत्रादि	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पूर्ण संख्या
२१०	पत्र	२	सज्जनसिंह जी महाराणा मेवाड़ाधीश	उदयपुर	६०६
	पत्र-सूचना	२	,, ,, ,,	,,	६३८,८४७
२११	पत्र	१	सबलसिंह ठाकुर	,,	८५६
	पत्र	१	समीक्षा-पत्र	अजमेर	७४२
२१२	पत्र	१	सम्पद्गिरि स्वामी	रावलपिण्डी	११४
२१३		५८	समर्थदान जी मुंशी प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय	मुम्बई, नेठवा ग्राम (चूरु) प्रयाग, अजमेर	२३२,२३५,२३९,२४९,२९१, २९५,२९६,२९७,३०५,३०९, ३१३,३१५,३१९,३२०,३२६, ३२७,३३२,३३४,३३६,३३७, ३४६,३४७,३५१,३५८,३५९, ३६०,३६९,३७८,३९२,६७९, ६८५,६८९,६९०,७०८,७०९, ७१०,७१२,७१६,७२१,७३६, ७४९,७५७,७६३,७७२,७८८, ७९०,७९४,८०५,८२३,८३१,

			समर्थदान जी प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय	मुम्बई	प्रयाग अजमेर	८४६,८८५,८६०,८६३,८६६, ६१८,६२७,६३८
	आदेश-पत्र	१	,, ,,		,,	७७०
	पत्र-सूचना	१	,, ,,		,,	७३२,७६२,८८२
	तार	२	,, ,,		,,	२५६,६८६
	पारसल-सूचना	२१	,, ,,		,,	३१४,३३८,७०६,७०७,७११, ७१३,७१५,७२२,७३५,७७१, ७७४,७६३,८०४,८७६,८७७, ८८४,८६८,६००,६१६,६२८, ६३६
२१४	पत्र	१	सरपञ्च चूरु के सेठों का	चूरु		५७६
२१५	पत्र	१	सर्व आर्यसमाजस्थ प्रधानादि			७६७
२१६	पत्र-सूचना	१	सहजानन्द स्वामी	?		८६१,८७४
२१७		१	सही करने का पत्र गोरक्षार्थ	सर्वत्र		६२८
२१८	पत्र	२	साईंदास जी	लाहौर		१४३,१६४
	पत्र-सूचना	१	,, ,,	,,		६१७
२१६	पत्र	२	सिद्धकरण जैन साधु के उत्तर तथा समीक्षा	मसूदा		५८३ (५८२ भी देख)
२२०	पत्र	१	सिनेट मिस्टर- सम्पा० पयोनियर	प्रयाग		३६१

क्रम संख्या	पत्रादि	उपलब्ध-पत्रादि	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पूर्ण संख्या
			सुखदेव प्रसाद	नसीराबाद	द्र० शुकदेव प्रसाद ।
२२१	पत्र	१	सुखदेवगिरि स्वामी	हरिद्वार	३००
२२२	पत्र	३३	सुन्दरलाल पण्डित पोस्ट-मास्टर जनरल, मुख्य प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय	प्रयाग	७२,७६,८०,१५४,१५५,१५७,१६०,१६१,१६२,१६३,१६७,१६८,१७०,१७७,१८६,२२५,२३७,२५५,२५८,२६१,२६२,२६५,२६६,२७०,२७१,२७५,३५०,३५६,३७५,६१७,६२७,६४४,६७१
	पत्र-सूचना	६	,, ,, ,,	,,	६४३,६५४,६६०,६६४,७१४,८०८
२२३	पत्र	३	सेवकलाल कृष्णदास मन्त्री आ० स०	बम्बई	४५१,५४१,७४४
	पत्र-सूचना	८	,, ,,	,,	४६७,५५६,६०५,७१४,७१६,७३८,८२८,८६८
	पारसल-सूचना	१	,, ,,	,,	५८६

	मनिआर्डर-सूचना	१	सेवकलाल कृष्णदास मन्त्री	बम्बई	७४३
२२४	पत्र-सूचना	१	सेवाराम मुन्शी नहर जिलेदार	मेरठ	२२३
२२५	पत्र	२	स्टूअर्ट साहब कप्तान	रुड़की	२००
२२६		१	स्मिथ मिस्टर	बम्बई	६७६
२२७	पत्र	२	स्वीकारपत्र	मेरठ, उदयपुर	४४७,७६०
२२८	पत्र	१	हरप्रसाद पादरी	फर्रुखाबाद	४०७
२२९	पत्र	१	हरिवंशलाल मुंशी स्टार प्रेस	काशी	४९
२३०		६	हरिश्चन्द्र चिन्तामणि	बम्बई	८९,१२९,२१२,२४०,२४७,
			प्रबन्धकर्त्ता वेदभाष्य		२५९
	पत्र-सूचना	२	,, ,,	,,	६७,२४६
२३१	तार	१	हाकिम पाली	पाली (जोधपुर)	८१५
२३२		१	हिसाब के कागजात (बख्तावरसिंह के)	फर्रुखाबाद	५८५
			हेनेरी एस० ओल्काट	अमेरिका आदि	द्र० आल्काट करनल साहब शब्द
२३३		५५	**विज्ञापन, विज्ञापन-सारांश**		१०,२२,२८,३०,३३,३८,४०, ४१,४६,४७,४८,५४,५८,७४, ७९,१११,१३२,१३३,१३७, १३८,१४४,१५३,१७१,१७२, १८८,२२०,२२१,२२७,२५७,

क्रमसंख्या	पत्रादि	उपलब्ध-पत्रादि	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पूर्ण संख्या
			विज्ञापन, विज्ञापन-सारांश		२८५,३०७,३२३,३४१,३४५,३४६,३५५,३६३,३६४,३६५,३७०,३७६,३८४,३८८,३९८,४३६,४९५,५१२,५१९,६१०,६२९,६४७,६४८,६६७,७८९,८२९
		१	विज्ञापन-नमूना		३५४
		५	विज्ञापन-सूचना		३,५९,६१,१४२,२६७



ऋषि दयानन्द सरस्वती का पत्र-व्यवहार और विज्ञापन

[द्वितीय भाग]

ओ३म्

ऋषि दयानन्द सरस्वती का पत्रव्यवहार और विज्ञापन

[संवत् १९३८ से अन्त तक]

[द्वितीय भाग]

५

[पूर्ण संख्या ५६८] **पत्र**

ता० ३१ मार्च १८८० [१८८१][1]

कृपाराम स्वामी आनन्दित रहो[2]।

पत्र तुम्हारा आया[3] समाचार जाना। आगरे से भरतपुर आये और वहां से आकर यहां जयपुर में ठहरे हैं। ईश्वर विषय में एक व्याख्यान भी यहां हुआ था और भी शायद होगा। कलकत्ते की सभा[4] आदि के साथ हम को लिखने छपवाने का अवकाश नहीं,

१०

---

१. सन् १८८१ चाहिये भूल से १८८० लिखा गया है। क्योंकि ऋ० द० जयपुर में ३१ मार्च १८८१ को थे। चैत्र शुक्ल २, बृह० सं० १९३८।

२. हाथी छाप के बारीक कागज पर सारा पत्र ऋषि के ही हाथ का लिखा हुआ है।

१५

३. स्वामी कृपाराम का पत्र उपलब्ध नहीं हुआ।

४. यह सभा २२ जनवरी १८८१ रविवार के दिन शाम के समय सीनेट हाल कलकता में हुई थी। इस में ऋ० द० के विचारों के विरुद्ध निर्णय किया गया। इसमें ५ प्रश्न रखे गये, जिनका उत्तर श्री राम सुब्रह्मण्य शास्त्री ने दिया। इन उत्तरों का प्रत्युत्तर आर्यसमाज कलकत्ता की ओर से दिया गया। प्रत्युत्तर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। ये उत्तर किस विद्वान् ने दिये, हमें ज्ञात न हो सका। पं० लेखरामजी कृत जीवनचरित में इसका वर्णन **"आर्य्य-सन्मार्ग-सन्दर्शिनी सभा" कलकत्ता और श्री स्वामी दयानन्द**

२०

वेदभाष्य का काम बहुत है। तुमको अवकाश हो लिखो छपवावो। अनुभ्रमोच्छेदन और गोकरुणानिधि छप चुके हैं। वेदभाष्य के अङ्क के साथ तुम्हारे पास भी पहुंचेंगे। भागलपुर, जवनपुर, (जौनपुर) काशी, मिर्जापुर आदि में मुसलमानों का उपद्रव हम
५ ने सुन लिया। मुंशी इन्द्रमणि का मुकद्दमा भी इलाहाबाद में है अभी कुछ सिद्धान्त नहीं हुआ है।

दांत की ओषधी

माजूफल, मोरेठी, पपरिया कत्था, रूमी मस्तगी, नीला थोथा, ये पांच चीज बराबर अर्थात् आध-आध पाव से कम न हों। नीला
१० थोथा को अग्नि पर फुला के थोड़ा सा जल कड़ाही में रख के बुझा ले और बुझा के शीघ्र निकाल के पांचों चीजें अलग-अलग पीस ले उन पांचों की बराबर आक के जड़ की छाल अर्थात् पृथिवी में से खोद के धो डाले जिस से मिट्टी कंकर न रहे। छाल को छोटी-छोटी काट के जिस जल में नीला थोथा बुझाया है उसमें छः ही
१५ चीजें डाल के लोहे की कड़ाही में लोहे की मुसली से कूटे जब महीन हो तब निर्वातस्थान में पीसे, जब तक अंजन के समान न हो जाय पीसता जाये पीछे किसी शीशी में भर रक्खे। दांतोन करके पीछे अंगुली से दांत और मसूरों में लगावे। इससे दांत पुष्ट रहेंगे न हलेंगे न गिरेंगे न पीड़ा होगी[1]। सब से हमारा नमस्ते कह
२० देना।[2]

सवाई जयपुर [दयानन्द सरस्वती]

—:०:—

सरस्वतीजी महाराज शीर्षक के अन्तर्गत पृष्ठ ६७१ से ६९६ तक छपा है। हमारे विचार में ये उत्तर ऋषि दयानन्द द्वारा लिखाए गए होंगे, परन्तु निश्चित प्रमाण न होने से हम इन्हें परिशिष्ट १ में छाप रहे हैं।

२५ १. इस दांत की ओषधी का लेख आगे आश्विन वदी ११ सं० १९४० (=२७ सितम्बर १८८३)को रावराजा तेजसिंह को लिखे पत्र के आगे छापे जा रहे ओषधिपत्र में २९ संख्या पर भी है। वहां 'पपरिया कत्था' के स्थान में 'सफेद कत्था' लिखा है।

२. मूल पत्र इस समय डा० केदारनाथ जी के पास देहरादून में है।
३० म० मामराज ने वहीं से उसकी प्रतिलिपि ता० २८ दिसम्बर सन् १९३२

[पूर्ण संख्या ५६९] पत्र

चौधरी ठाकर जालिमसिंह जी आनन्दित रहो।[1]

मेरा विचार जयपुर में १५ दिनों तक ठहरने का है। पश्चात् अजमेर जाना होगा। यहां के मनुष्यों का सुधार असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। बहुत काल में सुधरेगा तो सुधरेंगे, नहीं तो अधिक बिगड़ जायंगे। अब देखिये कि जैसी भीमसेन की इच्छा थी वैसा ही १५) रुपये मावारी और १) एक रुपये हाथ खर्च और खाने में ३) रू० से कम नहीं लगते। इस ने एक महीना कि जब तक उसका मासिक पूरा न हुआ था, तब तक काम भी अच्छा

को की थी।

[इस समय यह पत्र श्री पं० अमरनाथ जी वैद्य शास्त्री देहरादून के पास है। इस पत्र की प्राप्ति श्री डा० केदारनाथ जी को कैसे हुई, उस का वर्णन श्री पं० अमरनाथ जी वैद्य ने इस प्रकार किया—"यह पत्र किसी प्रकार एक भारतीय आर्य ठेकेदार बरमा देश में ले गया, जो कि वहीं रहता था। वह रोगी हो गया, उसकी चिकित्सा करने के लिये डा० केदारनाथ (देहरादूनवासी) जो सैनिक विभाग में नियुक्त थे, उसके घर गये। उनकी बैठक में टंगा हुआ यह पत्र देखा पढ़ा, तत्काल उनकी इस पत्र को प्राप्त करने की इच्छा हुई। जब रुग्ण महाशय को देखकर लौटने लगे तो उन्होंने शुल्क (फीस) देनी चाही, पर डाक्टर जी ने कहा कि मैं शुल्क न लूंगा, मुझे तो मेरे गुरु जी का यह पत्र दे दो, मैं इसको फिर जहां से (देहरादून) आया वहीं ले जाऊंगा। डाक्टर जी के आग्रह को टाल न सके। डाक्टर जी पत्र प्राप्त कर सन्तुष्ट हो गये। जब वे अवसर प्राप्त कर भारत आये तो सुरक्षितरूप से पत्र साथ ले आये।]

अनुमान १२ वर्ष हुए मैं डा० केदारनाथ जी को मिलने उनके घर गया, उन्होंने कहा मेरा शरीर अस्वस्थ रहता है। स्वामी जी महाराज का मेरे पास एक स्मृति पत्र है, जिसको मैंने दूर देश से लाकर बड़े प्रयत्न से सम्भाल रक्खा है, कहीं नष्ट न हो जावे, यही चिन्ता है। आप ठीक समय पर पहुंचे। ये शब्द उन्होंने श्रद्धा प्रेम भरे हृदय से कहे और शीशे में जड़ा हुआ पत्र मुझे सौंप कर निश्चिन्त हो गये।"

१. मूल पत्र पं० विष्णुलाल जी के पास था। सारा पत्र ऋषि के अपने हाथ का लिखा हुआ है।

५ १० १५ २० २५ ३०

करता था। अब ठीक-ठीक नहीं करता। ये लोग भीतर के मैले और ऊपर के शुद्ध दिखलाई देते हैं। अच्छा, जब तक बनेगा तब तक रखना होगा। बहुत अपराध करेगा तब निकाल देना पड़ेगा। देखिये मैंने इससे कहा था कि जो तेरा भाई रसोई कर सके तो ५ लाना, नहीं [तो]आपके मार्फत रसोईया लाने का कहा था। परन्तु लोभ का मारा अपने महामूर्ख जड़ बुद्धि को ले आया[1]। आज इस को रसोई बनाते १५ दिन हो चुके, कुछ भी न आया और न आगे आने की आशा है। आज भी इसने रसोई जला दी। अब आप को मैं लिखता हूं जो कोई रसोईया चतुर और धर्मात्मा आप की जान १० में हो तो यहां जयपुर में भेज दीजिये। और जो वहां न मिल सके तो लिखिये। फिर यहां से तजवीज हो जायगा। सब से मेरा नमस्ते कह दीजियेगा।

मि० चै० शु० ८ गुरुवार सं० १९३८, ता० ७ मार्च[2]।

[दयानन्द सरस्वती] (जयपुर)

—:o:—

१५ [पूर्ण संख्या ५७०] पत्र

॥ ओ३म् ॥[3]

चोबे कन्हैयालाल जी आनन्दित रहो नमस्ते।

विदित हो कि पत्र आपका आया, समाचार विदित हुए।

---

१. अर्थात् अपने भाई ख्यालीराम को। ख्यालीराम लालपुर जिला २० एटा का रहने वाला था।

२. ७ अप्रेल १८८१ चाहिये। क्योंकि चैत्र शु० ८ गुरुवार को ७ अप्रेल थी।

३. यह पत्र पहले म० मुंशीराम जी के संग्रह में छपा था। इसको उन्होंने परोपकारिणी सभा के पास पड़ी हुई मूलपत्र की नकल से ही छापा २५ था। पश्चात् मूल पत्र को चौबे कन्हैयालाल जलालाबाद वालों के भतीजे श्री यज्ञदत्त जी से रु० ११) देकर ता० ७ जनवरी सन् २७ को म० मामराज जी ने फर्रुखाबाद में खरीदा था। अब उसी से शुद्ध कर के छापा है। म० मामराज ता० ३ से ७ तक जलालाबाद, फतेगढ़ आदि में इसी पत्र के प्राप्त करने में लगे रहे थे। मूल पत्र मुंशी समर्थदान का लिखा हुआ है ३० और हस्ताक्षर ऋषि के हैं। लिफाफे पर पता इस प्रकार लिखा हुआ है—

आप ने प्रश्न किये सो सब हमारे पुस्तकों में उत्तर सहित लिखे हुए हैं। उन में देखने से सब बातें विदित हो सकती हैं। तुम ने प्रथम ही बार ये प्रश्न किये हैं। इस लिए इस दफे तो सब के उत्तर देते हैं। परन्तु आगे हम से प्रश्न करोगे तो हम उत्तर नहीं देंगे, क्योंकि हम को काम बहुत हैं इस कारण से समय बिल्कुल नहीं मिलता। ५
उत्तर (१) संध्योपासन और गायत्र्यादि [जप] नित्यकर्म द्विजों अर्थात् तीनों वर्णों के लिए एक ही हैं। तीनों वर्ण गुण कर्मों से माने जायेंगे, जन्म से नहीं। शूद्र जो विद्यादि गुणों से हीन है इस कारण से उसे संध्योपासन नहीं आ सकता। इसलिए वेद के किसी मन्त्र को याद करके जपा करें। १०

उ० (२) कायस्थ अंबष्ठ हैं[1], शूद्र नहीं। इस विषय में संक्षेप से लिखा है। विस्तार पूर्वक शास्त्रों के प्रमाण देकर लिखने को समय नहीं है।

उ० (३) मुसलमानादि अन्य मत वाले वैदिक मत में आवें तो वे जिस वर्ण के गुण और कर्मयुक्त हों उसी वर्ण में रह सकते १५ हैं। विवाह और खान पानादि व्यवहार भी अपने समान वर्ण के साथ करें। आज कल के आर्य्य लोग उन के साथ उक्त व्यवहार नहीं करेंगे, इसलिये अपने लोगों में ही करें और मत वैदिक रक्खें। इसमें किसी प्रकार की हानि नहीं हो सकती।

तुम्हारे प्रश्नों के उत्तर इस प्रकार संक्षेप से दिये हैं। विस्तार २० पूर्वक हमारे बनाये ग्रन्थों में देख लो।

ता० १६ अप्रेल[2]	हस्ताक्षर
	दयानन्द सरस्वती
सं० १८८१ ई०	स्थान जयपुर राजपूताना

चौबे कन्हैयालाल, ग्राम जलालाबाद, परगना कन्नौज, जिला फर्रुखाबाद। २५

मूल पत्र लिफाफे सहित हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

१. ब्राह्मण से वैश्य की कन्या में उत्पन्न पुत्र अम्बष्ठ कहाता है — **ब्राह्मणाद् वैश्यकन्यायामम्बष्ठ नाम जायते।** मनु १०।८॥

२. वैशाख कृष्ण २, शनि, सं० १९३८। ३०

[पूर्ण संख्या ५७१] **पत्र**

लाला रामशरणदास जी आनन्दित रहो।[1]

हमने एक कार्ड भेजा था[2] आपके पास पहुंचा होगा।

आपने आगरे से कागज मंगवा लिये वा नहीं, क्योंकि उस
५ कागज को आपको भी पहिले देखना चाहिए। लाला गिरधरलाल
जी ६ ता० मई [१८८१][3] को तुम्हारे पास आने को लिखते हैं सो
आप भी उनसे पत्र द्वारा निश्चय करलें। और उसी दिन की इतला
बखतावरसिंह को भी करदें कि अमुक मिति को इस काम का
आरम्भ होगा कि जिससे वह भी नियत समय पर उपस्थित हो
१० जावे। और अब छापाखाना प्रयाग में आ गया[4] सब काम दुरुस्ती
से चलने लगा। अब आप लाला शादीराम को भी वहां से बुला
लीजिये। क्योंकि अब पंडित सुन्दरलाल जी वहां का सब प्रबन्ध
कर लेंगे। उन बिचारे ने यथाशक्ति ऐसे समय पर काम दिया।
सो बहुत कुछ अच्छा किया। और हम शादीराम को लिख भेजेंगे।
१५ यहां से हम कुछ दिनों में अजमेर को जावेंगे। सब से हमारा नमस्ते
कह दीजिये। और यहां जयपुर के लोगों के भाग्य मन्द हैं। कुछ भी
धर्म की उन्नति वा कहने सुनने को उद्यत नहीं होते। **सन्धिविषय
छप गया, अब आप लोग पढ़ने पढ़ाने का आरम्भ क्यों नहीं
करते ? और नामिक भी अब छपकर आता है।**

२० [द० स०] (जयपुर)

---

१. यह पत्र स्वर्गीय ला० रामशरणदास जी रईस मेरठ वालों के पुराने
पत्रों में से म० मामराज जी तथा लाला जी के पोते बाबू परमात्माशरण
तथा श्री पुरुषोत्तमप्रसाद जी ने जुलाई सन् १९४५ में खोजा। मूल पत्र
उन्हीं के यहां सुरक्षित है।

२५ २. सम्भवत: पूर्ण संख्या ५६२ (पृष्ठ ५९८) का कार्ड।

३. पत्र के अन्त में तिथि-संवत् कुछ नहीं है। प्रकरण तथा अनुमान
से प्रतीत होता है कि वैशाख शुक्ल ५ संवत् १९३८ मंगलवार ता० ३ मई
१८८१ को मेरठ भेजा गया होगा।

४. वैदिक यन्त्रालय चैत्र शु० १ सं० १९३८ (=३० मार्च सन् १८८१)
३० के दिन प्रयाग लाया गया था। द्र०—ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास,
८ वां परिशिष्ट।

[पूर्ण संख्या ५७२]　　पत्र

ओ३म्

प्रसन्नता पत्र[1]

विदित हो कि मुनशी समर्थदान मङ्गलदान जी के पुत्र ग्राम नेठवे ताल्लुका रामगढ़ रियास्त सीकर राज जयपुर के रहनेवाले हैं। ५
इन्होंने मुम्बई में हमारे वेदभाष्य कार्यालय का काम एक वर्ष तक बड़े प्रेम परिश्रम और चतुराई से किया। इनके काम देखने और ये हमारे पास भी कई दिन तक रहे। इससे हमने निश्चय किया है कि यह पुरुष धार्मिक, निष्कपटी सच्चा, उद्योगी, परिश्रमी, चतुर, सभ्य, सुशील और चाल चलन का बहुत ही अच्छा और श्रेष्ठ है। १०
इसलिये बहुत प्रसन्न होके लिखते हैं कि जो कोई महाशय इनको उन्नति देंगे, तो हम बहुत प्रसन्न होंगे। और हमें पूरी-पूरी आशा है कि इनके आधीन जो कार्य होगा, उसको यह अच्छे प्रकार पूर्ण करेंगे। हमने यह प्रसन्नता पत्र इनको बड़ी प्रसन्नता पूर्वक इसलिये दिया है किसी नये स्थान में ये जायं तो अजान लोगों को भी इन १५
के सद्गुण प्रगट हों।

मिती वैशाख शुक्ल ६　　　　हस्ताक्षर
सं० १९३८। तारीख ४　　　　दयानन्द सरस्वती
मई सन् १८८१　　　　स्थान जयपुर (राजपूताना)

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५७३]　　पत्र-सूचना　　२०

[मैडम ब्लेवेस्टकी के नाम बम्बई भेजा गया][2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५७४]　　पत्रांश

भाई जवाहरसिंह [मन्त्री आर्यसमाज, लाहौर]।

---

१. इसकी छपी हुई प्रति आर्यसमाज फर्रुखाबाद में है। उसी से म० मामराज जी ने सन् १९२७ में इस की प्रतिलिपि की। मूल पत्र मु० समर्थदान के घर में होगा। २५

२. इस पत्र की सूचना अगली पूर्ण संख्या ५७४ के पत्र में है।

'मेडम ब्लेवेस्टकी के पत्र का उलथा तुमने भेजा था, सो आ गया। और उसका उत्तर भी हमने मुम्बई में भेज दिया।'[2]

१२ मई [१८] ८१[3]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५७५] पत्र

५ लाला कालीचरण जी रामचरण जी आनन्दित रहो[4]।

यदुनाथ मित्र को जो तुमने ४०) रु० मासिक पर नियत किया है सो ठीक है परन्तु **इस पाठशाला में अधिक करके संस्कृत की उन्नति पर ध्यान रहना चाहिये।** और इसमें केवल लड़के ही पढ़ते हैं **अथवा हमारे रईस लोगों में से भी कोई पढ़ता है।** और उस
१० पाठशाला में से कोई विद्यार्थी अच्छे निकले वा नहीं, क्योंकि शाला को एक वर्ष हो चुका है चौबे तोताराम का हाल लिखा सो जाना। उसका मिजाज तेज है सहन शक्ति बहुत कम है। जयपुर में हम डेढ़ मास पर्य्यन्त रहे। वहां अभी राज्य प्रबन्ध में गड़बड़ सा है। और सब सर्दार लोग तो मिले थे, परन्तु राजा अभी नहीं मिला।
१५ इसलिये कि उन के बाधक लोग बहुत हैं। वहां पर वेदधर्म के प्रकाश की बड़ी आवश्यकता है। सो हमने कुछ-कुछ वहां संस्कार भी डाला है। ईश्वर करे कुछ फल लगे। हिसाब के विषय में जो तुमने लिखा सो यह बखतावरसिंह का गड़बड़ था। अब प्रयाग में हिसाब ठीक हो रहा है। सो सब को विदित होगा। परन्तु सीधा
२० हिसाब तो आप लोग जानते हैं कि प्रति ग्राहक दोनों वेदों का चार वर्ष का २५॥) चाहिये। इसी हिसाब से देखकर भेज दो। और

---

१. यह उत्तर में भेजा गया पत्र पूर्व पूर्ण संख्या ५६४ (पृष्ठ ५९९) पर छपे पत्र से भिन्न प्रतीत होता है। इसी प्रकार का एक पत्र आगे भाई जवाहरसिंह के नाम २२ जुलाई १८८१ को लिखा छपा है। द्र०—पूर्ण सं०
२५ ५८४।

२. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवन चरित पृ० ८४० (हिन्दी सं० पृष्ठ ८७६) पर उद्धृत। अजमेर से भेजा गया।

३. वैशाख शुक्ल १४, बृह०, सं० १९३८।

४. म० मामराज ने मार्च सन् १९२७ में आर्यसमाज फर्रुखाबाद के
३० पुराने पत्रों में से खोजा था। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

लाला निर्भयराम के पास भी हिसाब से होगा। उनसे भी समझ सकते हो। आप को भी विदित करते हैं कि आर्य्यसमाज लाहौर से एक अखबार अंग्रेजी भाषा में जारी होने वाला है। इससे यह अभिप्राय है कि उसके द्वारा वेदोक्त आर्य्य धर्म्म तथा आर्य्यसमाजों की कारवाई राज प्रधान अंगरेज लोगों को भी विदित होती रहे। ५ वरन विलायत वालों पर भी प्रगट होता रहेगा। इस्के प्रबन्ध में आर्य्यसमाज लाहौर और मेरठ की अन्तरङ्ग सभा की ठीक-ठीक अनुमति हो गई है। इसके नफे नुकसान में सहभागी रहेंगे। मेरी अनुमति है आप लोग भी इनके शामिल होओ क्योंकि इस्से आमदनी और तुम्हारे धर्म्म तथा आर्य्यसमाजों की कारवाई का ठीक- १० ठीक वृत्तान्त गवर्नमेण्ट तथा सम्पूर्ण अङ्गरेजों को विदित भी होता रहेगा, जिस्से अनेक अच्छे लाभों की आशा हो सकती है। और अनुमान होता है कि यह पत्र विलायत के बड़े-बड़े ठिकानों में पहुंचेगा, इस से आशा है कि लाभ भी अच्छा होगा। पण्डित गोपालराव हरी ने जो एक मुदर्रिस हमारे पास भेजने को कहा १५ था वह अभी तक नहीं आया। जिसको १५ दिन का अर्सा हो गया। सो उनसे कहना कि क्या कारण है जो अभी तक नहीं आया। किमधिकम्।

वैशाख शुक्ल १४ संवत् १९३८।[1]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५७६]　　पत्रांश　　२०

[चुरु के सेठों के सरपञ्च][2]

एक अच्छी वर्षा होने पर हम अजमेर से कहीं को रवाना हो सकेंगे। क्यों उदयपुर मेवाड़ की तरफ भी कुछ हमारे बुलाने का विचार हो रहा है। यदि उदयपुर को गये तो वह भी आप लोगों का विदित किया जायेगा। शायद इन दोनों स्थानों को जाने से २५ सवारी लेने को आवश्यकता नहीं दीखती। जब जरूरत होगी आप को लिखा जायगा।

—:०:—

१. १२ मई सन् १८८१। यह पत्र अजमेर से भेजा हुआ है।

२. यह पत्रांश पूर्ण संख्या ५७७ (पृष्ठ ६१५ पं० १२) में उद्धृत है।

[पूर्ण संख्या ५७७] पत्र

सेठ निर्भयराम जी आनन्दित रहो।[1]

यह पत्र आपको आवश्यक समझकर इसलिये लिखा जाता है कि आप इसको उपसभा[2] में सब लोगों को सुना देवें। मुंशी ५ कालीचरण रामचरणजी के पत्र से विदित हुआ कि **आपलोगों की पाठशाला में आर्य्यभाषा संस्कृत का प्रचार बहुत कम और अन्य भाषा अङ्गरेजी वा उर्दू फारसी अधिक पढ़ाई जाती है। इस से वह अभीष्ट जिस्के लिये यह शाखा खोली गई है सिद्ध होता नहीं दीखता। वरन आपका यह हजारहा मुद्रा का व्यय संस्कृत की** १० **ओर से निष्फल होता भासता है। हम ने कभी परीक्षा के कागजात वा आज तक की पढ़ाई का फल कुछ नहीं देखा। आप लोग देखते हैं कि बहुत काल से आर्य्यावर्त में संस्कृत का अभाव हो रहा है। वरन संस्कृतरूपी मातृभाषा की जगह अङ्गरेजी लोगों की मातृभाषा हो चली है। अङ्गरेजी का प्रचार तो जगह-जगह** १५ **सम्राट् की ओर से जिनकी यह मातृभाषा है भले प्रकार हो रहा है। अब इस्की वृद्धि में हम तुम को इतनी आवश्यकता नहीं दीखती।** और न सम्राट् के सामने कुछ कर सकते हैं। हां, हमारी अति प्राचीन मातृभाषा संस्कृत जिस्का सहायक वर्तमान में कोई नहीं है। और यही व्यवस्था देखकर संस्कृत के प्रचारार्थ आपलोगों २० ने यह पाठशाला स्थापित की है। तो यह भी उचित कर्तव्य अवश्य है कि सदैव पूर्व इष्ट के सिद्धि पर दृष्टि रक्खी जावे। अब इस के साधनार्थ यह होना चाहिये कि **कुल पठन पाठन समय के छः घण्टों में ३ घण्टे संस्कृत २ घण्टे अङ्गरेजी और १ घण्टा उर्दू फारसी पढ़ाई जाया करे।** और प्रति मास संस्कृत की परीक्षा

---

२५ १. फर्रुखाबाद आर्यसमाज के पुराने पत्रों में से म० मामराज ने सन् १९२७ में खोजा था। मूल पत्र म० मामराज जी के पास श्रीराम निवास (बिल्डिंग) खतौली मुजफ्फरनगर में सुरक्षित है।

२. इस उपसभा का पूरा नाम 'मीमांसक उपसभा' था। इसके विषय में पूर्णसंख्या ४१३, पृष्ठ ४४४ का पत्र देखें। इस सभा के विषय में परि- ३० शिष्ट ३ में आर्यसमाज फर्रुखाबाद के रजिस्टर से आवश्यक विवरण छाप रहे हैं।

अन्य पण्डितों के द्वारा हुआ करे। और वे प्रश्नोत्तरों के कागजात हमारे पास भेजे जाया करें। अभी तक कुछ फल संस्कृत में इस शाला से नहीं लगा। सो इसलिये ऊपर जो कुछ लिखा गया उस्को वर्त्ताव में लाओ तो अपने अभीष्ट के सिद्धि होने की आशा कर सकते हैं। किमधिकं सुज्ञेषु। ५

आजकल हम ऐसे देश में हैं जहां पर इस ऋतु के श्रेष्ठ फल अर्थात् आम पके तो दरकिनार कच्चे भी नहीं मिलते। उस ओर इस्की फसल कैसी हुई है। यदि वहां आम फले हों तो एक वार मुम्बई आम अथवा और प्रकार के जो तुम्हारी समझ में अच्छे हों दो सौ तीन सौ रेल द्वारा प्रबन्ध करके भेज दो। परन्तु वहां से १० गद्दर आम रवाने करना जिस्से यहां पर ठीक-ठीक आन पहुंचे। यदि डाक गाड़ी में रख दोगे तो शायद ठीक रहेगा। हमारे पास जयपुर के मुकाम पर चुरु **सेठों के सरपञ्च** का पत्र आया कि आप यहां पधारें। और लिखा है कि सांभर के रेलघर[1] पर रथ, बहल और ऊंट इत्यादि सवारी भेज देवें अभी तो हमने उनको यही १५ उत्तर लिख दिया है कि **एक अच्छी वर्षा होने पर हम अजमेर से कहीं को रवाना हो सकेंगे। क्योंकि उदयपुर मेवाड़ की तरफ भी कुछ हमारे बुलाने का विचार हो रहा है।** यदि उदयपुर को गये तो वह भी आपलोगों को विदित किया जायेगा। शायद इन दोनों स्थानों को जाने में आप से सवारी लेने की आवश्यकता नहीं २० दीखती। जब जरूरत होगी आपको लिखा जायगा। पत्र का उत्तर देना। किमधिकम्।

ज्येष्ठ कृष्ण ११ सं० १९३८। हस्ताक्षर
ता० २३ मई १८८१ ई०। दयानन्द सरस्वती (अजमेर)

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५७८] पत्र २५

ओ३म्

लाला मूलराज जी एम० ए० आनन्दित रहो[2] !

अर्सा तीन महीने के लगभग व्यतीत हुआ कि हमने आगरे के मुकाम से प्रथम ही गोकरुणानिधि की प्रति आपके पास इस अभि-

---

१. रेलघर = रेलवे स्टेशन। २. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। ३०

प्राय से भेज दी है कि इस्का बहुत अच्छा तर्जुमा अंग्रेजी भाषा में कर दीजिये। कि **वह जल्द छपकर अंग्रेज राजपुरुषों वा सामान्यों के अवलोकनार्थ विलायत तक भी भेजी जावें।** जिस्से इस बड़े धर्म्म कार्य्य में फल प्राप्ति होवै। परन्तु मालूम नहीं अब तक उस्के ५ तर्जुमे में क्यों विलम्ब हुआ। शायद आप भूल गये वा कार्य्य की बहुतायत से यह ढील हुई। ऐसे कार्य्य में आलस्य वा सुस्ती होना अच्छा नहीं। सो अब शीघ्र उक्त काम को पूर्ण करके भेज दीजिये। जयपुर में हम डेढ़ मास तक रहे। यथ[ा] शक्य अच्छा संस्कार वहां पर हमने डाल दिया है। ईश्वर चाहे वृद्धि होकर सफल १० होगा। अब ता० ६ मई से हम यहां अजमेर में हैं। सेठ फतेमल जी के बाग की कोठी में ठहरे हैं। प्रति दिन रात को दो घण्टे रोज व्याख्यान हो रहा है। हम सब प्रकार आनन्द में हैं। आप अपनी कुशलता के समाचार भी दीजिये। किमधिकम् बहुज्ञेषु।

ता० २८ मई सन् १८८१ ई०। द० स०
१५ मिती ज्येष्ठ सुदी १ सं० १९३८। (अजमेर)

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५७९] कार्ड

राजा दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो[1]।

आप के लेखानुसार १०० आम काशी से हमारे पास आ गये। हमने बम्बे फर्रुखाबाद से भेजने को लिखा था। आपने काशी से भेजने का परिश्रम किया। आम बहुत अच्छे निकले। यहां पर तो २० आमों का बिल्कुल अभाव है। **जहां तक बने पाठशाला के उद्देश पर कि संस्कृत की उन्नति होनी सो इस पर अच्छे प्रकार ध्यान रहे।** समाज के कार्य्य प्रेमी प्रीती और उत्साह के साथ करते कराते रहें। दस दिन अभी हम यहां रहेंगे। पीछे यहां से चलते समय इत्तिला दी जायगी। मुंशी इन्द्रमणि के मु० का हाल सुन[ा] २५ होगा।

ता० १० जून।[2]

—:o:—

१. यह कार्ड हमारे संग्रह में सुरक्षित है। सन् १९२७ में लाखों पत्रों में से खोजकर म० मामराजजी लाये थे।

३० २. सन् १८८१ (=ज्ये० शु० १३ सं० १९३८) अजमेर से। इस

[पूर्ण संख्या ५८०] यजुर्वेदभाष्य सम्बन्धी टिप्पणी

सर्वत्र त्वष्टा ही है। इसको मन्त्र और पद में त्वष्ट्रा को शोध कर त्वष्टा बना ही दिया। **जिसको हम [ठीक] करते हैं वह तो ठीक होता है, जो दूसरों से कराते हैं वही गड़बड़ होता है।** हमने मन्त्र और पद शोधवाया था सो शुद्ध है, बाकी पण्डितों से शोधयाया था वही अशुद्ध रहा।[1] ५

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५८१] पत्र

राजा दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो[2]।

आपका कार्ड आया। समाचार विदित हुए। जयपुर में कुछ थोड़ा सा संस्कार हो गया है। और अजमेर में छोटा सा आर्यसमाज नियत हुआ है। ईश्वर करे इसकी वृद्धि हो। हम तारीख २३ जून को गुरुवार[3] को यहां से मसूदा को जो अजमेर से १२ वा १३ वा कोस है, जायंगे[4]। क्योंकि वहां के राव साहब ने बड़ी प्रीतिपूर्वक १०

पर हस्ताक्षर नहीं हैं।

१. यह टिप्पणी ऋषि दयानन्द ने यजुर्वेदभाष्य के आठवें अध्याय के १४ वें मन्त्र की प्रेस कापी पृष्ठ १०२ के किनारे (हाशिये) पर अपने हाथ से लिखी है। इस टिप्पणी के लिखने पर भी वेदभाष्य के संस्कृत-पदार्थ में 'त्वष्टा' के स्थान में 'त्वष्ट्रा' तृतीयान्त समझकर 'तनूकर्त्रा' और भाषार्थ में (त्वष्ट्रा) छपता रहा द्र०—वैदिक यन्त्रालय मुद्रित संस्करण १-२-३। उक्त (यजु० ८।१४) मन्त्र का भाष्य यजुर्वेदभाष्य के २६-२७ सम्मिलित अंक में छपा है। इस पर सं० १९३८ आषाढ़ शुक्ल ५ (=१जुलाई १८८१) तिथि अंकित है। अत: यह अंक जून १८८१ में छपा होगा। १५ २०

२. पहले हमने इसे बा० देवेन्द्रनाथ के संग्रह से छापा था। पश्चात् ता० २७ मार्च १९२७ को म० मामराजजी ने मूल पत्र से शुद्ध किया। मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में सुरक्षित है। फर्रुखाबाद का इतिहास नामक ग्रन्थ के पृ० २१६ पर छपा है। २५

३. आषाढ़ वदी १२ सं० १९३८।

४. आषाढ़ बदी १२ बृहस्पतिवार को ४ बजे दिन के अजमेर स्टेशन से रेल में चढ़कर नसीराबाद पहुंचे। वहां से रथ पर चढ़ ९ बजे रात्रि को मसूदे

निमन्त्रण किया है। वहां अधिक से अधिक १५ दिन तक रहेंगे। आम भेजें तो गादर वा कुछ कच्चे से भेजिये। जिस्से यहां पर पकते रहें। क्योंकि पहिले आम जो काशी से आये थे थोड़े काल में अकसर बिगड़ गये थे। सो अब एक ही बार भेज दीजिये। क्योंकि ५ बार-बार तकलीफ होती है। **पाठशाला में संस्कृत का काम ठीक ठीक होना चाहिये**। जैसे मिशन स्कूलों में लड़के अपने अन्य स्वार्थ सिद्धि के लिये बाईविल सुन लेते हैं और कुछ ध्यान नहीं देते, वैसे जो संस्कृत सुन लिया तो क्या लाभ होगा। **इस पाठशाला में मुख्य संस्कृत जो मातृभाषा है उस्को ही वृद्धि देना चाहिये। वरन** १० **फारसी का होना कुछ अवश्य नहीं। केवल संस्कृत और राजभाषा अंगरेजी दो ही का पठन-पाठन होना अवश्य है**। सो आधे-आधे समय दोनों जारी रहें। और दोनों की परीक्षा भी माहवार बड़ी सावधानी और दृढ़ नियम के साथ हुआ करे। और दोनों ही की अपेक्षा से कक्षा वा नम्बर की वृद्धि विद्यार्थियों की हुआ करे। १५ और हमको सदैव परीक्षा पत्र भेजा करो। विशेष कर संस्कृत के विद्यार्थियों के माहवार पाठन का व्यौरा और किस कक्षा में कौन-कौन पुस्तकें पढ़ाई जाती हैं, कितनी-कितनी हुई, यह सब सूचना दिया करो। किमधिकम् विज्ञेषु। विशेष फिर आप को लिखेंगे।

मिति आषाढ़ वदी ६ सम्वत् १९३८,
२० ता० १७ जून १८८१ ई०। दयानन्द सरस्वती
(अजमेर)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५८२] जैन मत के सम्बन्ध में प्रश्न और समीक्षा[1]

१—मुख पर कपड़ा बांधने के विषय में

---

२५ जा विराजे। देखो, देशहितैषी, अजमेर, खण्ड १, अङ्क २, ज्येष्ठ संवत् १९३९।

१. ये प्रश्न और उत्तर आदि पं० लेखराम जीवन चरित हिन्दी सं० पृष्ठ ७३१-७३२ तक छपे हैं। पं० लेखराम कृत जीवन चरित के अनुसार ऋ० द० ने ये प्रश्न और उन की समीक्षा १३ जुलाई १८८१ को पं० छगन-

जैन मतान्तर्गत तुम लोग ढूंढिये, जो मुख पर पट्टी बांधना अच्छा जानते हो, यह तुम्हारी बात विद्या और प्रत्यक्षादि प्रमाणों की रीति से सिद्ध नहीं है। इससे जो तुम ऐसा मानते हो कि मुख की वायु से जीव मरते हैं तो भी ठीक नहीं क्योंकि जीव अजर-अमर हैं और तुम भी ऐसा ही मानते होगे। जो तुम कहो कि जीव तो नहीं मरता परन्तु उसको पीड़ा अर्थात् दुःख देवें तो हम पाप के भागी होते हैं; **तो भी सर्वथा** ठीक नहीं क्योंकि ऐसा किए बिना किसी का निर्वाह नहीं हो सकता। इसमें जो तुम कहते हो कि जहां तक बन सके वहां तक जीवों की रक्षा करनी चाहिये; कारण, सर्व वायु आदि पदार्थ जीवों से भरे हैं इसलिए हम लोग मुख पर कपड़ा बांधते हैं कि मुख से उष्ण वायु निकलने से बहुत से जीवों को दुःख और बांधने से थोड़े जीवों को कष्ट पहुंचता है; तो यह कहना आप लोगों का अयुक्त है; क्योंकि कपड़ा बांधने से जीवों को बहुत दुःख पहुंचता है। कारण यह है कि मुख पर कपड़ा बांधने से गर्मी रहने से उष्णता अधिक होती है जैसे किसी मकान का द्वार बन्द हो और पर्दा डाला जाय तो उस में गर्मी अधिक होती है और खुला रखने से कम होती है। इससे विदित होता है कि मुख पर कपड़ा बांधने से जीवों को अधिक पीड़ा होती है इसलिये जो कोई मुख पर कपड़ा बाँधते हैं वह जीवों को अधिक पीड़ा पहुंचाने से अधिक पापी होते हैं। जो नहीं बांधते वह उन बांधने वालों से अच्छे हैं। किन्तु जब तुम मुख पर कपड़ा बांधते हो मुखद्वारा वायु रुककर नाक के छिद्र से वेग से बाहर निकलती है वह,जीवों के लिये अधिक दुःखदायी होती है। जैसे मुख से कोई अग्नि फूंके और कोई नल से तो नल से वायु चारों ओर से रुक अधिक बलवान् हो अग्नि सी लगती है। इसी प्रकार नाक की वायु जीवों को अधिक पीड़ा पहुंचाती है, इससे तुम हिंसक हो। जो तुम कहो कि हम नाक और मुख पर एक कपड़ा बाधेंगे तो पूर्वोक्त रीति से मुख और नासिका की गर्मी बढ़कर दुगनी हिंसा होगी। इससे मुख और नासिका पर कपड़ा बांधना कदापि योग्य नहीं। दूसरे कपड़ा बांधने

लाल आदि के हाथ सिद्धकरण साधु के पास भेजे गये। द्र०—हिन्दी सं० पृष्ठ ७३० की अन्तिम पंक्तियां।

से बोला भी ठीक-ठीक नहीं जाता। निरनुनासिक शब्दों को सानुनासिक कर देना दोष है। दुर्गन्ध भी अधिक बढ़ता है क्योंकि शरीर के भीतर दुर्गन्ध है। शरीर से जितना वायु निकलता है वह दुर्गन्ध युक्त ही है। जब वह रोका जाये तो अधिक दुर्गन्ध बढ़ता
५ है जैसा कि बन्द जाजरूर (शौचालय)। इस प्रकार मुखादि प्रक्षालन न करने और मुख पर कपड़ा बांधने से अधिक दुर्गन्ध होकर अधिक रोग उत्पन्न करता है जैसा कि मेले आदि में। और न्यून दुर्गन्ध विशेष रोग नहीं करता; यह बात प्रत्यक्ष है। इससे यह सिद्ध हुआ कि अधिक दुर्गन्ध बढ़ाने वाला अधिक अपराधी होता
१० है। जैसा कि आप लोग दन्तधावन और स्नानादि कम करने से दुर्गन्ध बढ़ाते हो, जिससे रोगोत्पत्ति कर बुद्धि और पुरुषार्थ को नष्ट करके धर्मानुष्ठान के बाधक होते हो। जैसे जाजरूर (शौचालय) के शुद्ध करने वालों की दुर्गन्ध के संग से न्यून बुद्धि होती है वैसे आप लोगों की क्यों नहीं होती होगी! जब दुर्गन्धयुक्त पुरुषों
१५ की बुद्धि अति मन्द होती है तो उस के संगियों की क्यों न होती होगी!

२. उष्ण जल पीने के विषय में—

जो तुम लोग कच्चा जल पीने आदि में दोष गिनते और उष्ण में नहीं—यह भी तुम को अत्यन्त भ्रम हुआ है क्योंकि ठण्डे के जीव
२० उष्ण जल करने में अधिक दुःख पाते हैं और उनके शरीर जीवित जल में घुल जाते हैं जैसे सौंप का अर्क। सिद्ध हुआ कि उक्त जल के पीने वाले मानो मांस का जल पीते हैं और जो ठंडा जल पान करते हैं वह (इन जीवों को) गर्म जल पीने वालों की अपेक्षा थोड़ा दुःख देते हैं। दूसरे वह जीव जठराग्नि में प्राप्त होकर भी बहुत से
२५ प्राणवायु के साथ बाहर भी निकल जाते हैं। इससे ठंडा जल पीने वाले तुम से बहुत कम जीवों को दुःख देने वाले ठहरते हैं। जो तुम कहो कि न तो हम जल गर्म करते हैं और न हम किसी को अपने लिये जल को उष्ण करने का निर्देश देते हैं, तो भी तुम अपराध से नहीं छूट सकते क्योंकि जो तुम गर्म जल न लेते, न पीते और न उष्ण करने का निर्देश देते तो वे अधिक जल क्यों गर्म
३० करते। जो ऐसा कहो कि पाप करने वालों को दोष लगता है, अन्य को नहीं। यह भी कथन ठीक नहीं हो सकता क्योंकि चोरी

करने वाला तो आप ही चोरी करता है। 'परन्तु बहुतों को चोर बना देते हैं। इसलिये तुम ही अधिक पापी हुए। फिर जल के गर्म करने में अग्नि वैसी शिक्षा देने वाले जलाने और उस जल से भाप ऊपर उड़ाने से भी जीवों को दुःख पहुंचता है। इस कारण यह भी तुम्हारा कथन व्यर्थ हुआ। ५

३. पैसा भर कुण्ड के जल में अनन्त जीव मानने के विषय में—

तुम्हारे मत में ऐसी-ऐसी बहुत-सी बातें अयुक्त हैं जैसे एक छोटे से अर्थात् पैसा भर के कुण्ड में अनन्त जीवों का रहना। इस पर यदि कोई तुमसे प्रश्न करे कि जिसमें जीव रहते हैं उसका अन्त १० है—तो फिर उस में रहने वालों का अन्त क्यों नहीं? फिर तुम से उस के उत्तर में केवल चुप वा हठ के अतिरिक्त और कुछ न बन पड़ेगा।

यह थोड़ा-सा अर्थात् समुद्र में से बिन्दुवत् तुम्हारे मत के सिद्धान्तों में दोष दिखलाया है। जो तुम सन्मुख बैठ कर चर्चा १५ करो तो तुमको और तुम्हारे साथियों को तुम्हारे मत के दोष भली-भांति विदित हो जायें परन्तु जब कोई विद्वान् तुम्हारे सन्मुख तुम्हारे मत के खण्डन-विषय में चर्चा करना चाहे तो भी तुम कभी न चाहोगे क्योंकि जो तुम्हारा मत निर्दोष होता तो दूसरे मतवालों से संवाद करने में कभी न डरते। इसका दृष्टान्त यह है कि तुम २० अपनी पुस्तक को बहुत गुप्त रखते और अपने मतवालों के अतिरिक्त दूसरों को देखने के लिये नहीं देते। तुम्हारी ये बातें ही तुम्हारी सिद्धान्त पुस्तक और तुम्हारे सिद्धान्तों को झूठी कर देती हैं। जिसका चांदी का रुपया है वह सर्राफ और सुनार आदि को दिखाने में क्यों डरेगा! हमारा वेदमत सच्चा है इससे हमको २५ किसी के साथ चर्चा करने में डर नहीं होता। जैसे तुम डर के कारण हठ करते हो कि मुख पर कपड़ा बांधे विना तुमसे हम बात नहीं करते। यह तुम्हारा केवल छल है क्योंकि "नाच न जाने आंगन टेढ़ा।"

(हस्ताक्षर) दयानन्द सरस्वती

—:o:—

१. यहां से आगे जी० च० में पाठ अशुद्ध छपा है। ३०

[पूर्ण संख्या ५८३] सिद्धकरण साधु के उत्तर तथा समीक्षा[1]

[2][सिद्धकरण साधुजी ने तीसरे दिन अर्थात् १५ जुलाई सन् १८८१ को सुजानमल कोठारी के हाथ स्वामी जी के प्रश्नों के निम्नलिखित उतर भेजे---

५ **प्रश्न**--मुह बांधने में क्या धर्म है ? हमको तो पाप प्रतीत होता है इत्यादि ।

उत्तर—जबकि मकान में अग्नि की ज्वाला निकलती है—उस मकान के द्वार में होकर वायु भीतर जाती है तो वायु के जीव सब मर जाते हैं। जब बारड़ा (द्वार) बन्द किया जावे तो उस की ओट से वायु के सब जीव १० बच सकते हैं और बाहर भी उस ज्वाला का तेज कपड़े की ओट से ठण्डा होकर जाता है जैसा कि उष्ण जल की भाप। बाहर एक गर्म की हुई चीज की भाप के निकलते समय कपड़े की ओट दो तो फिर ओट से बच-कर भाप बाहर जावेगी, वह फिर वैसी गर्म कभी न रहेगी वा आड़ा हाथ देकर देखो तो पहले जो हाथ देगा उसका जलेगा। वही जल की भाप १५ निकलेगी तो दूसरी ओर जो आजूबाजू हाथ रहेगा कभी वैसा नहीं जल सकता। वह तो प्रत्यक्ष दीख पड़ता है और जीव अजर अमर है परन्तु वायु के जीव का शरीर है। बिना शरीर के जीव नहीं रह सकता। दूसरे -- खुले मुख रहने से प्रत्यक्ष दोष भी है कि उसको सब कोई समझ सकता है क्योंकि जो कोई बड़े मनुष्य के निकट बात करे तो मुंह के पल्ला लगा रहता है २० क्योंकि जिससे थूक न उछले वा अपनी दुर्गन्धता का श्वास उनके पास न पहुंचे तो आपड़ों से (आप सरीखे) बुद्धिमान् होकर यह क्या प्रश्न पूछा आपको भी यह तो विचार चाहिये कि वेद की पुस्तकों को खुले मुंह बांचना

---

१. सिद्धकरण साधु का उत्तर, और उसकी समीक्षा पं० लेखराकृत जी० च० हिन्दी सं० पृष्ठ ७३३-७३६ तक छपी है। यह साधु जी के उत्तर की २५ समीक्षा ऋ० द० ने १६ जुलाई १८८१ को पं० वृद्धिचन्द आदि के हाथ साधु जी के पास भेजी थी। द्र०--वही जीवन चरित, पृष्ठ ७३६। जी० च० में पाठ अशुद्ध छपा है। उसे कहीं कहीं शोधा है।

२. यद्यपि सिद्धकरण साधु का उत्तर ऋषि दयानन्द को भेजे गए पत्रों वाले विभाग में छपना चाहिये था, परन्तु इसके निर्देश के बिना ऋ० द० ३० की समीक्षा स्पष्ट नहीं होती थी। अत: हम इसे यहां भिन्न टाइप में छाप रहे हैं।

क्या पुस्तक के थूकारा वा दुर्गन्ध-श्वासा नहीं पहुंचती होगी ? इसलिए अवश्य आपको उघाड़े (खुलेमुख) रहना उचित नहीं और हम तो साधु हैं, हम निरर्थक जोड़ नहीं करते क्योंकि यह बात पक्षपात कहलाती है, धर्म के अतिरिक्त साधु को कुछ प्रयोजन नहीं। कोई हमारे निकट आवे और सुनना चाहे तो सुने। जाने आने का कुछ प्रयोजन नहीं। हां, यह पक्की देखी ५ कि कुछ धर्म की बात मानेंगे तो जा भी सकते हैं। (हस्ताक्षर) सिद्धकरण ।]

उत्तर की समीक्षा—जबकि मकान में अग्नि की ज्वाला निकलती है इत्यादि। यह तुम्हारा मुख की पट्टी बांधने का उत्तर अविद्यारूप है क्योंकि बाहर का वायु ही सब पदार्थों का जीवनहेतु १० है। विना इसके संयोग के कोई भी प्राणी नहीं बच सकता और उस के सम्बन्ध के विना अग्नि भी नहीं जल सकती। जैसे किसी प्राणी वा जलती अग्नि को बाहर की वायु से वियुक्त करें तो वह उसी समय मर जाता है और दीपकादि अग्नि भी बुझ जाता है क्योंकि इसके जलाने आदि का कारण बाहर का वायु है। न मानो तो १५ बन्द कर देख लो। इसलिये यह तुम्हारा अविद्यारूपी उत्तर सिद्ध होता है। यद्यपि ऐसी अन्यथा बातों पर लिखना व्यर्थ है क्योंकि जो किसी से हो ही नहीं सकता। देखो जो मकान के द्वार और छिद्र बिल्कुल बन्द किये जायें तो अग्नि कभी न जलेगी और एक ओर से ओट किया जाये तो दूसरी ओर से जहां मार्ग पाता है वहां २० से अतिवेग से चलकर वही वायु के जीवों से उसका सम्बन्ध होता है। और कपड़े की ओट से भी वह कभी ठंडा नहीं हो सकता किन्तु वह एक ओर से रुक कर दूसरी ओर से गर्म हो जाता है ज्वाला की जितनी गर्मी है। जब तक बाहर की वायु से सम्बन्ध और संघात छूट एक-एक परमाणु पृथक्-पृथक् होकर न जल जाये २५ तब तक अग्नि ठंडा कैसे हो सकता है और सर्वत्र वायु में विद्युत् रूप अग्नि भी (कि जहां वायु के शरीर वाले जीव हैं) व्याप्त हो रहा है फिर वायुस्थ जीव क्यों नहीं मर जाते ? जब एक ओर कपड़े आदि से आड़ा किया जाये तो दूसरी ओर गर्म वायु अधिक इकट्ठा हो फैलने और टकराने से शीघ्र ठंडा नहीं होता किन्तु जो ३० चारों ओर से खुला रहे तो शीघ्र ठंडा हो जाता है जैसे कि मैदान की अग्नि। जब अग्नि की ओर आड़ा हाथ दिया जाये तो हाथ की

आड़ से दूसरी ओर गर्मी फैलेगी। आड़े हाथ करने से गर्मी कुछ भी कम नहीं हो सकती, इससे यह अविद्वानों की बात है। देखो जो सूर्य्य की ओर हाथ करे तो क्या सूर्य्य की गर्मी घट जाती है और क्या जिस बर्तन में जल गरम किया जाता है उसका मुख
५ खुला रखने से अधिक गरम और आधा वा तीन भाग बन्द करने से अर्थात् आधे वा चौथे भाग से भाप अधिक और जोर से निकल कर बाहर की वायु में नहीं फैलती और जो उसका मुख सर्वथा बन्द किया जाये तो क्या बर्तन टूट फूट और उड़ न जायेगा? क्या जिसने अग्नि की ज्वाला के सामने आड़ की तो उसकी ओर
१० गर्मी कम होने से दूसरी ओर अधिक गर्मी नहीं होती। क्या हाथ के आड़े किये हाथ से अग्नि के दूसरी ओर जिस किसी के हाथ और कोई वस्तु हो तो वह अधिक तप्त नहीं होती और जब चारों ओर से आड़ कर अग्नि को रोका जावे तो गोलाकार होकर ऊपर को क्यों न चढ़ेगा और भाप के दूसरी ओर हाथ जैसा कि इधर का
१५ जलता है वैसा उधर का न जलेगा और हाथ की आड़ में गर्मी इसलिये अधिक नहा लगती कि वह अगली बगल होकर ऊपर उड़ जाती है। देखो! तुम्हारी यहां अत्यन्त भूल है क्योंकि जो वायु के शरीर वाले जीव गर्म वायु में मर जाते तो वैशाख और ज्येष्ठ मास में जबकि वायु अत्यन्त तप्त हो लू चलता है तब क्या सब
२० जीव मर जाते हैं और गर्म वायु के जीव जबकि पौष मास में अति शीत पड़ता है तब क्या मर जाते हैं? इससे यह बात सृष्टिक्रम से विरुद्ध होने से मिथ्या ही है; क्योंकि जो ऐसा होता तो परमेश्वर इस सृष्टि में अग्नि और सूर्य्यादि को क्यों रचता? इससे जो तुम सत्यासत्य बातों का निश्चय करना चाहो तो वेदादि सत्यशास्त्र
२५ पढ़ो और सुनो जिससे यथार्थ ज्ञान पाके धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूपी फल को प्राप्त हो सको। जो ऐसा न करके अपने मत के ग्रन्थों के विश्वास में रहोगे तो यह उत्तम मनुष्यजन्म व्यर्थ ही नष्ट करोगे।

अजर-अमर मरणशील कैसे हो सकता है?—यह बड़े आश्चर्य
३० की बात है कि जीवों को अजर-अमर मान कर फिर उनका मरण भी मानते हो। जो तुम खुला मुख रखने में प्रत्यक्ष दोष लिखते हो तो प्रतीत होता है कि आप प्रत्यक्ष के लक्षणादि विद्या को ही नहीं

जानते। इसी से किसी बड़े मनुष्यादि से बातें करने में पल्ला लगाना अच्छा समझते हो। जो ऐसा है तो फिर वैसा क्यों नहीं करते। छोटे मनुष्य के सन्मुख हर समय मुख बांधे रहते हो। क्या बड़े मनुष्य का थूक छोटे मनुष्य के साथ लग जाना अच्छा समझते हो? क्या बड़े के मुख में कस्तूरी घुली होती है, छोटे के नहीं? ५
यदि बड़े छोटों का विचार है तो अपने चेलों के सन्मुख क्यों बांधे रहते हो? क्योंकि जब किसी बड़े मनुष्य से बोला करो तब बांध लिया करो। देखो इस बात को तुम नहीं जानते। बड़े मनुष्यों से बात करते समय पल्ला लगाने से यह प्रयोजन है कि सभा में कभी गुप्त वार्ता करनी पड़ती है, यदि मुख खुला रखा जावे अर्थात् १०
कपड़ा न लगावें तो अन्य मनुष्य जो निकट बैठे हों अवश्य सुन लें। जहां कोई तीसरा मनुष्य नहीं होता वहां बातें करने में पल्ला नहीं लगाते और क्या पल्ला लगाने से दुर्गन्ध रुक सकता है? इसमें इतना ही प्रयोजन है कि जो वायु को रोक के न बातें करें तो उस के फैलने के साथ ही शब्द भी फैल जाये और कान में वायु लगने १५
से ठीक-ठीक सुना भी न जाये जैसा कि वायु के वेग से चलने में ठीक-ठीक नहीं सुना जाता। देखो! कैसे अन्धेर की बात है, क्या दुर्गंन्ध को कान ग्रहण कर सकता है? नहीं, किन्तु सुगन्ध-दुर्गन्ध का ग्रहण नासिका ही से होता है। इस बात का आपने प्रयोजन नहीं समझा है जैसे गान विद्या न जानने वाला ध्रुपद को समझ २०
नहीं सकता क्योंकि जो-जो विद्या की बातें हैं उनको विद्वान् ही समझ सकता है, अविद्वान् नहीं। **हम शब्द, अर्थ और उनके सम्बन्ध को वेद समझते हैं; कागज स्याही को नहीं।** और कागज स्याही को, जड़ होने से, सुगन्ध-दुर्गन्ध का ज्ञान वा सम्बन्ध नहीं होता। क्या जो तुम्हारे जैनी लोगों के ग्रन्थ वा पुस्तकों के कागज २५
वा लेखादि हैं, उनको बनाने वालों ने, मुख बाँधकर बनाया और लिखा होगा? हम खुले मुख से वेदों का पाठ करना अत्युत्तम समझते हैं क्योंकि मुख बांधने से स्पष्ट यथार्थ उच्चारण नहीं होता जैसा कि तुम्हारा सब अक्षरों का नासिका से अशुद्धोच्चारण होता है। इसका उत्तर हमने पहले ही लिख दिया था कि मुख बांध कर ३०

अनुनासिक को सदैव सानुनासिक बोलना शुद्ध नहीं परन्तु इसके समझने को तो विद्या चाहिये।

और जो आप साधु बनते हो तो बताओ साधु के क्या लक्षण हैं? और आप स्वार्थी हो वा परमार्थी। जो स्वार्थ की इच्छा नहीं
५ है तो "निरर्थक हम नहीं बोलते" ऐसा क्यों कहते हो? और जो स्वार्थी हो तो साधु क्यों बनते हो? जो आपको पक्षपात नहीं होता तो मुख पर पट्टी बांधने का झूठा यह आग्रह क्यों करते कि बिना मुख पर पट्टी बांधने के हम नहीं बोलते? यदि ऐसा नियम था तो प्रथम ही प्रथम (जंगल में भ्रमण करते समय) हमसे क्यों बोले
१० थे कि आपका क्या नाम है? इत्यादि खुले मुख बोले थे। और अन्य जनों से भी बातें क्यों किया करते हो? और भोजन के समय (स्वप्रयोजन के लिये) क्यों मुख खोलते हो? क्या तुम अपने शरीर-पोषण, भोजन, छादन, मलविसर्गादि कर्म मौन के अतिरिक्त नहीं समझते होगे। यह बात मिथ्या है क्योंकि जब हम सुनना चाहते थे
१५ तब तो तुम सुनाने को खड़े भी न हुए और जो तुम कहीं आते-जाते नहीं तो यहां कहां से आ गये? क्या एक ही स्थान पर शिला के समान स्थिर रहते हो? भला जिसका रुपया चांदी का है उसको उसके कच्चेपन की क्या आशंका हो सकती है? क्या सबके सामने दिखलाने से वह रुपया ताम्र का भी हो जाता है? क्या तुम वहीं
२० जाते हो जहां तुम्हारी बातें बिना समझे-बूझे मान लेवें? हां ठीक है तुम तो उन्हीं गोबर-गणेशों को सुना सकते हो जो प्रसन्नता से "सत्यार्थ" और "प्रमाण" शब्दों को सुनते ही हल्ला करके तुमको संतुष्ट किया करें, तुम चाहे सत्य कहो वा असत्य; मान ही लें; जैसे दिल्ली की मिठाई। न पूछें, न शङ्का करें, न झूठ का खंडन
२५ करें। ठीक समझ लिया जैसे तुम वैसे तुम्हारे सिद्धान्त हैं—मानो बालकों को खेल! जो मुख की पट्टी का उत्तर तुम नहीं दे सकते तो छोटे से कुण्ड में अनन्त जीवों के होने आदि का तो उत्तर देना। तुमने तो क्या, किन्तु तुम्हारे तीर्थंकरों ने भी विद्या की इन बातों को नहीं समझा था। जो समझते होते तो ऐसी असंभव बातें
३० क्यों लिख जाते? सत्य है जबसे तुम लोगों ने वेदविरोधी होकर वेदोक्त सत्यमत को छोड़ के कपोल-कल्पित असत्य मत को ग्रहण किया है तब ही से तुम लोग विद्यारूप प्रकाश से पृथक् होकर

अविद्यारूप अंधकार में प्रविष्ट हो गये हो। इसी से ईश्वर, जीव और पृथिवी आदि तत्त्वों को यथावत् नहीं जान सकते हो।

आओ ! अब भी क्यों झूठा पक्षपात करते हो ? वेदोक्त सत्य मत का स्वीकार क्यों नहीं करते और मुख पर पट्टी बांधने आदि विद्याविरुद्ध कपोलकल्पित बातों को क्यों नहीं छोड़ते और अन्यथा ५ आग्रह करते जाते हो। सत्य है जो तुम लोगों के आत्माओं में वेद विद्या का थोड़ा भी प्रकाश होता तो ऐसी निर्मूल झूठी बातों के लिखने में लेखनी कभी न उठाते और जो तुम्हारे सिद्धान्त सत्य होते तो चर्चा करने में झूठे हीले-बहाने क्यों पकड़ते और ऐसे अशुद्ध लेख का व्यर्थ परिश्रम क्यों करते ? यदि अब भी सच्चे हो १० तो सन्मुख आकर थोड़े काल में सत्यासत्य का यथार्थ निश्चय क्यों नहीं कर लेते क्योंकि जो वाद-प्रतिवाद से बात सिद्ध होती है वही मानने योग्य है। जिस किसी ने मत-मतान्तर वालों से पक्ष-प्रतिपक्ष पूर्वक वादानुवाद नहीं किया वह सत्यासत्य को ठीक-ठीक कभी नहीं जान सकता। इसीलिये तुम भी ऐसा क्यों नहीं करते ? १५ परन्तु क्या करो; नाच न आवे आंगन टेढ़ा !

(हस्ताक्षर) दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५८४] पत्र

ओ३म्

बाबू छेदीलाल जी आनन्दित रहो। २०

जो कागजात हमने आगरे में बहुत पुरुष जो कि हिसाब के जानने वालों की सम्मति से निश्चित किया है। "वे[1] उड़दू में तो वहां आपके पास है। और जो उनका नकल नागरी हमारे पास थी," वह सब आपके पास भेजते हैं।[2] देख विचार ठीक कर जितने उस पर बाकी निकलें हुक्म लिखिये। उस फैसले में जो-जो २५ "उसने" ख्यायानत के अपराध किये हैं, वे भी लिख दीजिये। १—एक स्वामीजी से विश्वासघात करना। २—दूसरा हिसाब

१. इस पत्र में जो वाक्य वा शब्द " "(इनवर्टिड)कामों के संकेतित हैं, वे सब ऋषि दयानन्द के स्वहस्तलिखित है।

२. ये कागजात अगली पूर्ण संख्या ५८५ पर छापे जा रहे हैं। ३०

जैसा मैनेजर को रखना चाहिये वैसा न रखना। ३—तीसरा छापेखाने के स्वामी की आज्ञा के विना चोरी से अन्य के पुस्तकादि छाप के उसके लाभ का गमन कर जाना। ४—हिसाब देने में झूठे छल "कर" के "अन्यथा" व्यवहार करना। ५—हिसाब
५ "न" देने के लिये" झूठे हीले "किया" करना। ६—हिसाब देने के विना छापेखाने से चले जाना। ७—छापेखाने से जाते समय अपनी २० गठड़ियों को मास्टर शादीराम को दिखलाये विना "लेकर" चले जाना। इत्यादि जो-जो हमने इन कागजों पर लिखा है उस को विचारिये। ये सब कागजात बखतावर के रजस्टर
१० आदि से जांच के लिखे हैं। और इसकी नकल उड़दू में भी आगरे के कागजों में थी। उसको आप लोगों ने क्यों न देखके क्यों न फैसला कर दिया होता। अब न मुझ से और न बखतावरसिंह से पूछने की अपेक्षा करनी चाहिये। क्योंकि बख० तो ऐसा ही चाहता है कि यह मामला ऐसे ही घसड़ पचड़ हो के रह जाय।
१५ इन बखतावर के कागजातों को देखने से निश्चित होता है कि ८०००) रुपयों से कम गमन और हानि बख० ने नहीं की है। आगे जैसा आप लोगों के ध्यान में आवे वैसा कीजिये। मैं यह आप लोगों से कहता हूं कि इस मामले में जैसा आप करेंगे वैसा ही मुझको स्वीकार होगा। जो यह हिसाब लिखा है उस से कुछ
२० कम डिगरी करनी चाहिये, अधिक नहीं। क्योंकि सत्य व्यवस्था होनी चाहिये। जो बख० सिंह के कर्म्म देखे जायं तो जितना उस पर दण्ड करें उतना ही थोड़ा है। परन्तु मुझ को आशा है कि आप लोग सत्य ही न्याय करेंगे। "अब जो हम ने जांच परताल कर उस के कागजात से बाकी रुपैये उससे लेने जिस-जिस बाब[त]
२५ में जितने जितने रु० निश्चित किये नीचे लिखते हैं।।"

१०६०।) "ये रु० वे हैं कि" जो मासिक हिसाब हमारे पास भेजता था। और बाद इसके शादीराम ने जो मास-मास में खर्च किया उन दोनों के मिलाने से जितने उस ने अधिक खर्च किये हैं।

३० ६९७१।।। ≡) ये रुपये "वे हैं कि" जितने फर्मे मास्टर शादीराम ने अर्थात् किसी माह में १४ किसी में १५ और किसी में १६ छपवाये और उस बखतावर "सिंह" ने ७ फर्मों से

अधिक किसी माह में नहीं छपवाये और काम सरकारी आदमियों से रात दिन लेता था। चोरी से दूसरों के पुस्तक छपवाता था जैसे कि ला रिपोर्ट, उस के दाम अन्य पुस्तकों के गिने हैं।

३००) ये रुपये "वे हैं कि जो कि उसने" टैप आदि के जो कि छापेखाने में थे और कम सौंपे। शीशा सर्कारी, फौंडरी, टैप और ढालने वाले भी सर्कारी थे। और कई एक चीजें वह ले गया। उनका तो पता ही नहीं। तो भी ऊपर लिखे रुपये निकलते हैं।　　५

१४७—) "ये" रुपये "वे हैं कि" जो उसे सन्ध्यादि पुस्तकं सौंपी थीं और जितनी उसने दीं "जितनी का खर्च रजष्टर में उस ने लिखा है उस से जो" बाकी "रहे उन के दाम इतने" निकलते हैं।　　१०

३५३≡) "ये" रुपये "वे हैं कि जो" भूमिका के "पुस्तक" उसे सौंपी थीं उस के जमा खर्च से "वाकी निकलते" हैं।　　१५

४४२—) "ये" रुपये "वे हैं कि जो" ऋग्वेद के १२८६ अं-"क उस" को दिये "थे उससे कम दिये अर्थात् जितने उसने रज[ष्ट]र में खर्च में लिखे हैं उस से बाकी के हैं।" और

४६३।।।≡) "ये" रुपये "वे हैं जो कि" यजुर्वेद के १४३७ अंकों के जमा खर्च देखने से उसी पर बाकी निकलते हैं।　　२०

सब मिलाकर—

८६६८।।।≡) रुपये होते हैं।

ये सब रुपये उसी के हाथ के कागजादों से उसी पर निकलते हैं। वे कागज आपके पास "भी" हैं। और जो उसकी नकल हमारे पास नागरी में थी वह हम भेजते हैं। इसको भी आप लोग देख लीजिये। और इस की जांच पड़ताल उन्हीं रजस्टरादि से जो आपके पास हैं कर लीजिये। और उस के मासिक का रजस्टर अंग्रेजी में है। उसकी नकल भी फारसी में करवा के उस में रखी थी। और सब महीनों की चिट्ठियात भी माहवारी नम्बरवार हमने आगरे में कराके उन्हीं कागजों में रक्खी हैं। उसमें भी इस ने 'जो' जमा नहीं किया है वह हमने नहीं छांटा। "उन चिट्ठियों को　　२५ ३०

आप लोग वहां जांच कर लीजिये[1]। "इस से उसकी बहुत सी चोरियाँ पकड़ी जायंगी। आगे जो आपने थिओसोफीष्ट भेजा नोटिस देखने के लिये, सो देखा। क्या किया जाय जिनके लिये उपकार करते हैं, वे ही उलटे विरोध ही करते जाते हैं। अच्छा जो ५ दुष्ट दुष्टता को नहीं छोड़ते तो श्रेष्ठ श्रेष्ठता को क्यों छोड़ें। ये का [ग] जात आप के पास इस लिये भेजे हैं कि लाला रामशरण-दास जी नगरी नहीं पढ़े हैं। इनको आप देख के उन को समझा दीजिये। और सब से मेरा आशीर्वा[द] कहियेगा। यहां वर्षा बहुत हुई है। प्रतिदिन यहां राजमहल में व्याख्यान होते हैं। राजा आदि १० सब लोग अति प्रीति से सुनते हैं। अब जैसे बने वैसे यह मामला शीघ्र कर दीजिये। किमधिकेन व्यवहारज्ञेषु।

मि० श्रा० व० ६ मंगलवार[2]। [दयानन्द सरस्वती]

(मसूदा) जिले अजमेर।[3]

इसका उत्तर शीघ्र भेजियेगा।"[4]

—:o:—

१५ [पूर्ण संख्या ५८५] [हिसाब के कागजात]

हिसाब कलकत्ते का जो बखतावरसिंह ने किया[5]।

---

१. यहां से लेकर अन्त तक श्री स्वामी जी के अपने हाथ का लिखा हुआ है। इस पत्र को अनेक स्थलों पर श्री स्वा० जी महाराज ने स्वहस्त से शोधा है। कई स्थानों पर नयी पंक्तियां भी लिखी है। " " उलटे २० (इनवर्टिड) कामों के अन्तर्गत सब लेख श्री स्वामी जी के हाथ का लिखा हुआ है।

२. १९ जुलाई १८८१। यद्यपि पत्र पर संवत् नहीं लिखा गया, तथापि प्रकरण से और मसूदा से लिखे जाने से इसी तिथि सं० १९३८ का है।

३. यह पत्र उन उन नम्बर वाली चिट्ठियों तथा हिसाब आदि के २५ लम्बे पत्रों सहित भेजा गया था। अक्टूबर सन् १९२६ में म० मामराज जी मेरठ से लाये थे। मूलपत्र आदि हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

४. इस पत्र से सम्बद्ध हिसाब का पूर्ण विवरण आगे पूर्ण संख्या ५८५ पर देखें।

५. लाला छेदीलाल जी को लिखे पूर्व पूर्ण संख्या ५८४ पर मुद्रित पत्र

७५) हवाले जादोनाथ पेशगी वास्ते खरीद करने १ मन डबल ग्रेट। १ मन २८ सेर डबल पीका नागरी। २॥ मन सीसा। १५ सेर क्वाईटेशन। साढ़े बारह सेर क्वाडरेस्त। ता० ३० दि० स० ७९।

---

५०) रसीद तारीख ३० दिस० १८७९।　　५

८००=)।॥ रसीद नम्बरी ६०२ पार्कर को० ता० ३ जनवरी १८८० कलकत्ता बाबत खरीद

रायल प्रेस	१	६००)
,, प्रोच सेंट	२	४॥)दर २।)
उमद[ा]बारीक कम्बल	१	३।)
कम्बल मोटा	१	४॥)
रायल रूलर फ्रेम	१	६।॥)
जाब	१	२॥)
रब कटर	१	
	१३२	६६।)
	,,	१८१=)।॥
	,,	२३।)
खर्च बंधवाई		२०)

१०　१५

---

७०) हवाले बिहारीलाल दत्त पेशगी बाबत खरी[द] ३ मन ग्रेट प्राईमर दर ४०) मन। ता० १ जन० १८८०　　२०

२९०।)। बाबत कीमत कागज दो गट्ठे २०×२४ पौंड कीमत २९२≡), डिलेवरी चार्ज १) कुल २९३≡) कमीशन २॥=)।॥ बाकी २९०।)। ता० ३ जन० १८८०

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण १]
"यह भी रसीदें कलकत्ते की हैं। इन से भी प्रेस की चीजों　　२५

के साथ इस हिसाब का सम्बन्ध है। इस पर भी स्वामीजी ने स्वहस्त से छः टिप्पण दिये हैं।

का भाव आगम और खर्च विदित हो जायगा।"

२९।) बावत रूलर मोल्ड केशसेल जान डि० कं० ता० ५ जन० १८८० ।

५०।।।=)४ रसीद जा० डि० कं० ३ जन० १८८०

५ २ ब्रास रूलर ६)
१ तथा २।।)।।
१ तथा वार्निश २।।)।।
१० टिन काली स्याही नं० ३ १७।।) दर १।।।
१० तथा ५) दर ।।)
१० ५ इङ्गलिश बोडर नं० ५० ७।) ४ दर १।≡)
बोर्डर नं० ६३ ६।=)।। दर १।।-)४
१ चेक नं० ११६५ १।।≡)।।
बन्धवाई आदि २)

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण २]

१५ **"यह लेख इसलिये है कि प्रेस की हर एक चीज का भाव विदित हो सके। इससे कितनी चीजें छापेखाने में उसने सोंपी और कितनी उड़ा ले गया।"**

१४१।-) रसीद पोस्ट आफिस नं० १६८ ता० ९ अक्टूबर १८८० अधरचन्द्र टाइप फौंडर

---

२० १२५) टाइप फौंडर जान डिकिशन से दिलाए १० सि० १८८०

१६३१।।।≡)४ मीजान

जो बखतावरसिंह ने कलकत्ते भेजा प्रथम स्वामी जी से लेकर १५०—०
दूसरे तथा १४८

---

२५ [इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण ३]

"इतने रुपयों को मुझ से लेके कलकत्ते में खर्च किया बख० ने। इस से अधिक जितने कल[1] कलकत्ते में भेजे वे अभयराम

---

१. 'कल' व्यर्थ लिखा गया है।

चुन्नीलाल की दुकान से भेजे थे। उसने इन रूपैयों में से बहुत सी सामग्री अपनी छापेखाने की है।"

रुपया जो कि बखतावरसिंह ने कलकत्ते भेजा।

२९ जनवरी १८८० को स्वामी जी से लेकर	३२७)
२ फरवरी १८८० को तथा	१५००)
माघ व० ४ सं० १९३६ तथा	२९३)
	२१२०)
अप्रैल मास में उसके रजिस्टर के अनुसार	४०)
मई	१००)
जून	२००)
अगस्त	२५५।)
सितं०	५४६।-)
	११३७॥-)
कुल मीजान	३२५७॥-)

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण ४]

"यह वह हिसाब है कि उसने कलकत्ते में कितने रुपैये भेजे। इन से क्या-क्या चीजें आईं। इनमें कि[तनी] वर्तमान हैं। कितनी खर्च हुई। और कितनी उसने छापेखाने सोंपी। जो सोंपी वे कितने दाम की हैं। कौन चीज खर्च हुई। और कितनी उसने गमन की। इस का निश्चय आप लोग करें उस से कि जो उस ने मास्तर शादीराम को उस ने जाती बखत सोंपी। उन का मूल्य का निश्चय रसीदों से कीजिये कि कौन चीज कितने मूल्य की है।"

वहां पर ३२५७॥-) भेजा और रसीदें १९९१॥≡) ४ की मौजूद हैं और ६७७॥।=)॥। के बिल हैं;

बिलों की रसीदें नहीं। रसीदों के बिल नहीं।

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण ५]

"इस से यह ठीक आपको विदि[त] हो जायगा कि उसने कल-

कत्ते के हिसाब में कितने रुपैये उड़ाये लिये हैं और बिल के रुपैयों की पहुंच की रसीद न होने और रसीदों के बिल न होने से जालसाजी उस की विदित हो जायगी। और उस [की] चिट्ठियों से निश्चित है कि कलकते का हिसाब चूकता कर दिया, तो बिल का ५ होना और रसीदों का न होना सिवाय चोरी के क्या कह सकते हैं।"

बिल जो कि बखतावरसिंह ने किताब में चसपां किया और उनकी रसीद नहीं है॥

---

१३२) बिल जान डिकि० कम्पनी तारीख २६ मई १८८०

१० १ बंडल कागज २० पौंड कीमती १३२॥-) डिलेवरी चार्ज ॥) कुल १३३।-)कमीशन १।-) बाकी १३२)

---

१३२) बिल जा० डि० कं० ता० ६ अग० १८८०

१ बंडल कागज कीमत १३२॥-) डिलेवरी चार्ज ॥) १३३।-)। कमीशन १।-) १३२)

---

१५ १२६॥≡)॥। बिल जा० कं० २६ जन० १८८०

१ बंडल कागज १० रिम वजनी ४८० पौंड कीमत १२७॥) मिनहा बाबत डिसकोंट १।)। बाकी१२६≡)॥। जमा किया डिलेवरी चार्ज १॥) कुल १२६॥≡)॥।

[यहां १२७।≡)॥। होना चाहिये। सं०]

२० २५३।≡) बिल जा० डि० कं० ६ सित० १८८०, २ बंडल २० रिम वजनी ६६० पौंड दर।)। फी पौंड कीमत २५५) डिसकोंट २॥)॥। बाकी २५२।≡)। डि० चार्ज १) कुल २५३।≡)।

३॥) बिल बाबू ब्रजभूषणदास कम्पनी २॥) कीमत संहिता यजुः

२५ १) कीमत सर्वदर्शनसंग्रह १८ अक्ट० १८८०।

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण ६]

"ये रसीदें (दों) का तर्जमा है। इन रसीदों में से कई एक रसीदें फाड़ भी ली हैं। और कितनी एक रसीदें चिपकाई भी नहीं। हिसाब कोई न कर सके इस लिये यह काम उसने किया।"

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५८६] **पत्र-सारांश**

[मैडम ब्लेवेस्तकी, बम्बई]

हम उपदेश से तुम्हारी यथाशक्ति सहायता करते रहेंगे और तुम्हारी सोसाइटी के सभासद [नहीं][1] हैं।[2]

-:o:-

[पूर्ण संख्या ५८७] **पत्रांश** ५

भाई जवाहरसिंह [मन्त्री आर्यसमाज, लाहौर]।

लेडी ब्लेवेस्टकी के पत्र[3] का उत्तर हमने दे दिया है। उसमें विशेष बात यही है कि हम उपदेश से तुम्हारी यथाशक्ति सहायता करते रहेंगे। और तुम्हारी सोसायटी के सभासद [नहीं][1] हैं।[4]

२२ जुलाई [१८]८१[5] १०

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५८८] **पत्रांश**

[पं० मुन्नालाल मन्त्री आ० स० अजमेर]

१८ ता० अगस्त[6] को रायपुर [ब्यावर के निकट] जायेंगे[7]

—:o:—

---

१. यह पत्र सारांश ऋ० द० के पूर्ण संख्या ५८७ के पत्र में निर्दिष्ट है। १५

२. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवन चरित पृ० ८४० (हिन्दी सं० पृष्ठ ८७६) में उद्धृत है।

३. यह पत्र पूर्व पूर्ण संख्या ५७३ में निर्दिष्ट पत्र से भिन्न प्रतीत होता है। हमें न मैडम ब्लेवेस्टकी का पत्र मिला और न उस के उत्तर में दिया गया ऋ० द० का पत्र। २०

४. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवन चरित में यहां 'नहीं' पद छूटा हुआ प्रतीत होता है। ऋ० द० के पूर्व पूर्ण संख्या ५०० के पत्र की पृष्ठ ५५५ पं० २९-३०, पृष्ठ ५५६, पं० १९-२१, पृष्ठ ५५७, पं० १-२ पंक्तियां द्रष्टव्य हैं।

५. श्रावण कृष्ण १२, शुक्र, सं० १९३८। २५

६. भाद्र कृष्ण ९, बृहस्पति, सं० १९३८।

७. मुन्नालाल को यह पत्र १७, अगस्त १८८१ को [भाद्र कृ० ८, बुध] मिला। संभवत: १५ या १६ [भाद्र कृ० ५ या ७ सं० १९ ३८] को मसूदा

[पूर्ण संख्या ५८९] पारसल-सूचना

[सेवकलाल कृष्णदास, बम्बई]

(पुस्तकें भेजी गई)[1]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५९०] पत्र

५ मेरठ आर्यसमाज मन्त्री आनन्दीलाल जी आनन्दित रहो[2]।

पत्र तुम्हारा आया समाचार विदित हुए। बड़े शोक की बात है कि बखतावरसिंह के मामला के कागजातों की सफाई कब करोगे। जो करना हो तो जैसा तुम लोगों को मालूम हो वैसा शीघ्र कर डालो। उस कागजात[3] के बिना छापेखाने में भी बहुत १० हर्कत हैं।

छः सात महीने तो हो चुके फिर कब इस झगडे को निपटाओगे। और जो के रूपसिंह डाक्तर सिमले ने रुपये भेजे थे रजिष्टर में जमा कर लिये हैं वा नहीं। थियोसोफिष्ट में जो नोटिस चतुर्भुज[4] का छपा है। सो बुरा है। हम उस का प्रत्युत्तर छपवाना १५ नहीं चाहते, क्योंकि वह अयोग्य और अविद्वान् है। परन्तु जो तुम्हारी समझ में आवे सो तुम उसका उत्तर छपवा दो। पण्डित भीमसेन वहां आर्यसमाज में रखने योग्य नहीं है॥ सबसे हमारा नमस्ते कह देना। आजकल हम जिला अजमेर नयानगर[5] अजमेरी

से लिखा गया होगा। देशहितैषी के रजिस्टर से लिया गया।

२० १. इस पारसल की सूचना सेवकलाल कृष्णदास के १६ सितम्बर १८८१ के पत्र में मिलती है। सेवकलाल कृष्णदास ने जैनियों के कुछ ग्रन्थ भेजे थे, जिन्हें देखकर अनुपयोगी जानकर इस पारसल द्वारा लौटाया था। यह पारसल डाक द्वारा भेजा गया अथवा रेल से, यह अज्ञात है। सेवकलाल कृष्णदास का पत्र तीसरे भाग में देखें।

२५ २. म० मामराज जी ने २३ जुलाई, सन् १९४५ को ला० रामशरणदास रईस मेरठ वालों के पुराने सहस्रों पत्रों में से उन के पौत्र ला० परमात्माशरण तथा ला० श्यामलाल जी प्रधान आर्यसमाज के साथ खोजा। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. कागजात के लिए पूर्ण सं० ५८५ (पृष्ठ ६२०—६३४) देखें।

३० ४. इस व्यक्ति का हमें पता नहीं लगा कहां का है।

५. नयानगर, नयाशहर=ब्यावर।

दरवाजे तार बङ्गले में निवास करते हैं ॥

आश्विन वदी ४ रविवार[1]।

[दयानन्द सरस्वती]

और थियोसोफिष्ट में जो हमारे वेदभाष्य का नोटिस छपता है उस के अन्त में शादीराम का नाम लिखा जाता है। सो अब दयाराम मैनेजर प्रयाग लिखना चाहिए। सो तुम मुम्बई थियो-सोफिष्ट को लिख देना। ५

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५९१] पारसल-सूचना

[पं० दयाराम, प्रयाग]

पुस्तकों का पारसल।[2] १०

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५९२] पारसल-सूचना

[पं० दयाराम, प्रयाग]

१—ऋग्वेदभाष्य के पृष्ठ।

२—यजुर्वेदभाष्य के पृष्ठ।

३—अन्वयार्थ की प्रेसकापी।[3] १५

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५९३] पत्र

प्रशंसा-पत्र

श्रीमन् श्रेष्ठोपमायोग्य आर्यसमाजस्थ प्रधान और मन्त्री आदि

---

१. संवत् १९३८। ११ सितम्बर १८८१ नयानगर (ब्यावर) से मेरठ को भेजा गया। २०

२. इसकी सूचना आश्विन शु० ६ सं० १९३८(=२९ नवम्बर १८८१) के प० भीमसेन शर्मा के पत्र से मिलती है। पं० शादीराम वैदिक यन्त्रालय प्रयाग के प्रबन्धकर्ता थे। अतः यह पारसल उन्हीं के नाम भेजा गया होगा। पं० भीमसेन भी वहीं संशोधक थे। उनके नाम भी भेजा जा सकता है। पं० भीमसेन शर्मा का पत्र तीसरे भाग में देखें। २५

३. इस की सूचना भी भीमसेन शर्मा के आश्विन शु० ६, सं० १९३८ के पत्र में है। भीमसेन शर्मा का पत्र तीसरे भाग में देखें।

सभासद आनन्दित रहो—

विदित हो कि श्रीयुत द्विवेदी श्रीमाली राज मसुदा के मुख मन्त्री श्रीमान् छगनलाल जी को यह पत्र लिखके दिया जाता है इसलिये कि उक्त जन जिस किसी आर्यसमाज में उपस्थित होवें,
५ तो इनका सत्कार स्वात्मवत् प्रिय बन्धुवत् करना उचित है, क्योंकि ये भी वेदोक्त धर्म्माचारी और आर्य्यसमाज अजमेर के सभासद हैं और इन को [हम] संवत् ६६२३ के वर्ष से जानते हैं। यह सज्जन पुरुष हैं, उस समय अजमेर में एक साहूकार के यहां इनके पिताजी मुनीम थे, तथा अपने घर और अन्यत्र भी प्रतिष्ठित
१० थे। और ये आचार विचार तथा शास्त्र-विषयों में भी समझते हैं, चाल-चलन भी इनका श्रेष्ठ है, और परोपकारी धार्मिक विश्वसनीय हैं, हमने बहुत प्रजास्थ पुरुषों से परोक्ष में पूछा तो उनने कहा कि ऐसा कामदार हमने आगे कभी न देखा था। सब प्रजा इनसे प्रसन्न है। इससे हमने जाना यह इस समय भी धार्मिक जन हैं।

१५ मि० आ० शु० ११[1] सोमवार संवत् १९३८।

दयानन्द सरस्वती मसुदा मुहर-मुहर-मुहर

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५९४] पत्रांश

[समाचार पत्र देशहितैषी अर्थात् पं० मुन्नालाल मन्त्री आर्यसमाज अजमेर को][2]

२० बनेड़े[3] के ग्राम भीलवाड़े में हमारी डाक भेजा करो।

१५ अक्टूबर १८८१[4]

—:o:—

---

१. आषाढ़ शु० ११ को बृहस्पतिवार है, सोमवार नहीं है। आश्विन शु० १०, ११ सम्मिलित है, उस दिन सोमवार है। ३ अक्टूबर १८८१।

२. देशहितैषी के रजिस्टर से। इस के पश्चात् का मुन्नालाल जी का
२५ पत्र न० (२९) दो पैसे वाला लिफाफा "श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज नमस्ते। आपके पास यह थियोसोफिस्ट भेजता हूं। अपने दिवाली का उत्सव अब के पत्र द्वारा निवेदन करूंगा" उसी रजिस्टर से, मुन्नालाल २४-१०-८१।

३. बनेड़े अर्थात् बनेड़ा राज्य।

३० ४. कार्तिक कृ० ८, शनि, सं० १९३८।

[पूर्ण संख्या ५९५]　　पत्रांश

कविराज श्यामलदास[1]।

हमने चित्तौड़गढ़ २७ अक्टूबर[2] को पहुंचना है। आप स्थानादि का प्रबन्ध कर रखना, ताकि कष्ट न हो।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५९६]　　पत्र　　५

[दयाराम प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय]

[3]जो कोई नोट वा विज्ञापन शास्त्रार्थ खण्डन-मण्डन और धर्माधर्म विषयों का ज्ञापक हो वह हम को दिखलाये विना कभी न छापना चाहिये। यह[4] मेरे पास भेजा सो बहुत अच्छा किया। जो दिखलाये विना छाप देते तो हम को इस के समाधान में बहुत श्रम १० करना पड़ता। भीमसेन जो व्याकरणादि शास्त्रों को पढ़ा है उतना ही उसका पाण्डित्य है, अन्यत्र यह बालक है। इसको इस बात की खबर भी नहीं है कि इस लेख से क्या क्या कहां विरोध होकर क्या क्या विपरीत परिणाम होंगे। इसलिये यह नोट जैसा शोध[5] के भेजा है, वैसा ही छपवाना। किमधिकलेखेन बुद्धिमद्वर्येषु[6]। १५

---

१. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवन चरित पृ० ५५२ (हिन्दी सं० पृष्ठ ५९२) पर उद्धृत। २०—२५ अक्तूबर १८८१ के मध्य किसी दिन यह लिखा गया होगा।

२. कार्तिक शु० ५, गुरु०, सं० १९३८।

३. यह लेख स्वामीजी महाराज ने स्त्रैणताद्धित के 'जीविकार्थे चापण्ये' २० (५।३।९९) सूत्र की टिप्पणी के प्रूफ पर लिखा था मुंशी राम जी सम्पा० ऋ० द० का पत्र-व्यवहार पृष्ठ ५३।

४. 'यह' पद से निर्दिष्ट स्त्रैणताद्धित का वह नोट है, जो भीमसेन ने लिखा था और दयाराम मैनेजर वैदिक यन्त्रालय ने स्वामी जी को देखने को भेजा था, भीमसेन के द्वारा लिखे गए नोट को हम ने स्वामी जी के शोधे २५ हुए नोट के नीचे छापा है।

५. यह शोधा हुआ नोट आगे पूर्ण संख्या ५९७ पर छापा है।

६. इस पर कोई तिथि नहीं है। स्त्रैणताद्धित का लेखन मार्गशीर्ष शुक्ल ६ सं० १९३८ (२६ नवम्बर १८८१) को समाप्त हुआ था और मुद्रण तीन दिन बाद ही समाप्त हो गया था(देखो ऋ०द० के ग्रन्थों का इतिहास, पृष्ठ ३०

[पूर्ण संख्या ५९७]   [टिप्पणी[१]]

*जीविका शब्द का अर्थ मुख्य करके जीवनोपाय करना है।

१६३, १६४)। अत यह लेख मार्गशीर्ष के प्रारम्भ में लिखा गया होगा। [यु० मी०]

५ * यह स्त्रैणताद्धित के "**जीविकार्थे चापण्ये**" (अष्टा० ५।३।९९) सूत्र का श्री स्वामीजी महाराज द्वारा संशोधित नोट (टिप्पणी) है। स्त्रैण-ताद्धित में यह टिप्पणी कुछ रूपान्तर से छपी है, वह रूपान्तर किसने किया है, यह अज्ञात है। देखो मुंशीराम जी सम्पा० ऋ० द० का पत्र व्यवहार पृष्ठ ५४ की टिप्पणी।

१० पं० भीमसेन ने जो टिप्पणी लिखकर छपवानी चाही थी और जिसे प्रबन्धकर्ता वैदिक यन्त्रालय ने स्वामी जी महाराज के पास देखने को भेजी थी, वह इस प्रकार थी—

"जीविका शब्द का अर्थ मुख्य करके किसी प्रकार का उपकार होना है। प्रतिकृति, प्रतिच्छाया, प्रतिबिम्ब, प्रतिरूपक, प्रतिछन्दक, प्रतिमा
१५ इत्यादि शब्द पर्यायवाची हैं। और अन्य देशीय भाषाओं में (तश्वीर) (फोटोग्राफ) भी कहते हैं। प्रयोजन यह है कि जिन स्त्री पुत्र आदि सम्बंधी वा मित्रादिकों के साथ अत्यन्त प्रेम होता है, उनके वियोग में उनके प्रतिबिम्ब देखते और गुण कर्म तथा उपकार आदि का स्मरण करते हुए अपने चित्त में सन्तोष करते हैं और उस प्रकरण में यह बात विचारना
२० चाहिये कि संसार में जितने दृश्य पदार्थ हैं, उन सबके प्रतिबिम्ब होते हैं। बहुतेरे घोड़े हाथी आदि जीवों की अतिदर्शनीय मृन्मय आकृति बना बना कर बेंचते हैं वे जीविकार्थ पण्य होते हैं और बहुतेरे द्वीप द्वीपान्तर देश देशान्तरों तथा स्थान विशेष की जो अतिदर्शनीय हैं उन के प्रतिबिम्ब मकान आदि में यन्त्रित करा रखते हैं। उनके यथार्थ स्वरूप देखने में धनादि
२५ पदार्थों का अति गौरव होता है इस लिए उनके प्रतिबिम्बों को देख समझ के प्रसन्नता हो जाती है। और उन प्रतिबिम्बों में यथार्थ स्वरूपों का सा व्यवहार भी करते हैं। और इस प्रतिबिम्ब विद्या से संसार के बहुत कार्य सिद्ध होते हैं परन्तु परमार्थ के साथ इस विषय का कुछ सम्बन्ध नहीं। इस सूत्र में बहुतेरे वैयाकरणों का यह अभिप्राय है कि जीविका के लिए जो पदार्थ
३० हो और वह बेचा ना जावे तो उस अर्थ में कन् प्रत्यय का लुप् हो जावे। और (लुम्मनुष्ये) इस सूत्र से मनुष्य शब्द का भी सम्बन्ध यहां नहीं करते।

सो ब्रह्मा आदि देवताओं की प्रतिमा जो कि मन्दिरों में बना बना कर रखते हैं। उन से जीविका(धन का आगमन)तो हैं परन्तु वे प्रतिमा बेचने के लिये नहीं हैं,इसलिये उन्हीं का ग्रहण होना चाहिये। और इस सूत्र में महाभाष्यकार ने भी लिखा है कि जो धनार्थी लोग शिव आदि की प्रतिमा बना कर बेचते हैं वहां लुप् नहीं पावेगा। क्योंकि सूत्रकार ने अपण्य शब्द पढ़ा है कि जो बेचने के लिये न हो। अस्तु वहां लुप् न हो (शिवक:) ऐसा ही प्रयोग रहे। परन्तु जो वर्तमान काल में पूजा के लिये ही हैं वहां तो लुप् हो ही जायगा। इस महाभाष्य से भी उन्हीं देवताओं की प्रतिमा सिद्ध करते हैं। इस विषय में हम लोगों का भी यह अभिप्राय नहीं है कि ब्रह्मा आदि देवता नहीं हुए और उनकी प्रतिमा रखने और देखने में अधर्म्म होता है। किन्तु उन प्रतिमाओं की यथार्थ स्वरूप के समान सत्कार पूजा धूप दीप आदि करते हैं और पूजा तथा दर्शनादि से परमार्थ सिद्धि और मुक्ति समझते हैं सो ठीक नहीं, क्योंकि श्रुति और स्मृति दोनों से यह विपरीत है कि जो विद्या और आत्मज्ञान के बिना मुक्ति हो सके। हां, उन प्रतिमाओं को देख के उन लोगों के गुण कर्मों का स्मरण करके आप भी वैसे ही गुण कर्मों को धारण करें कि जिस से उत्तम कहावें। देवता शब्द भी जहां चेतन व्यक्तियों के साथ सम्बद्ध होता है वहां मनुष्यों की ही संज्ञा होती है और वैदिक शब्द सब यौगिक ही हैं देवता शब्द भी वैदिक है। इस सूत्र में मनुष्य शब्द की अनुवृत्ति जयादित्य आदि लोगों ने नहीं की। वे लोग देवता शब्द को मनुष्य से व्यतिरिक्त समझते हैं परन्तु सामान्य ग्रहण होने से जो जो प्रतिमा जीविका के लिए हो और बेची न जावे तो उस उस सब के अभिधेय में प्रत्यय का लुप् होना चाहिये–हस्तिकान् दर्शयति। कोई मनुष्य प्रतिबिम्बों को दिखाता फिरता अपनी जीविका करता है। बहुतेरे लोग प्रतिबिम्बों को दिखा कर ही जीविका करते हैं। वहां भी लुप् होना चाहिये। यह दोष जयादित्य आदि लोगों के अभिप्राय में मनुष्य शब्द की अनुवृत्ति न करने से आता है। और पूजा का अर्थ भी आदर सत्कार ही होता है सो चेतन के होने चाहियें। फिर महाभाष्यकार ने जो लिखा है कि 'जो इस समय पूजा के लिये हैं वहां लुप् होगा इसका भी यही अभिप्राय है कि जो मनुष्य की यथार्थ प्रतिकृति पूजा के लिये हैं उनसे प्रत्यय करने में तो लुप् हो जावेगा। क्योंकि अच्छे पुरुषों की जो प्रतिकृति हैं उनके बेचने में सज्जन लोग बुराई समझते हैं। उन प्रिय जनों की प्रतिमाओं को रखते और उन को देखकर संतुष्ट होते हैं। राम

इस प्रकरण में सिवाय प्रतिकृति और मनुष्य के दूसरे की अनुवृत्ति नहीं आती। यहां प्रयोजन यह है कि जिन स्त्री पुत्र आदि सम्बन्धी वा मित्रादिकों के साथ अत्यन्त प्रेम होता है उनके वियोग में उन की प्रतिकृति देखते और गुण कर्म तथा उपकार आदि का स्मरण ५ करते हुए अपने चित्त में सन्तोष करते हैं। परन्तु इस प्रकरण में यह बात विचारना चाहिये कि संसार में जितने दृश्य पदार्थ हैं उन सब की प्रतिकृति होती है वा नहीं। बहुतेरे घोड़ हाथी आदि जीवों की अतिदर्शनीय मृन्मयादि की प्रतिकृतियां बना बना कर बेचते हैं वे जीविकार्थ पण्य होते हैं। और बहुतेरे द्वीप द्वीपान्तर १० देश देशान्तरों में पति स्त्री पुत्रादि की प्रतिकृतियां रखते हैं परन्तु परमार्थ के साथ इस विषय का कुछ सम्बन्ध नहीं। इस सूत्र से बहुतेरे वैयाकरणों का यह अभिप्राय है कि जीविका के लिये जो पदार्थ हो और वह बेचा न जावे तो उस अर्थ में कन् प्रत्यय का लुप् हो जावे। और **लुम्मनुष्ये** (अष्टा० ५।३।९८) इस सूत्र से १५ मनुष्य शब्द का भी सम्बन्ध न करके ब्रह्मा आदि देवताओं की मूर्तियां जो कि मन्दिरों में बना बना कर रखते हैं। उनसे जीविका (धन का आगमन) तो है परन्तु वे प्रतिमा बेचने के लिये नहीं हैं, इसलिये उन्हीं का ग्रहण होना चाहिये। और इस सूत्र में महा-भाष्यकार ने भी लिखा है कि जो धनार्थी लोग शिव आदि की २० प्रतिमा बनाकर बेचते हैं वहां लुप् नहीं पावेगा। क्योंकि सूत्रकार ने अपण्य शब्द पढ़ा है कि जो बेचने के लिये न हो। सो ठीक नहीं, क्योंकि यहां प्रतिकृति और मनुष्य शब्द ही की अनुवृत्ति है अन्य की नहीं। देवता शब्द भी जहां चेतन व्यक्तियों के साथ सम्बद्ध होता है वहां मनुष्यों की संज्ञा होती है और वैदिक शब्द सब

---

२५ कृष्ण आदि भी इस संसार में एक अपूर्व पुरुष हुए हैं उन की भी यथार्थ स्वरूप की बोधक प्रतिमा कोई पुरुष रखे और उन के गुण कर्मों का स्मरण करके अपने आचरण सुधारे तो कोई बुराई नहीं, परन्तु उन प्रतिमाओं से परमार्थ सिद्धि समझना ही अच्छा नहीं है। पाणिनि आदि ऋषि लोगों का अभिप्राय भी वेदों से विरुद्ध कभी नहीं हो सकता, इस प्रकरण को पक्षपात ३० छोड़ वेदानूकूल सब लोग विचारें ॥"

यह टिप्पणी म० मुंशीराम जी द्वारा सम्पादित पत्र व्यवहार में पृष्ठ ५०—५३ तक छपी है।

यौगिक ही हैं देवता शब्द भी वैदिक है। जो इस सूत्र में मनुष्य शब्द की अनुवृत्ति जयादित्य आदि लोगों ने नहीं की, यह उनका भ्रम है, क्योंकि वे लोग देवता शब्द को मनुष्य से व्यतिरिक्तार्थ-वाची समझते हैं परन्तु सामान्य ग्रहण होने से जो जो प्रतिकृति जीविका के लिये हो और बेची न जावे तो उस उस सब के अभि- ५ धेय में कन् का लुप् होना चाहिये। और जहां कोई मनुष्य प्रति-कृतियों को दिखा वा बेच के अपनी जीविका करता है वहां लुप् न होना चाहिये। और पूजा का अर्थ भी आदर सत्कार ही होता है सो चेतन के होने चाहिये। फिर महाभाष्यकार ने जो लिखा है कि 'जो इस समय पूजा के लिये है वहां लुप् होगा' इस का भी यही १० अभिप्राय है कि जो मनुष्य की प्रतिकृति पूजा सत्कार के लिये है उससे प्रत्यय करने में तो लुप् हो जावेगा। क्योंकि अच्छे पुरुषों की जो प्रतिकृति है उसके बेचने में सज्जन लोग बुराई समझते हैं। **विश्वे देवा स आगत शृणुतेमं हवम्**। यह यजुर्वेद[1] का प्रमाण है। **विद्वांसो हि देवाः**। यह शतपथ ब्राह्मण[2] का वचन है। **मातृदेवो** १५ **भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव, अतिथिदेवो भव**, यह तैत्ति-रीय आरण्यक[3] का वाक्य है। इत्यादि सब प्रमाण वचनों से विद्वद् व्यक्ति आदि का ग्रहण देव शब्द से होता है। इसलिये पाणिनि आदि ऋषि लोगों का अभिप्राय भी वेदों से विरुद्ध कभी न होना चाहिये। इस प्रकरण को पक्षपात छोड़ वेदानुकूलता से सब लोग २० विचारें[4]।

—:o:—

---

१. यजु० ७।३।। ऋग्वेद २।४१।१३।।

२. शत० ३।७।३।१०।। ३. तै. आ. ७।१।।

४. यह ऋषि द्वारा संशोधित टिप्पणी म० मुंशीराम जी द्वारा सम्पादित पत्र व्यवहार में पृष्ठ ५४—५६ तक छपी है। श्री स्वामी जी २५ के पूर्ण संख्या ५९६ के पत्र में 'जैसा शोधके भेजा है वैसा ही छपवाना' (पृष्ठ ६३९) ऐसा लिखने पर भी स्त्रैणताद्धित में ऋषि दयानन्द के शोधे हुए पाठ के अनुसार पूर्णतया नहीं छपा। छपते समय किसने परिवर्तन किया, यह अज्ञात है।

[पूर्ण संख्या ५९८] पत्र-सारांश

[पं० दयाराम, प्रयाग]

ऋग्वेद और यजुर्वेद की भाषा कितनी हुई।[1]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५९९] कार्ड

५ ता० २ नवम्बर सन् १८८१[2]

चित्तौड़ राज मेवाड़

[महाशय रूपसिंह जी के नाम[3]]।

महाशय श्रीमत् महाराज स्वामी दयानन्द सरस्वती जी और स्वामी आत्मानन्द सरस्वती जी यहां सुशोभित हैं। और आप का १० गुजरांवाले का कार्ड पहुंचा। यह आपको कुशल समाचार का पत्र भेजता हूं और आप भी अपने आनन्द मंगल का समाचार सदा भेजते रहना, जिससे आनन्द होय।

रामानन्द ब्रह्मचारी[4]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६००] पत्र

१५ ११ नवम्बर सन् ८१ ई०[5]

गढ़ चित्तौड़ राज मेवाड़

लाला मूलराज जी आनन्दित रहो।[6]

पत्र आपका पहुंचा। समाचार विदित हुआ। परन्तु यहां हमारे पास कोई इंगलिश का विद्वान् नहीं है। इस वास्ते यहां २० भाषान्तर होना असम्भव है और जब आप इतना भी पुरुषार्थ नहीं

---

१. इस पत्र-सारांश को ३ नवम्बर १८८१ के भीमसेन शर्मा के पत्र से बनाया है। भीमसेन का पत्र तीसरे भाग में देखें।

२. कार्तिक शुक्ल ११, बुध, सं १९३८।

३. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। बा० रूपसिंह जी ने सन् २५ १९१६-१७ में यह पत्र हमें स्वयं लाहौर में दिया था।

४. रामानन्द ब्रह्मचारी श्री स्वामी जी का लेखक था। उसने उनकी ओर से ही यह तथा अगले कई पत्र अपने हस्ताक्षरों से लिखे हैं।

५. मार्गशीर्ष कृष्ण ५, शुक्र, १९३८।

६. पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

कर सकते तब आर्यसमाज की उन्नति किस प्रकार होगी। हम चाहते थे कि किसी प्रकार आप ही इस गोकरुणानिधि पुस्तक को अंग्रेजी में करें तो बहुत ठीक होता और शीघ्र ही हो जाता, परन्तु अभी तक आप को अवकाश नहीं मिला है। किन्तु देश उन्नति के वास्ते थोड़ा अवकाश निकालना चाहिये। जब आप लोग कुछ नहीं करेंगे तब हम अकेले क्या कर सकेंगे। जो किसी प्रकार आप से तरजमा न हो सके तो हमारे पास भेज दो। जब हम मुंबई जावेंगे वहां इंगलिश के विद्वान् मिलेंगे तब अंगरेजी में करा लेवेंगे जैसा बना होय हां भेज दो। "**अब हमारा विचार मुंबई में जाने का है, क्योंकि वहां के समाज ने १५०) रुपये भी रेल के खर्च के लिये जबर्दस्ती भेज दिये हैं।**" यहां से जब गर्वनर जनरल साहिब दर्बार करके चले जावेंगे तब हम भी मुम्बई की तरफ रवाना होवेंगे। "जब वहां आने का समय आवेगा तभी आना होगा। क्योंकि काम बड़ा और काम के करने वाले और समय भी थोड़ा। आप लोगों को चाहिये कि जिस जिस देश में आप लोग हैं वहां वहां का काम सम्भाल लेवें, तभी उन्नति का बाग बढ़ेगा।

मि० मार्ग० ब० ६ शनि सं० १९३८[1]"

दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६०१,६०२]　　　पत्र-सारांश

[पं० दयाराम, प्रयाग][2]

१—भीमसेन के विषय में।

---

१. १२ नवम्बर सन् १८८१। ११ नवम्बर को पत्र लेखक ने लिखा। उस दिन समाप्त नहीं किया गया। १२ नवम्बर को स्वामी जी ने अपने हाथ से अन्तिम पंक्तियां लिख कर पत्र समाप्त किया। " " कामों के अन्दर का लेख श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से लिखा है।

२. पत्रों की पहुंच का और नीचे लिखे विषयों का निर्देश १८ दिसम्बर १८८१ के भीमसेन और पं० सुन्दरलाल के पत्रों के आधार पर संकलित किया है। विषय १-४ तक भीमसेन के पत्र में है। ५-६ का निर्देश पं० सुन्दरलाल के पत्र में है। दोनों के पत्र साथ ही लिखे हुए है। इन्हें तीसरे भाग में देखें।

२ स्त्रैणताद्धित छपे १॥ मास हो गया, भेजा क्यों नहीं ?
३—आख्यातिक कितना छपा ?
४ कृदन्त को आख्यातिक के अन्त में छापना।
५—पुस्तकें इन्दौर भेजो।
५ ६—महाराणा सज्जनसिंह द्वारा चित्तौड़ में किये गये सत्कार का वर्णन।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६०३] **पत्र**

९ दिसम्बर सन् ८१ ई०[1]
चित्तौड़गढ़ राज मेवाड़।

१० लाला मूलराज जी आनन्दित रहो।[2]

आपका पत्र आया। समाचार विदित हुआ। आपने जो गो-करुणानिधि पुस्तक को इंगलिश में भाषान्तर कर देना स्वीकार किया उससे बहुत आनन्द हुआ। क्योंकि अंग्रेजी भाषा होने से अन्य देश वालों को भी लाभ पहुंचेगा। यह तो सच है कि स्वकृत १५ से परकृत निर्बल होता है। तथापि विदेशी भी बहुधा ऐसे हैं कि जैसी इंगलिश भाषा जानते वैसी अन्य भाषा नहीं जानते। और यहां के यूरोपियन अस्वीकार करेंगे तो क्या, किन्तु यूरोप देशस्थ जब इस पुस्तक को देखेंगे तो अनुमान है कि उन में से भी कई एक सहायक हों। और आप ने जो स्वजाति विषय में लिखा इस वास्ते २० अपनी स्वजाति का इतिहास जो परम्परा से चला जाता है उसकी थोड़ी सी सूचना लिख भेजें। तब हम अच्छी प्रकार लिख भेजें। और पंजाब में जो हमने थोड़ा सा इतिहास सुना था वह भी विस्मरण हो गया है। इस में विलम्ब न करना चाहिये। पत्र का उत्तर मुकाम इन्दौर राज ह[ो]लकर, बाबू बालाप्रसाद सपरडंट २५ रेलवे पोलिस के नाम से अथवा मुम्बई नल बाजार शबिलदास लल्लु भाई के मकान के पास सेवकलाल कृष्णदास [के] नाम से भेजना[3]।

(दयानन्द सरस्वती)

---

१. पौष कृष्ण ४, सं० १९३८।

२. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३० ३. पत्र पर उर्दू में स्वामी जी आत्मानन्द सरस्वती जी ने भी कुछ लिखा हुआ है।

## [पूर्ण संख्या ६०४]		पत्र

॥ओम्॥

सर्दार रूपसिंह जी आनन्दित रहो[1] ॥

विदित हो कि पत्र आप का सन् १८८१ ई० ६ छः डिसंबर का लिखा हुआ ता० १२ डिसंबर को यहां पहुंचा। पत्रस्थ समाचार विदित हुए। यहां श्री स्वामी जी महाराज की सत्कारपूर्वक श्रीमान्महाराणा उदयपुर जी ने सेवा की। और यहां के दरबार में जितने राजा महाराजा आगे वे सब श्री स्वामी जी महाराज के सत्योपदेश को सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। और एक दिन महाराणा उदयपुर भी आये थे। कोई तीन वा चार घंटे तक स्वामीजी महाराज जी का सत्संग किया और राजधर्म वा पारमार्थिक विषय में जितनी बातें महाराज जी ने उपदेश कीं, वे सब बातें राजा जी के ध्यान में जम गईं। और यह माड़वाड़ वा मेवा[ड़] देश में व्याख्यान को कोई समझता ही नहीं जितने लोग पूर्वपक्षी आये उन सब को स्वामी जी ने यथा तथा उत्तर देकर उन्हों को शङ्का रूपी दुःख सागर से छुड़ा दिया। अब यहां से श्रीस्वामी जी महाराज कल १४ चौदह डिसंबर के मध्याह्नोत्तर के ४ बजे रेल में सवार हो कर १६ दिसम्बर के ८ बजे इन्दौर में उतरेंगे। फिर वहां से मुम्बई को पधारेंगे ॥

(प्रश्न) मांस खाना बुरा वा अच्छा है ?

(उत्तर) मांस खाना बहुत बुरा है और वेदादि सत्यशास्त्रों में कहीं विधान नहीं है। जो संस्कारविधि में लिखा है[2] वह दूसरों का एक देशीय मत दिखाने को लिख दिया है[3] कुछ उस एकदेशी मत होने से मांस खाना सिद्ध नहीं हो सकता। विशेष इस बा[त] को गोकरुणानिधि ग्रन्थ में देख लीजियेगा। उसमें इस बात को प्रश्नोत्तरपूर्वक सिद्ध कर दिया है कि मांस खाना बुरा।

---

१. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. यह संस्कारविधि के प्र० सं० की ओर संकेत है। सं० १९४० में संशोधित द्वि० में यह प्रकरण निकाल लिया है।

३. देखो पूर्णसंख्या १७१ का विज्ञापन।

(प्रश्न दूसरा) मैं अङ्गरेजी पढ़ूं वा संस्कृत ?

(उत्तर) जो कोई योग्य संस्कृत का पढ़ाने वाला मिले तो संस्कृत पढ़ा अवश्य ही चाहिये। **संस्कृत के न पढ़ने का परिणाम तो तुम जानते ही हो कि हजारों ईसाई मुसलमान हो गये।** जो ५ योग्य अध्यापक न मिले तो अङ्गरेजी पढ़ते ही चले जाओ इस में कुछ हर्ज नहीं।

प्रथम मेरा नाम राज वल्लभ था। अब श्री स्वामी जी ने मुझ को नैष्ठिक ब्रह्मचर्य्याश्रम की दीक्षा देकर मेरा नाम रामानन्द ब्रह्मचारी रक्खा है। और आप कुशल पत्र मुम्बई में इस पते पर १० भेजना कि (मुकाम मुम्बई बालकेश्वर पर श्री स्वामी जी के पास)। हम आनन्द में हैं। श्री स्वामी जी की कृपा से व्याकरण जो की स्वामी जी ने बनाई हैं उन में से छः पुस्तक पढ़ली हैं, और सातवीं का आरम्भ होगा ॥

किमधिकलेखेन बुद्धिमद्वर्य्येषु ॥ सम्वत् १९३८ पौष वदी ७ १५ मंगलवार ता० १३ डिसम्बर सन् १८८१ ई० हस्ताक्षर (रामानन्द ब्रह्मचारी)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६०५] **पत्र-सूचना**

सेवकलाल कृष्णदास मन्त्री आ० स० मुम्बई।[1]

छापने योग्य पत्र

२० १३ दिसम्बर १८८१[2]

चितोड़

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६०६] **पत्र**[3]

स्वस्ति-श्रीमदनवद्यगुणगणाऽलंकृतेभ्य आर्य्यराजकुलदिवाकरे-

---

१. इस पत्र के संकेत के लिये सेवकलाल कृष्णदास का १७ दिसम्बर २५ १८८१ का पत्र तीसरे भाग में देखें। २. पौष कृ० ७, सं० १९३८।

३. यह पत्र 'परोपकारी' पत्र (अजमेर) के चैत्र २०३३ मार्च १९७७ के अङ्क के पृष्ठ २५ पर छपा है। परोपकारी के सम्पादक श्री भवानीलाल भारतीय ने इस पत्र की उपलब्धि के विषय में लिखा है— इस पत्र की प्रतिलिपि प्राप्त कराने का श्रेय हमारे मित्र प्रो० महावीरसिंह जी सोलंकी,

भ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमामिहास्ति[1] तत्र भवदीयं नित्यमेधमानं चाशासे। विदित हो कि यह वह पत्र है कि जिसके नीचे श्रीमान् महाशयों के हस्ताक्षर और अपने-अपने राज्य की मुद्रा अर्थात् मोहर होगी इसको सुनहरी कागज में लिखवाना चाहें लिखवा लेवें। मेरी समझ में तो यह इतना ही लेख बहुत है ५ अधिक लिखना न चाहिये। क्योंकि इस लेख में बहुत गुंजास है। और जो इसमें कुछ घटाना बढ़ाना चाहें तो मुझको विदित करके घटावें अथवा बढ़ावें। इस कार्य में जहां तक हो सके वहां तक शीघ्रता होनी चाहिये। जो जो श्रीमान् महाशय इस पर सही करें वे इस रीत से करें कि इतने लाख अथवा इतने करोड़ मनुष्यों की १० ओर से मेरे हस्ताक्षर और मोहर है। और अपने-अपने राज्य में जिन-जिन महाशयों को विदित करना चाहें उनको विदित भी कर देवें कि जो कोई गो-हिंसक उनसे पूछे तब वे गोहत्या के बंध करने में सम्मत और दृढ़ रहें। और जैसी सुगमता शीघ्रता जोधपुर जयपुर, बीकानेर, कोटा, बुन्दी, रतलाम, इन्दौर, ग्वालियर, बड़ौदा १५ आदि राजे महाराजों से हस्ताक्षर मोहर कराने में आपके करने में होगी वैसी किसी से नहीं हो सकेगी। यह महापुण्य का कार्य है इसलिये किसी एक बुद्धिमान् पुरुष को आप शीघ्र नियुक्त कीजिये कि वह जोधपुर-जयपुराधीशों के इस पर हस्ताक्षर मोहर कराके और सबसे दूसरों की सही कराने के लिये राजस्थानों में जाके २० सद्यः सही करा लेवे अर्थात् काश्मीर नेपालाधिपतियों की हो जाये तो अत्युत्तम हो। मुझको दृढ़ निश्चय है कि यह महोपकारक काम श्रीमान् आर्य राजकुल भास्कर ही के करने योग्य है अन्य किसी के नहीं। और इस महापुण्यकीर्ति के योग्य आप से अन्य किसी को मैं अपनी अल्प प्रज्ञा से नहीं समझता हूं। और जो आप महाराजे २५ इन्दौराधिपति आदि को इस कार्य में प्रेरणा करेंगे तो लश्कर[2] और बड़ोदाधिपतियों की सही होने में विलम्ब न होगा। अर्थात्

प्रिन्सिपल गवर्नमेंट कालेज सवाई माधोपुर को है—जिन्होंने यह पत्र (प्रतिलिपि रूप में) मेवाड़ के इतिहासज्ञ पुरोहित देवनाथ जी के संग्रह से प्राप्त किया है। ३०

१. यहां पाठ छूटा प्रतीत होता है—'भूयासुस्तमां शमिहास्ति' पाठ होना चाहिये।　　२. अर्थात् ग्वालियर।

जिसकी प्रेरणा से जिस राजा, महाराजा की सही शीघ्र हो सके उसको श्रीमान् महाशय ही प्रेरणा करेंगे। सही होने के पश्चात् मैं जो-जो महाशय विद्वान् गवर्नर जनरल साहेब बहादुर पारलियामेंट सभा और श्रीमती राजेश्वरी से इस कार्य की सिद्धि कराने में
५ अति निपुण धार्मिकजनों को नियुक्त करना चाहूंगा। उनके नाम आदि सदाचार आपके विदित कर दूंगा। क्योंकि यह बड़ा भारी काम है और जब गवर्नर जनरल साहेब बहादुर के पास काम चलाया जायगा तब मैं वहां उपस्थित रहूंगा और मुंबई में जाके इस कार्य को शीघ्र करने की नीति में बड़े-बड़े बुद्धिमान् और बारि-
१० स्टरों का विचार लिया जायगा। और जब श्रीमान् महाशयों की सही हो जायगी उसके पश्चात् सरकारी राज्य में से भी रईस और प्रजास्थ लाख ६ मनुष्यों की बहुत शीघ्र सही करा ली जायगी परन्तु इसमें सर्वशिरोमणि योग्य प्रशंसा युक्त श्रीमान् ही रहेंगे। अलमति विस्तरेण लेखनाय राजकुलभास्करेषु। **मैं यहां इन्दौर**
१५ **आया उसी दिन से महाराजे इन्दौर के जज श्रीनिवास आदि सज्जनों ने मुझको रख लिया है और महाराजे के विद्यालय में प्रतिदिन संध्या के ६ छः बजे से लेके ८॥ साढ़े आठ बजे तक वक्तृत्व होता है**। सैकड़ों बुद्धिमान् लोग सुनके प्रसन्न होते हैं। अब तीन चार दिन यहां ठहर के मुम्बई को जाना चाहता हूं।

दयानन्द सरस्वती

२० ॥ पौष शुक्ल ५ रविवार सम्वत् १९३८, ता० २५ दिसम्बर सन् १८८१ ई०।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६०७] तार

[महाराजा तुकोजीराव होल्कर, इन्दौर]

२५ अब तो हमारा आना यहां से लौटते समय होगा।[1]

—:०:—

१. यह तार महाराज तुकोजीराव होल्कर के 'अब मैं राजधानी (= इन्दौर) में आ गया हूं। कृपा करके शीघ्र दर्शन दीजिये' तार के उत्तर में बम्बई से दिया गया था। यह लेखरामकृत जीवन चरित हिन्दी सं० पृष्ठ ५९५ पर निर्दिष्ट है। यह तार ऋषि दयानन्द के इन्दौर से बम्बई पहुंचने

[पूर्ण संख्या ६०८]　　पत्र

लाला रामशरणदास जी आनन्दित रहो[1]

विदित हो कि तुम बखतावरसिंह का मामला शीघ्र [तय] कर दो। हमने यहां अच्छे-अच्छे पुरुषों से पूछा। उनों ने यही उत्तर दिया कि जब अकरारनामा में वह हस्त[ाक्ष]र कर चुका है तो अब उसका कुछ नहीं जोर चल सकता। अर्थात् जैसा पंच लोग फैसला करेंगे वैसा ही कचहरी में स्वीकार होगा। और आप भी विचार कर लीजिये। जैसी आप लोगों की राय हो वैसा शीघ्र करना उचित है परन्तु वह एक प्रकार का विघ्न डालता है जिस में कि मामला फैसला न हो। अब उस से कुछ भी न पूछना और जानना। जो आप लोगों की राय में आवे सो फैसला कर देना। सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।

ता० १७ जनवरी सन् १८८२ ई०[2]　　[द०स०]

—:o:—

पूर्ण संख्या ६०९]　　पत्र

(from PANDIT DAYANANDA SARASWATI
to Mr. JOSEPH COOK)
Walkheshwar, Bombay
January 18, 1882.[3]

Sir,—In your public lectures you have affirmed—

(1) That Christianity is of Divine origin.

(2) That it is destined to overspread the earth.

(3) That no other religion is of divine origin.

In reply, I maintain that neither of these propositions is true. If you are prepared to make them good, and to ask the people of Aryavarta to accept your statements without proof,

---

के कुछ समय पश्चात् ही दिया गया होगा। महाराजा तुकोजी राव होल्कर का तार भाग तीन में देखें।

१. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. माघ कृष्ण १३ मंगल, सं० १९३८। अक्टूबर सन् १९२६ में म० मामराजजी मेरठ से लाये थे।

३. माघ कृष्ण १४, बुध, सं० १९३८।

I will be happy to meet you for discussion. I name next Sunday evening at 5-30, at which time I am to lecture at Framji Cowasji Institute. Or, if that should not be convenient to you, then you may name your own time and place
५ in Bombay. As neither of us speaks other's Language, I stipulate that our respective arguments shall be translated to the other, and that a short-hand report of the same shall be signed by us both. The discussion must also be held in the presence of respectable witnesses brought by each party, of
१० whom at least three or four shall sign the report with us; and the whole to be placed in a pamphlet form, so that the public may judge for myselves which religion is most divine.[1]

दयानन्द सरस्वती
i e., D Saraswati

१५ [भाषानुवाद]

पण्डित दयानन्द सरस्वती की ओर से
मिस्टर जॉसेफ कुक साहब के पास

बालकेश्वर बम्बई
जनवरी १८।१८८२[2]

२० **महाशय !**

आपने अपने सर्वसाधारण व्याख्यानों में निश्चयपूर्वक कथन किया है कि
(१) कृश्चिन धर्म ईश्वर-मूलक है।
(२) यह पृथिवी भर में अवश्य ही विस्तृत हो जायगा।
(३) अन्य कोई भी धर्म्म ईश्वर-मूलक नहीं है।

उत्तर में मेरा कथन है कि उक्त प्रतिज्ञाओं में से एक भी ठीक नहीं है।
२५ **यदि आप उक्त प्रतिज्ञाओं को यथार्थ सिद्ध कराना चाहते हैं और आर्यावर्त**

---

१. यह पत्र म० मुंशीराम जी कृत 'पत्र-व्यवहार' पृ० ३००, ३०१ पर छपा है। यह वही पत्र है जो ऋषि के अभिप्रायानुसार कर्नल आल्काट ने लिखा था, परन्तु इस में Most Divine शब्द कर्नल ने अपनी
३० ओर से जोड़ दिया। इसका उल्लेख आगे ऋषि के 'थियोसोफिस्टों की गोलमाल पोलपाल' शीर्षक विज्ञापन (जो आगे छापा जा रहा है) के पैरा ९ में आयेगा।

२. माघ कृष्ण १४, बुध, सं० १९३८।

निवासियों को अपने कथनों को बिना प्रमाण प्रस्तुत किये स्वीकृत कराना नहीं चाहते तो मैं प्रसन्नतापूर्वक आप से शास्त्रार्थ करने के लिए उद्यत रहूंगा। आगामी रविवार सन्ध्या समय साढ़े पांच बजे जब कि मैं फ्रेमजी कावसजी इंस्टिटिउट में व्याख्यान दूंगा। शास्त्रार्थ के लिए नियत करता हूं। यदि उक्त समय आपको सुविधा का न हो तो आप अपनी इच्छानुसार कोई ५ समय तथा बम्बई का कोई स्थान शास्त्रार्थ के लिये नियत करें। क्योंकि हम दोनों में से कोई भी एक दूसरे की भाषा नहीं बोल सकता। अतः मैं निर्धारित करता हूं कि मेरे तर्क आपको आप के तर्क मुझ को अनुवादित कर सुना दिये जांए और हम दोनों के कथन संक्षिप्त लेखबद्ध होकर उन पर हम दोनों के हस्ताक्षर हो जांय। आप की ओर तथा मेरी ओर से प्रति- १० ष्ठित साक्षियों का भी शास्त्रार्थ में विद्यमान रहना आवश्यक है जिन में से तीन वा चार को उक्त संक्षिप्त लेख पर हम लोगों के साथ हस्ताक्षर भी करना पड़ेगा। उक्त शास्त्रार्थ पुस्तकाकार छपकर सर्व साधारण के सन्मुख प्रस्तुत किया जायगा, जिसे देखकर लोग अपने निश्चय कर लेंगे कि कौन सा धर्म श्रेष्ठ ईश्वरोक्त है। १५

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६१०]　　विज्ञापन-सारांश

हम प्रातः काल ८ बजे से सायंकाल के ५ बजे तक किसी से से नहीं मिलेंगे। ५ बजे से रात्रि पर्यन्त मिल सकेंगे।[1]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६११]　　विज्ञापन-सूचना

[पं० दयाराम, काशी] २०

महाराजे उदयपुर का इश्तिहारा।[2]

—:o:—

१. यह विज्ञापन पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ६६० पर उद्धृत है। बम्बई पहुंचने के कितने दिन पीछे यह विज्ञापन दिया गया, यह अज्ञात है, अतः हम इसे स्थूल रूप से स्वामी जी के उक्त पत्र के आगे जोड़ रहे हैं।

२. इस का निर्देश सुन्दरलाल आदि के १ फरवरी १८८२ के पत्र में २५ मिलता है। यह सम्भवतः चित्तौड़ में महाराणा उदयपुर के द्वारा ऋ० द० के किये गये सम्मान के विषय में रहा होगा। द्र० – १८ दिसम्बर १८८१ का सुन्दरलाल का पत्र। ये सभी पत्र तीसरे भाग में यथास्थान देखें।

[पूर्ण संख्या ६१२] पत्र-सारांश

[पं० दयाराम, काशी]

१ – पुस्तकें तथा वेदभाष्य कितने पौण्ड के कागज पर छपता है ?

५ २ – दो वर्ष का पुस्तकों का हिसाब भेजो।[1]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६१३] पत्र

ओ३म्[2]

श्रीयुत मित्रवर आर्यकुलभूषक महाशय बाबू रूपसिंह जी योग्य इतः श्रीयुत परमसिंह परिव्राजकाचार्य्य श्री स्वामी जी का आशी-

१० र्वाद। पश्चात् रामानन्द ब्रह्मचारी का अनेकधा शुभाशीर्वाद विदित हो।

हे मित्रवर आपका कृपा पत्र २७ जनवरी का लिखा हुआ १ पहली फर्वरी को पहुंचा। और जो आप ने ५) रुपये का मनियाडर भेजा वह भी उसी दिवस मिला। हे महाशय आपके कुशलरूपी पत्र

१५ के अवलोकन करते ही ऐसा आह्लाद प्राप्त हुआ कि जिस को लिखने को भी अशक्य हूं।

भो मित्र ! मैं आप से विनय पूर्वक प्रार्थना करता हूं कि आप के निवेदन किये हुए पदार्थ को अति आनन्द पूर्वक स्वीकार किया। परन्तु आपको अप्रिय लगे तो मेरी अयोग्यता समझ कर

२० अपराध क्षमा करना। सुनिये जिस समय नये सहर[3] में आप मुझ को चिट्ठी पत्र के खर्च के वास्ते द्रव्य दे गये थे वह आप का परमार्थ-रूपी भार अभी मेरे पर विराजमान था। फिर बहुत शीघ्र आप ने धर्मरूपी भार निवेदन किया। मैं आपके परमार्थरूपी भार से अति लज्जित होता हूं क्योंकि मुझ से आप का कुछ भी प्रत्यु[प]कार नहीं

२५ हो सकता। अतः मेरी प्रसन्नता तो आप के अभीष्ट सिद्धि की प्राप्ति होने से है। परमात्मा परम दयालु ईश्वर आपकी सदैव

---

१. यह पत्र सारांश हमने १ फरवरी १८८२ के सुन्दरलाल दयाराम आदि के द्वारा लिखे गये पत्र के अनुसार बनाया है। यह पत्र तीसरे भाग में देखें।

३० २. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। ३. अर्थात् ब्यावर में।

धर्मोन्नति विषय में प्रवृत्ति और अधर्म अवनति से निवृत्ति किया करे ॥

अब आप के प्रश्नों का उत्तर श्री स्वामी जी की आज्ञानुसार लिखता हूं । आशा है कि प्रसन्नता पूर्वक आप स्वीकार करेंगे ।

(प्रश्न) दूसरी माता की सेवा करने का अधिकार पुत्र की पहली माता के सदृश है वा नहीं ?　५

(उत्तर) जो विद्यादि शुभ गुणों से युक्त हो और शिक्षापूर्वक पुत्र पर प्रेम रखती हो, उसका अनिष्ट चिन्तन कभी न करती हो तो साक्षात् अपनी माता के समान तन मन धन से [सेवा] सदैव करना योग्य है । जो इस प्रकार वर्त्ताव न वर्त्ते तो इतनी पुत्र को सेवा करना योग्य है कि अन्न वस्त्रादि और अभिवादन से उसको प्रसन्न रखना, अधिक सत्कार करने योग्य नहीं ।।　१०

(प्रश्न) १२ वा १४ वर्ष की युवती कन्याओं से पुरुष विवाह कर लेते हैं उनके साथ पुत्र को किस प्रकार वर्त्ताव वर्त्तना चाहिये और विद्यादि शुभ गुणों की शिक्षा करे वा नहीं ॥　१५

(उत्तर) यह साधारण मनुष्यों से होना अशक्य है क्योंकि स्त्री और पुरुष की परस्पर ऐसी आकर्षणता शक्ति है कि जैसे चुम्बक पत्थर की लोहे के साथ । जिस समय युवती स्त्री और युवा पुरुष की आमने सामने दृष्टि पड़ती है उसी समय मन बिगड़ जाता है । बहुधा इन्द्रियों के वेगाश्रित होके अन्यथा व्यवहार मनुष्य कर बैठते हैं [इसमें] कुछ शङ्का नहीं । इससे सब से होना असम्भव है । हां, जो पूर्ण विद्वान् योगाभ्यासी अर्थात् जिस की इन्द्रिय आत्मा के वस में हो तो वह कर सकता है । स्त्री को शिक्षा करने का अधिकार उसके पति ही को है ।　२०

(प्रश्न) नियोग से उत्पन्न हुए पुत्र उन माता पिताओं के साथ किस प्रकार वर्त्तें ।　२५

(उत्तर) जो स्त्री अपने वास्ते नियोग से पुत्र को उत्पन्न करे वह पुत्र उस स्त्री के मृतक पति का होगा और उस के पदार्थों का दायभागी होगा । जो पुरुष अपने वास्ते नियोग से पुत्र को उत्पन्न करेगा तो वह पुत्र उस पुरुष का होगा और उसी के पदार्थों का दायभागी भी होगा । सेवा करना भी जिसका पुत्र कहावेगा उसी की तन मन धन से करना योग्य है । दोनों की नहीं कर सकता ।　३०

इस प्रकार का निर्णय वेदादि सत्यशास्त्रों में विवेचन किया है। इन प्रश्नों के उत्तर तो सत्यार्थप्रकाश संस्कारविधि में देखने से निवृत्त हो सकते हैं।

मैं बहुत प्रसन्न होता हूं आपका बड़ा भारी यश समझता हूं जो
५ आप प्रश्न भेजते हैं। अब जो मेरे करने योग्य [हो] वह आप कृपा पूर्वक पत्र पर लिख भेजा करें।। किमधिकलेखेन बुद्धिमद्वर्य्येषु ।। आज कल यहां गोरक्षा के विषय में व्याख्यान होते हैं। यहां कोई एक मास पर्यन्त स्वामी जी का निवास रहेगा। फिर जहां को जाने का विचार होगा, पत्र द्वारा मैं आप को विदित कर दूंगा और
१० जो यहां विशेष वार्त्ता आप को लिखने योग्य होगी, वह आप को निवेदन किया करूंगा ।।

शुभम् ता० ३ फरवरी सन् १८८२ ई०[1]

(हस्ताक्षर रामानन्द ब्रह्मचारी)

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६१४] पत्रांश

१५ [समाचार दत्त देशहितैषी अजमेर को[2]]

अमृतलाल[3] को अपनी समाज का सभासद कर लो।

४ फरवरी १८८२ मुम्बई[4] दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६१५] पत्राशय

[कविराज श्यामलदास जी, उदयपुर]

२० उदयपुराधीश के गौरक्षा के निमित्त हस्ताक्षर करवाने के लिये।[5]

—:o:

१. माघ शु० १५, शुक्र, सं० १९३८।

२. देशहितैषी के रजिस्टर से।

३. रजिस्टर में एक टिप्पण है कि "ये जयपुर में रहते थे"।

२५ ४. फाल्गुन कृष्ण १, शनि, सं० १९३८।

५. यह पत्राशय कविराज श्यामलदास के फा० शु० ७ शुक्रवार १९३८ (१० फरवरी १८८२) के पत्र में निर्दिष्ट है। गोरक्षा के विषय में हस्ताक्षर करने के लिये एक पत्र ऋषि द० ने पौष शु० ५ रविवार १९३८

[पूर्ण संख्या ६१६] पारसल-सूचना

[कविराज श्यामलदास जी, उदयपुर]

गौरक्षा सम्बन्धी हस्ताक्षर कराने के पत्र।[1]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६१७] पत्र

पण्डित सुन्दरलाल जी आनन्दित रहो[2]! ५

विदित हो कि पत्र तुम्हारा आया। समाचार विदित हुआ। जो प्रतिमास में २० फारम वेदभाष्य के और १२ फारम वेदांगप्रकाशादि के छपें तो कुछ चिन्ता नहीं। परन्तु इतने से कम न छपना चाहिये। जो ··· ··· ··· ······के मन्त्री ने छापाखाना········ ·· ······· · ···में होने के विषय में लिखा है १० यह बिलकुल बेसमझ की बात है। क्योंकि प्रथम तो जगह-जगह छापेखाने के होने में व्यर्थ हजारों रुपये खर्च होते हैं। और छापेखाने की प्रसिद्धि होने में भी बहुत काल लग जाता है। प्रबन्ध भी बिगड़ जाता है। और भी बहुत प्रकार की हानि हो जाती है। इससे छापाखाना प्रथम ही रहेगा। ····· ··· ········ में तो इस १५ भाषा के जानने वाले कंपोजीटरों का भी मिलना दुर्लभ है। जो वह हमको लिखेगा तो हम उस को उत्तर दे देंगे। यह उसका लिखना बिलकुल व्यर्थ है।

··· ·· ··· ··· ·······································

तुम और बाबू विश्वेश्वरसिंह छापेखाने की तरफ दृष्टि रखोगे २० और भीमसेन को चेतन कर दोगे। मिति फाल्गुन बदी ३ सोमवार

(=२५ दिसम्बर १८८१) को लिखा था। द्र० – पूर्वमुद्रित पूर्णसंख्या ६०६ का पत्र (पृष्ठ ६४८)। कविराज श्यामलदास का पत्र तीसरे भाग में देखें।

१. इस के लिये भी कविराज श्यामलदास का फा० शु० ७ शुक्र १९३७ (=१० फरवरी १८८२) का पत्र देखें। यह तीसरे भाग में छपेगा। २५

२. इस पत्र की छपी हुई प्रतिलिपि फर्रुखाबाद आर्य समाज में थी। उसी से म० मामराज जी ने सन् १९२७ में प्रतिलिपि की।

संवत् १९३८[1]।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६१८] पत्र-सूचना

[पं० दयाराम, काशी]

बीस बीस पुस्तक भेजने के सम्बन्ध में।[2]

—:o:—

५ [पूर्ण संख्या ६१९] पोस्ट कार्ड

ओ३म्

बाजपेई रामाधार जी आनन्दित रहो[3]!

विदित हो कि आज हम ने वैदिक यंत्रालय प्रयाग मैनेजर दयाराम को लिख भेजा है सो आप का हिसाब सफा हो जायगा, अब
१० आगे को गड़बड़ न होगा। देखिये यह परोपकार का काम है इसमें सब बात के प्रबन्धकर्त्ता आप ही को रहना चाहिये, आप अपनी ओर से चाहे जिस को रक्खें परन्तु प्रधान आप ही समझे जायेंगे। अब आप इस पुराने हिसाब की सफाई करके नया हिसाब का आरम्भ कीजिये फिर गड़बड़ कभी नहीं हो सकेगी। हम यहाँ सहर
१५ मुंबई बालकेश्वर गोशाला के बगल में ठहरे हैं। यहां गोरक्षा के विषय में व्याख्यान होते हैं॥

ता० २० फरवरी सन् १८८२ ई०[4]।

[दयानन्द सरस्वती]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६२०] पत्र

२० पंडित भीमसेन आनंदित रहो[5]

१. ६ फरवरी १८८२।

२. इस पत्र की सूचना पं० भीमसेन के २७ फरवरी १८८२ को लिखे गये पत्र से मिलती है। भीमसेन का पत्र तीसरे भाग में देखें।

३. मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

२५ ४ फाल्गुन शुक्ल ३, सोम, सं० १९३८। इस पत्र का रामाधार बाजपेयी का १ मार्च १८८२ का लिखा उत्तर तीसरे भाग में देखें।

५. यह पं० भीमसेन को भेजे गये पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोप-

[आपका पत्र] आया[1] समाचार विदित हुए ॥ रामाधार [वाज-पेयी]नखलउ ने जो हमारे पास हिसा वेजा या वह आज ता० २० में भेजा है इसको अपने हिसाब के साथ परताल कर बाकी जो निकले उसका तकादा करना और उनको यह लिख भेजना कि आपा चाहें जिसको प्रबंधकर्त्ता करें मुख्य आप ही समझे जायेंगे क्योंकि यह हिसाब आप ही के हाथ में रहना अच्छा है । तुम लिखा करते थे कि अब [वीश २ फ]र्मा प्रति मास छपते हैं अब क्यों नहीं उतना [छपता] है यह क्या कारण है जिससे छपने का का[म ढीला प]ड़ गया । तुम्हारे लेखानुसार कम से कम अन्य पुस्तकों के १२ फर्मे छपना चाहिये वेदभाष्य के ८ फर्मे छोड़ कर । अब दो महीने में ८ फर्मे कुल छपे हैं यह क्या आश्चर्य है । अब जो मासिक हिसाब भेजा करो उसके स यह भी लिख भेजा करो कि इस मास में इतने फर्मे छपे और न्यूनाधिक छपने का कारण भी अर्थात् फलाने कारण होने से कम वा अधिक छपे । मुन्शी ब्रह्मानन्द हमारे पास नहीं है और न कोई पंडित । राजवल्लभ पहाड़ी ब्राह्मण है जो कि जैपुर से चला गया था ॥ अब कोई दो महीने होने को आये कई वार तुमको लिख चुके हैं कि पुस्तक भेज दो वे अब नहीं भेजीं अब देखते पत्र के निम्न [लिखित पुस्त]कें भेजदो ।

वर्णो०	१०
अव्ययार्थ	१०
भेला चांदा०	१०
शिक्षापत्री	१०
गोकरुणा०	१००

सब यंत्रालयस्थों से आशीर्वाद कह देना ॥
ता० २० फवरी [८२][2]
द० स०

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६२१] पत्र-सूचना

[पं० दयाराम, काशी]

कारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है ।

१. यह पत्र हमें नहीं मिला ।

२. पत्र में निर्दिष्ट पुस्तकों में सबके पश्चात् अव्ययार्थ छपा था । इस के प्रथम संस्करण के टाइटल पेज पर माघ कृष्ण १० सं० १९३८ छपा है अर्थात् १३ फरवरी १८८२ ।

१. रामाधार बाजपेई का हिसाब भेजने के सम्बन्ध में।
२. दस दस पुस्तकें भेजने के सम्बन्ध में।[1]
२० फरवरी १८८२।[2]

—:•:—

[पूर्ण संख्या ६२२] पत्र-सूचना

५ बाबू शिवनारायण जी मेरठ[3]।
२४ फरवरी १८८२[4]

— :०: —

[पूर्ण संख्या ६२३] पत्र

श्रीयुत मित्रवर आर्य्यकुल-प्रभाकर महाशय बाबू रूपसिंह जी योग्य इतः रामानन्द ब्रह्मचारी का यथायोग्य नमस्ते विदित हो॥[5]

१० हे महाजनः! आपके पत्र के प्रश्नों का उत्तर श्रीयुत स्वामीजी के आज्ञानुसार लिखकर भेज दिया था[6]। आशा है कि पहुंचा होगा। अब दो पत्र गोरक्षा के विषय के भेजता हूं जिस में एक पत्र तो सही करने[7] का है जिसके ऊपर (ओ३म् और नीचे हस्ताक्षर) ऐसा चिन्ह है और दूसरा विज्ञापन[8] पत्र अर्थात् किस प्रकार १५ महाशयों के हस्ताक्षर और मोहर होनी चाहिये इस विषय का है॥

---

१. इस पत्र के प्रथमांश की सूचना ऋ० द० के पूर्व मुद्रित पूर्ण संख्या ६१७ के पत्र में है। द्वितीयांश की सूचना २७ फरवरी १८८२ के भीमसेन के पत्र में मिलती है। भीमसेन का पत्र तीसरे भाग में देखें।

२० २. इस तारीख का निर्देश ऋ० द० के पूर्ण संख्या ६१७ के पत्र के अनुसार किया है।

३. इस पत्र की सूचना रामशरणदास के ६।३।८२ के पत्र में मिलती है। रामशरणदास का पत्र तीसरे भाग में देखें।

४. फाल्गुन शुक्ल ७, शुक्र, सं० १९३८।

२५ ५. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

६. पूर्ण संख्या ६१३ का पत्र।

७. यह आगे पूर्ण संख्या ६२८ पर छपा है।

८. यह आगे पूर्ण संख्या ६२९ पर छपा है।

आशा है कि आप इस महोपकीर्त्ति को प्राप्त होकर आर्य्यावर्त्त में सुशोभित होंगे। आप पंजाब हाथे में जहां तक आपका पुरुषार्थ चले वहां तक अपनी और सब महाशयों को सही करा कर शीघ्र स्वामी जी के पास[भेज] देंगे। इस में सही इस प्रकार करानी होगी कि जिस महाशय के मेल में जितने आर्यपुरुष हों उन सबकी ओर से वह एक पुरुष अपने हस्ताक्षर कर दे कि इतने १०० इतने १००० इतने १००००० वा इतने १००००००० करोड़ पुरुषों की ओर से मैं अमुक नामा पुरुष अपने हस्ताक्षर करता हूं। इस प्रकार सही करके पश्चात् जितने पुरुषों की ओर से उसने सही की हो उन सब के हस्ताक्षर कराके अपने पास रखले। क्योंकि जिस समय मुकद्मा सरकार में पहुंचेगा उस समय जब सरकार पूछेगी कि इतने मनुष्यों की ओर से तुमने हस्ताक्षर किये, परन्तु उनकी सही तुम्हारे पास है कि नहीं, तब दिखलायी जायगी कि है। इस लिये सही करा कर रखनी अवश्य चाहिये ॥

मुझ को दृढ़ निश्चय है कि इस कीर्ति के भागी आप होंगे। अब आप अपना पत्र शीघ्र भेजकर मुझ को कृतार्थ करेंगे। जो कुछ मेरे करने का काम हो कृपा पूर्वक विदित करना। आशा है कि आप कुटुम्ब के सहित आनन्द में होंगे। मैं भी ईश्वर की कृपा से आनन्द में हूं ॥

परमात्मा परम दयालु न्यायकारी सर्वान्तर्यामी जगदीश्वर आपको सदैव आनन्द में रक्खे ॥ शुभम् सम्वत् १९३८ चैत्र कृष्ण ५ शुक्र, ता० १० मार्च सन् १८८२ ई० ॥

[रामानन्द ब्रह्मचारी]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६२४]　　　पत्र

मंत्री आर्य्यसमाज दानापुर आनन्दित रहो[1] !

मैं आप परोपकारप्रिय धार्मिक जनों को सब जगत् के उपकारार्थ गाय बैल और भैंस की हत्या के निवारणार्थ दो पत्र एक तो सही करने[2] का और दूसरा जिस के अनुसार सही करनी[3] है, दो

१. मूल पत्र आर्य्यसमाज दानापुर में सुरक्षित है।

२. पूर्व पृष्ठ ६६० की टि० ७ देखें।

३. यह पूर्ण संख्या ६२९ पर (पृष्ठ ६६५) छपा है।

पत्र भेजता हूं। इसको आप प्रीति और उत्साह पूर्वक स्वीकार कीजिये, जिस से आप महाशय लोगों की कीर्त्ति इस संसार में सदा विराजमान रहे। इस काम को सिद्ध करने का विचार इस प्रकार किया गया **कि २०००००० दो करोड़ से अधिक राजे ५ महाराजे और प्रधान आदि महाशय पुरुषों की सही कराके आर्य्यावर्त्तीय श्रीमान् गवरनर जनरल साहेब बहादुर से इस विषय की अर्जी करके उपरी लिखित गाय आदि पशुओं की हत्या छुड़वा देना।** मुझ को दृढ़ निश्चय है कि प्रसन्नता पूर्वक आप लोग इस महोपकारक कार्य्य को शीघ्र करेंगे। अधिक प्रति भेजने का प्रयो- १० जन यह है कि जहां-जहां उचित समझे वहां-वहां भेजकर सही करा लीजिये। पुनः नीचे लिखित स्थान में रजिष्टरी कराके भेज दीजिये। "लाला रामशरण रईस मन्त्री आर्य्यसमाज मेरठ [मोहल्ला कानून गोयान][1]" अलमतिविस्तरेण धर्म्मिवरशिरो-मणिषु॥

१५ ता० १२ मार्च सन् १८८२ ई०।[2] (दयानन्द सरस्वती)
मुम्बई

— :०: —

[पूर्ण संख्या ६२५] पत्र

लाला रामचरण कालीचरण, मन्त्री आर्यसमाज फर्रुखाबाद[3] आनन्दित रहो।

२० ....पूर्ण सं० ६२४ का पत्र।

---

१. यह [ ] कोष्ठान्तर्गत पाठ पूर्ण संख्या ६२५ का जो पत्र लाला रामचरण कालीचरण को भेजा गया था, उस में है। द्र० पं० घासीराम जी सम्पा० जी० च० पृष्ठ ६३१ पर लगा मूल पत्र का फोटो।

२. चैत्र कृष्ण ७, रवि, सं० १९३८।

२५ ३. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। इसे म० मामराज ने सन् १९२७ में आर्यसमाज फर्रुखाबाद के पुराने पत्रों में से खोजा था। इस मूल पत्र का फोटो पं० घासीराम जी सम्पा० जी० च० पृष्ठ ६३१ पर लगा है। तथा वेदवाणी काशी, फरवरी १९५३ के पृष्ठ १३ पर पूरा छपा है।

चैत्र कृष्ण ८ सोम० संवत् १९३८।[1]

[ह० दयानन्द सरस्वती]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६२६] पत्र

आर्य्यसमाज लखनऊ, बाबू रामाधार वाजपेयी, खजाना रेलवे, आनन्दित रहो[2]। ५

... ... पूर्णसंख्या ६२४ का पत्र।

मि० चै० व० ८ सोम० सं० १९३८[1]। दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६२७] पत्र

पण्डित सुन्दर लाल असिसटेण्ट पोस्ट मास्टर जनरल प्रयाग, आनन्दित रहो। १०

.... पूर्ण संख्या ६२४ का पत्र।[3]

चैत्र कृष्ण ८ चन्द्रवार सं० १९३८[1]। ह० दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६२८] सही करने का पत्र

ओ३म्[4]

ऐसा कौन मनुष्य जगत् में है, जो सुख के लाभ होने में प्रसन्न और दुःख की प्राप्ति में अप्रसन्न न होता हो। जैसे दूसरे के किये अपने उपकार में स्वयं आनन्दित होता है, वैसे ही परोपकार करने में सुखी अवश्य होना चाहिये। क्या ऐसा कोई भी विद्वान् भूगोल में था, है और होगा, जो परोपकाररूप धर्म और पर- १५

---

१. ता० १३ मार्च, १८८२। २०

२. मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

३. यही पत्र श्री स्वामी जी ने गोरक्षार्थ सही करने वाले दूसरे पत्र (पूर्ण संख्या ६२८-६२९) के साथ हस्ताक्षर कराने के लिये भारतवर्ष में सैकड़ों की संख्या में आर्यसमाजों तथा अन्य व्यक्तियों को भेजा था।

४. गोरक्षावाले पत्रों के साथ यह सही करने वाला छापा हुआ पत्र बहुत स्थानों को भेजा गया था। मूल मुद्रित पत्र म० मामराज फर्रुखाबाद से लाये थे। वह हमारे संग्रह में सुरक्षित है। फर्रुखाबाद का इतिहास नामक ग्रन्थ पृ० १९८ पर भी छपा है। २५

हानिस्वरूप अधर्म्म के सिवाय धर्म वा अधर्म की सिद्धि कर सके ? धन्य वे महाशय जन हैं, जो अपने तन, मन और धन से संसार का अधिक उपकार सिद्ध करते हैं। निन्दनीय मनुष्य वे हैं, जो अपनी अज्ञानता से स्वार्थवश होकर अपने तन, मन और धन से ५ जगत् में परहानि करके बड़े लाभ का नाश करते हैं। सृष्टिक्रम से ठीक-ठीक यही निश्चय होता है कि परमेश्वर ने जो-जो वस्तु बनाया है, वह-वह पूर्ण उपकार लेने के लिये है। अल्प लाभ से महाहानि करने के अर्थ नहीं। विश्व में दो ही जीवन के मूल हैं, एक अन्न और दूसरा पान। इसी अभिप्राय से आर्य्यवर शिरोमणि १० राजे महाराजे और प्रजाजन महोपकारक गाय आदि पशुओं को न आप मारते और न किसी को मारने देते थे। अब भी इन गाय, बैल, और भैंस को मारने और मरवाने देना नहीं चाहते हैं। क्योंकि अन्न और पान की बहुताई इन्हीं से होती है। इससे सब का जीवन सुख से हो सकता है। जितना राजा और प्रजा का १५ बड़ा नुकसान इन के मारने और मरवाने से होता है, उतना अन्य किसी कर्म से नहीं। इस का निर्णय गोकरुणानिधि पुस्तक में अच्छे प्रकार प्रकट कर दिया है अर्थात् एक गाय के मारने और मरवाने से ४,२०,००० चार लाख बीस हजार[1] मनुष्यों के सुख की हानि होती है। इस लिए हम सब लोग स्वप्रजा की हितैषिणी श्रीमती २० राजराजेश्वरी क्विन विक्टोरिया की न्याय-प्रणाली में जो यह अन्याय रूप बड़े-बड़े उपकारक गाय आदि पशुओं की हत्या होती हैं इस को इन के राज्य में से प्रार्थना से छुड़वा के अति प्रसन्न होना चाहते हैं। यह हम को पूरा निश्चय है कि विद्या, धर्म्म, प्रजा-हित-प्रिय श्रीमती राजराजेश्वरी क्विन् महाराणी विक्टोरिया २५ पार्लियामेण्ट सभा और सर्वोपरि प्रधान आर्य्यावर्त्तस्थ श्रीमान् गवर्नर जनरल साहिब बहादुर सम्प्रति इस बड़ी हानिकारक गाय, बैल तथा भैंस की हत्या को उत्साह और प्रसन्नता पूर्वक शीघ्र बन्द करके हम सब को परम आनन्दित करें। देखिये कि उक्त गाय आदि पशुओं के मारने और मरवाने से दूध घी और किसानों की

---

३० १. इस का पूर्ण विवरण 'गोकरुणानिधि' (दयानन्दीय लघुग्रन्थ-संग्रह, पृष्ठ ५४७-५४८) तथा सत्यार्थप्रकाश समु० १० (आ० स० शताब्दी सं० २, पृष्ठ ४१५, ४१६) में देखें। दोनों ग्रन्थों में संख्या में कुछ भेद है।

कितनी हानि होकर राजा और प्रजा की बड़ी हानि हो गई और नित्य प्रति अधिक अधिक हो जाती है। पक्षपात छोड़ के जो कोई देखता है तो वह परोपकार ही को धर्म्म और पर-हानि को अधर्म निश्चित जानता है। क्या विद्या का यह फल और सिद्धान्त नहीं है कि जिस जिस से अधिक उपकार हो उस उस का पालन, वर्धन ५ करना और नाश कभी न करना। परम दयालु न्यायकारी सर्वान्तर्यामी सर्वशक्तिमान् परमात्मा इस समस्त **जगदुपकारक काम करने में ऐकमत्य करे ॥**

चुन्नीलाल प्रेस हस्ताक्षर

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६२६] विज्ञापनपत्रमिदम्[1] १०

सब आर्य पुरुषों को विदित किया जाता है कि जिस पत्र के ऊपर (ओम्) और नीचे (हस्ताक्षर) ऐसा वचन लिखा है, वही सही करने का है। उस पर सही इस प्रकार करनी होगी कि जिस के स्वराज्य व देश में ब्राह्मण आदि मनुष्यों को जितनी संख्या हो उतनी संख्या लिख के अर्थात् इतने सौ, हजार, लाख व करोड़ १५ मनुष्यों की ओर से मैं अमुक नामा पुरुष सही करता हूं इस प्रकार एक श्रीयुत महाशय प्रधान पुरुष की सही में सर्व साधारण आर्य पुरुषों की सही आ जायगी। परन्तु जितने मनुष्यों की ओर से एक मुख्य पुरुष सही करे, वह उन से सही लेके अपने पास अवश्य रक्खे। और जो मुसलमान वा ईसाई लोग इस महोपकार विषय २० में दृढ़ता और प्रसन्नता से सही करना चाहें तो कर दें। मुझ को दृढ़ निश्चय है कि आप परम उदार महात्माओं के पुरुषार्थ उत्साह और प्रीति से यह सर्व उपकारण महापुण्य कीर्तिप्रदायक कार्य यथावत् सिद्ध हो जायेगा।

चैत्र कृष्ण ९ सं० १९३९[2] तदनुसार १४ मार्च १८८२ मुंबई २५

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

१. सही करने वाले पत्रों के साथ यह विज्ञापन भी अनेक स्थानों में भेजा गया था।

२. यहां सं० १९३८ चाहिये, चैत्र शुक्ल १ से नया संवत् चलता है।

[पूर्ण संख्या ६३०] पत्र-सूचना

श्री कृष्णलाल साह, अलमोड़ा[1]
गोरक्षासम्बन्धी दो पत्र
चैत्र वदी ११ बुधवार संवत् १९३८[2] मुम्बई

—:o:—

५ **[पूर्ण संख्या ६३१] पत्र-सूचना**

[सम्पादक भारतमित्र कलकत्ता]
गोरक्षा सम्बन्धी दो पत्र ।[3]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६३२-६३३] पत्र-सूचना

[पं० लेखराम आर्यमुसाफिर पेशावर]
१० गोरक्षा सम्बन्धी दो पत्र ।[4]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६३४] पत्रांश

[समाचार पत्र देशहितैषी अजमेर को]
गोरक्षा के विषय में पत्र भेजते हैं ।[5]

फर्रुखाबाद का इतिहास नामक ग्रन्थ पृष्ठ २०० पर भी सं० १९३९ ही
१५ छपा है । वहां अंग्रेजी तारीख २४-३-१८८२ दी है, वह भी अशुद्ध है । १४
मार्च चाहिये ।

१. इस पत्र का संकेत श्री कृष्णलाल साह के ता० २९ मार्च १८८२ के पत्र में मिलता है । श्री कृष्णलाल का पत्र तीसरे भाग में देखें ।

२. १५ मार्च, १८८२ ।

२० ३. इस पत्र की सूचना श्री मनोहरदास क्षत्रिय, अवैतनिक कार्य सम्पादक भारतमित्र, कलकत्ता के २९ मार्च ८२ के पत्र में है । ऋ० द० ने यह १२-१६ मार्च १८८२ को लिखा होगा । श्री मनोहरदास क्षत्रिय का पत्र तीसरे भाग में देखें ।

४. पूर्ण संख्या ६२४ तथा ६२७ का पत्र । श्रद्धानन्द ग्रंथावली, खण्ड
२५ ४, पृष्ठ-२५ पर निर्दिष्ट । ५. देशहितैषी के रजिस्टर में से ।

१६ मार्च १८८२ मुम्बई[1]

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६३५] पारसल-सूचना

[लाला रामशरणदास जी, मेरठ]

३०० गोरक्षा सम्बन्धी पत्र भेजे।[2] ५

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६३६] पत्र

बाबू कृपाराम स्वामी आनन्दित रहो।

जो आपने ब्राह्मी ओषधी का पारसल भेजा सो पहुंचा। अब जब तक हम न लिखें तब तक मत भेजियेगा। यहां सब प्रकार आनन्द है। ३ तीन दिन के पश्चात्[3] वार्षिक उत्सव आर्यसमाज १० का ७ सातवां होगा। दानापुर से तीन सभासद् यहां उत्सव पर आवेंगे, और आर्यसमाज का स्थान भी थोड़े ही दिनों में बन जायगा। सब सभासद् भी प्रसन्न हैं। वहां की जो लिखने तुल्य बातें हों, लिखते रहना। [सब] से हमारा आशीर्वाद कहना।

मि० चै० व० १३ शुक्र सं० १६३८[4]। १५

[दयानन्द सरस्वती]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६३७] पत्र

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो[5]।

विदित हो कि कल रामानन्द के भाई त्रिलोचन ने एक पत्र भेजा है कि जिस में यह समाचार लिखा था। माता, पिता, बहुत २०

---

१. चैत्र वदी १२, गुरु, सं० १६३८।

२. इस पारसल की सूचना पूर्ण संख्या ६६४ के पत्र में है।

३. अर्थात् चैत्र शुक्ला प्रतिपद् के दिन।

४. १७ मार्च, १८८२, मुम्बई।

५. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। मार्च सन् २७ में म० २५ मामराज ने आर्यसमाज फर्रुखाबाद के पत्रों में से खोजा था।

बीमार हैं। और मैं भी बीमार हूं। यहां कोई हमको जल देने वाला भी नहीं है। इस कारण तुम श्री स्वामी जी से आज्ञा लेकर देखते पत्र चले आओ। ऐसा शोक का समाचार लिखा था। इस बात की तुम पत्र के पहुंचते ही तलासी करना कि यह बात सच है
५ किम्वा किसी के बहिकाने से उन्होंने लिखी अर्थात् केवल भाई के बुलाने के वास्ते। इसका ठीक ठीक निर्णय करके शीघ्र हमारे पास पत्र भेजो। जो ऐसा ही हो की जैसा लिखा है तो किसी एक योग्य पुरुष का प्रबन्ध करके उनके पास रख देना जो उनकी सेवा अच्छे प्रकार कर सके। और जो दवा दारू के खर्च में दो चार रुपये लगें
१० तो दे देना। हिसाब हमारे नाम से लिख लेना। अब इसका पिता भी वहां आ गया है। इस कारण "३) रुपैये तो मा[ह]वारी इने मिलते ही हैं अब एक रु० अर्थात् ४) रुपैये मा[ह]वारी सेठ निर्भय-राम जी [की] दूकान दिया करें" किसी प्रकार दुःखी न होने देना जब तक अच्छे न होवें ॥

१५ एक यह गुप्त बात लिखते हैं इसको प्रकट मत करना कि जो किसी का लोकान्तर हो जाय तो जैसा संस्कारविधि में लिखा है उसके अनुसार घृत चन्दनादि से मृतक संस्कार करवा देना। जो कुछ पंद्रह बीस रुपये लगें, लगा देना, परन्तु संस्कार अच्छी प्रकार करवा देना। "सब से हमारा आशीर्वाद कहियेगा। जो गोरक्षा
२० के विषय में पत्र वहां भेजे हैं' उनको दिखला के अपनी जाति किंवा सब की सही बही में लेना। और सही करने वालों की ओर से जितनी संख्या हो उतनी लिख के पंच लोग सही उस छपे हुए पत्र पर क[र] देवें।[2]

चैत्र कृष्ण ३० रविवार संवत् १९३८[3]।

२५ (दयानन्द सरस्वती)

—:o:—

---

१. द्र०—पूर्ण संख्या ६२८।

२. " " कामों के अन्दर का लेख श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से (लाल रंग से) लिखा है और पत्र को शोधा भी है।

३. १९ मार्च, १८८२।

[पूर्ण संख्या ६३८] पत्र-सूचना

[श्रीमान् आर्यकुलदिवाकर महाराणा सज्जनसिंह जी उदयपुराधीश]

गोरक्षासम्बन्धी एक पत्र और एक छपी चिट्ठी[1]।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६३९] पत्र ५

ओ३म्[2]

श्रीमन्महाराजाधिराजेभ्यः श्रीयुतशाहपुराख्याधीशेभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमां शमिहास्ति भवदीयं च नित्यमाशासे। जब से आप और मेरा वियोग हुआ तब से अवकाश न मिलने से मैं आपको पत्र नहीं लिख सका। अब इस पत्र १० के पहुंचने के पश्चात् अपने कुशल क्षेम के समाचार से सुभूषित पत्र भेजियेगा। मैं भी उचित समय पर पत्र भेजा करूंगा, जो आप से और मुझ से गोरक्षा के विषय[में] संवाद हुआ था उसके वास्ते **जो एक पत्र और एक चिट्ठी छपवाके श्रीमानार्य्यकुलदिवाकर उदयपुराधीशादि राजे** महाराजों के पास भेजे हैं वे ही श्रीमान् महा- १५ राजाधिराज आपके पास भी दो पत्र भेजते हैं, इसका प्रबन्ध ऐसा किया है कि अपने राज्य और मित्रों के राज्य में जो जो ब्राह्मणादि मनुष्य हों उनको सही एक वही में लेके उनकी ओर से राजे महाराजे और प्रधान पुरुष उस छापे के पत्र के नीचे वा बगल में उन सही करनेवालों की संख्या लिख के अपनी सही करे। चित्तौड़ में २० जो कुछ अच्छी बातें हुईं वे सब श्री मदनवद्य गुणोदार महाराजाधिराजों के पुरुषार्थ ही से हुईं और अग्रे होगी। जो राजकुमार पाठशाला की बात हुई थी सो श्रीमदार्यकुलभास्करों ने भी करना स्वीकार कर लिया है। यहां मुम्बई में भी गोरक्षा के वास्ते सही हो रही है। सब से मेरा आशीर्वाद कहियेगा। अलमतिविस्तरेण २५

---

१. यह पत्र १४ से २१ मार्च १८८२ के मध्य भेजा गया होगा। देखो पूर्ण संख्या ६३९।

२. मूल पत्र राज कार्यालय शाहपुरा में सुरक्षित है। इसकी प्रतिलिपि पं० भगवान्स्वरूपजी ने स्वहस्त से करके ता० ६-९-२८ के अपने पत्र सहित शाहपुरा से भेजी थी। ३०

महाराजाधिराजर्य्येषु । मि० चै० शु० २ वार मङ्गल संवत् १९३९[1]। इसका उत्तर मुम्बई में शीघ्र लिख भेजिये । मुंबई बालकेश्वर ।

(दयानन्द सरस्वती)

—:०:—

५ [पूर्ण संख्या ६४०] **पत्र-सारांश**

[कर्नल आल्काट तथा मैडम ब्लेवेस्टकी[2]]

मेरठ में आपने एक व्याख्यान दिया था, जिससे ज्ञात हुआ कि आप लोगों को ईश्वर के अस्तित्व में सन्देह है और आप लोगों ने जो चिट्ठी अमेरिका से लिखी थी उस में अपने धर्म का नाम
१० थियोसोफिस्ट लिखा था। हमने थियोसोफिस्ट शब्द के अर्थ अंग्रेजी जाननेवालों से पूछे तो उन्होंने कोष को देखकर 'थियोसोफी' शब्द के अर्थ ईश्वर की बुद्धिमत्ता बतलाये थे। उससे हमने आप को आस्तिक समझा था और इस कारण आप से मित्रता करने में मुझे कोई रुकावट नहीं रही थी। अब आप के व्याख्यान इस के
१५ विपरीत देखते हैं। आप से और हम से मित्रता हो चुकी है। अतः कल के दिन अथवा जितना शीघ्र हो सके आप मेरे पास चले आओ वा मुझे अपने पास बुला लो, वा कोई अन्य स्थान नियत करो कि जहां हम दोनों मिलकर इस विषय में शास्त्रार्थ करें। यदि आप से हो सके तो हमारे मन से ईश्वर का विचार उठा दो
२० और अपने जैसा बनालो, अन्यथा हम से हो सकेगा तो हम आप को ईश्वर का प्रमाण देंगे और आप को अपने जैसा बनावेंगे।

२१ मार्च सन् १८८२।[3]

—:०:—

---

१. २१ मार्च, १८८२।

२. यह पत्राशय पं० घासीराम जी सम्पा० जी० च० परिशिष्ट २, पृष्ठ
२५ ७७३ तथा पं० लेखराम जी कृत उर्दू जी० च० पृष्ठ ८४१ (हिन्दी सं०, पृष्ठ ८७७) पर उद्धृत है।

३. चैत्र शुक्ल २, मंगल, संवत् १९३९।

## [पूर्ण संख्या ६४१]		पत्र

. ...[1]

[1] हम को आये कई दिन हो गये और जिस दिन हम बम्बई में उतरे थे, स्टेशन पर मिलने के लिये कर्नल अलकाट और ब्लेवे-त्स्की भी आये थे। और उसी समय हमने उन से कहा था कि ईश्वर के विषय में जो विचार है उसका हमारे तुम्हारे बीच में एक हो जाना बहुत आवश्यक है तो उन लोगों ने कहा कि इस में शीघ्रता क्या पड़ी है, किसी न किसी दिन हो रहेगा। हमने उत्तर दिया कि यह सब से आवश्यक बात है। इसमें विलम्ब करना अनुचित है, परन्तु अभी तक न अलकाट साहब और न मैडम ब्लेवेत्स्की ने इसका कोई प्रबन्ध किया। तुम जाकर मौखिक भी समझा देना कि हम को इस बात की बड़ी इच्छा है। यदि वह इस बात को अस्वीकार करेंगे तो हम लोगों के मध्य मित्रता रहनी कठिन हो जायेगी क्योंकि मैं नास्तिकों का खण्डन करने में आलस्य करना पाप समझता हूं।

—:o:—

## [पूर्ण संख्या ६४२]		पत्र-सारांश

[मैडम ब्लेवेस्टकी[2]]

---

१. यह प० लेखरामकृत जीवन चरित हिन्दी स० पृष्ठ ८७७ पर छपा है। यह पत्र ऋ० द० ने किस के नाम और कब लिखा था, यह अज्ञात है। इस पत्र को किसके हाथ भेजा था, उसका नाम भी उल्लिखित नहीं है। इस पत्र का जो उत्तर आया—"अलकाट साहब दिसौर (दिसावर = देशान्तर) चले गये और हमको अवकाश नहीं कि हम आप से इस संबन्ध में विचार शास्त्रार्थ करें।" वही पृष्ठ ८७७। इस उत्तर और पूर्ण संख्या ६४० तथा ६४२ पर छपे पत्रों की तुलना से विदित होता है कि यह पत्र २१ मार्च १८८२ को लिखा गया था। अथवा २२ मार्च को ही पूर्ण संख्या ६४२ पर छपे पत्र से पूर्व लिखा गया था। क्योंकि इस पत्र के उत्तर से कर्नल अल्काट के बाहर जाने का जो निर्देश मिलता है, उसका निर्देश पूर्ण संख्या ६४२ के मैडम ब्लेवेत्स्की को लिखे पत्र में भी है।

२. यह पत्राशय पं० घासीराम जी सम्पादित जी० च० परिशिष्ट २ पृष्ठ ७७४ तथा पं० लेखराम जी कृत उर्दू जी० च० पृष्ठ ८४१, ८४२

कर्नल ने हमें वचन दिया था कि हम शीघ्र ही इस विषय में शास्त्रार्थ करेंगे, परन्तु वह उसे पूरा किये बिना ही अन्यत्र चले गये। सो यदि तीन चार दिवस के भीतर आप अकेली अथवा कर्नल सहित इस बखेड़े को न निबटा लोगी तो मैं २८ मार्च सन् ५ १८८२ मङ्गलवार[1] को फ्रामजी कावसजी हाल में आप के विरुद्ध वक्तृता दूंगा।

२२ मार्च १८८२।[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६४३] पत्र-सूचना

[पं० सुन्दरलाल जी, प्रयाग][3]

—:o:—

१० [पूर्ण संख्या ६४४] पत्र

पं० सुन्दरलाल जी आनन्दित रहो।[4]

विदित हो कि आर्यसमाज लाहौर में प्रतिमास अंग्रेजी [का] एक आर्यपत्र निकलता है। वहां के एडीटर ने लिखा है कि इस पत्र के बदले में आप प्रतिमास ऋग्यजुर्वेद का भाष्य भेजा करें और इसके बदले वह पत्र भेजेंगे। सो तुम लाला सांईदास के १५ मार्फत वेदभाष्य भेज देना और वे जैसा नोटिस लिख भेजें छपने के वास्ते वैसा ही छपवा देना।।[5]

(हिन्दी सं० पृष्ठ ८७८) पर उद्धृत है।

१. चैत्र शु० ६, मंगलवार सं० १९३९ सायं ६ बजे उक्त व्याख्यान २० दिया था। देखो ऋ० द० का जीवनचरित।

२. चैत्र शुक्ल ३, बुध, सं० १९३९।

३. पूर्ण संख्या ६४४ के अन्त में 'जिन बातों के पूर्व पत्रों में उत्तर मांगा है' (पृष्ठ ६७३) लिखे अंश से विदित होता है कि ऋ० द० ने कई पत्र लिखे थे, जो हमें उपलब्ध नहीं हुए। यहां हमने केवल पत्र की सूचना २५ बना कर छापी है।

४. मूल पत्र परोपकारिणी सभा में सुरक्षित है।

५. इस बात का निर्देश आगे पूर्ण संख्या ६६२ के पत्र में भी है। यह 'आर्य' पत्र सम्बन्धी नोटिस विज्ञापन ऋग्वेदभाष्य के ४२-४३ सम्मिलित अङ्क (आश्विन कृष्ण, सं० १९३९) के टाइटल के तृतीय पेज पर तथा ऋग्वेद-

भीमसेन अब भाषा बहुत ढीली बनाता है उसको शिक्षा कर देना कि भाषा के वनाने में ढील न हुआ करे और आख्यातिक अब कितना छप चुका है ! हमने कई बातें पूछीं हैं उनका उत्तर हमको अब तक न दिया। उनका शीघ्र प्रत्युत्तर भेजना चाहिये।[1] मैनेजर दयाराम ने अभी त[क] हिसाब का पत्र नहीं भेजा है उससे हिसाब भिजवा देना। ५

मार्च ता० २३ सन् १८८२ ई०[2]

और जिन बातों के पूर्व पत्रों में[3] उत्तर मांगा है भेज देना। इसमें विलम्ब न होना चाहिये।

[दयानन्द सरस्वती] १०

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६४५] पत्र[4]

यह बात बहुत उत्तम है क्योंकि अभी कलकत्ते में इस विषय की सभा हो रही है।[5] इस लिये जहां तक बने वहां शीघ्र संस्कृत

भाष्य के ४८-४९ सम्मिलित अङ्क (वैशाख कृष्ण, सं० १९४०) के टाइटल पेज ४ पर छापा था। इसे तीसरे परिशिष्ट में देखें। १५

१. इस पत्र में पूछी गई बातों का उत्तर भीमसेन ने दिया है। भीमसेन के पत्र पर कोई तारीख वा तिथि नहीं है। इस २३ मार्च के पत्र का उत्तर होने से भीमसेन ने मार्च के अन्त में अथवा अप्रेल के आदि में पत्र लिखा होगा। भीमसेन का पत्र तीसरे भाग में देखें।

२. चैत्र शुक्ल ४, बृह०, सं० १९३९। २०

३. ये पत्र हमें उपलब्ध नहीं हुए।

४. मूल पत्र मार्च सन् १९२७ में महा० मामराज जी ने फर्रुखाबाद आर्यसमाज के पत्रों में से खोजा था। अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

५. भारतीय स्कूलों में कौनसी भाषा पढ़ाई जावे, इस विषय पर विचारार्थ सन् १८८२ के आरम्भ में कलकत्ता में एक कमिशन बैठा था। २५ लाहौर समाज ने उस कमिशन के प्रधान को आर्यभाषा पढ़ाई जाने के लिये पत्र लिखा था। मुलतान समाज ने भी ऐसा ही पत्र वहां भेजा था। उन दिनों मुलतान समाज के मन्त्री उत्साहमूर्ति मास्टर दयाराम थे। उन्होंने श्री

और मध्यदेश[1] की भाषा के प्रचार के वास्ते, बहुत प्रधान पुरुषों की सही[2] कराके कलकत्ते की सभा में भेज दीजिये। और भिजवा दीजिये। और मेरठ और देहरादून से पूर्व-पूर्व समाजों में पत्र इस विषय के शीघ्रतर भेज दीजिये।

५ चै० शु० ५ शुक्र सम्वत् १९३८[3]। दयानन्द सरस्वती
(मुंबई)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६४६] पत्र-सारांश

[पं० लेखराम जी आर्य मुसाफिर पेशावर]

पंजाब में हिन्दी प्रचार के लिए शिक्षा कमीशन को मेमोरियल
१० भेजने के लिए।[4]

—:०—

[पूर्ण संख्या ६४७] विज्ञापनपत्रमिदम्[5]

सब सज्जन उदार आर्य लोगों को विदित किया जाता है जो फीरोजपुर में अनाथाश्रम कई एक वर्षों से आर्यसमाजों ने स्थापित

स्वामी जी को १९ मार्च सन् १८८२ को लिखा कि वे सब समाजों को
१५ कलकत्ते को ऐसे पत्र लिखने के लिये प्रेरित करें। श्री स्वामी जी ने उसी पत्र की पीठ पर ऊपर मुद्रित लेख स्वहस्त से लिखकर फर्रुखाबाद भेजा, ताकि वहां से सब समाजों में आन्दोलन किया जावे।

१. मध्यप्रदेश से यहां यमुना के पूर्वी तट से लेकर वाराणसी तक का प्रदेश जानना चाहिये। प्राचीन परिभाषा के अनुसार सरस्वती से प्रयाग
२० तक तथा हिमालय और विन्ध्याचल के मध्य का देश 'मध्यदेश' कहाता था। द्र०—मनु० २।३।४।

२. सही करने योग्य पत्र तथा मास्टर दयाराम जी का पत्र हमारे संग्रह में थे, वे लाहौर में देशविभाजन के समय नष्ट हो गये।

३. यह गुजराती संवत् है, उ० भारतीय १९३९ जानना चाहिये, २४
२५ मार्च १८८२।

४. श्रद्धानन्द ग्रन्थावली, खण्ड ४, पृष्ठ २५ पर निर्दिष्ट है।

५. ऋग्वेदभाष्य, अंक ३६, ३७, वैदिक यन्त्रालय, प्रयाग के मुखपृष्ठ की पीठ (=टाइटल पेज ४) पर छपा। यह अंक चैत्र शुक्ल १० संवत् १९३९ तदनुसार २९ मार्च सन् १८८२ को छपा था।

किया है यह बड़ा प्रशंसित और धर्म का काम है और इस में बड़े सहाय की अपेक्षा है। इस लिये आप सज्जन लोगों को उचित है कि इसका सहाय करना। क्योंकि इसके होने से आर्यलोग जिन का पालन करने वाला कोई न होवे वे ईसाई वा मुसलमान अथवा अन्य मत में वेदोक्त सनातन धर्म से छूट के मिल जाते थे उनकी ५ रक्षा के लिये यह अनाथ-पालनार्थ सभा नियत की है। जिस प्रकार अर्थात् धन के सहाय करने से इसका दीर्घायु हो वैसे यत्न करने चाहिये॥　　　　॥ अलमतिविस्तरेणौदार्य्यादिगुणयुक्तेषु॥

ह० दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६४८]　　　　विज्ञापन[1]　　　　१०

थियोसोफिस्टों की गोलमाल पोलपाल[2]

श्री स्वामी जी ने और आर्य समाज के लोगों ने उनके पूर्व पत्र और व्यवहारों से यह अनुमान किया था कि उन से आर्यावर्त देश का कुछ उपकार होगा। परन्तु वह अनुमान व्यर्थ हो गया—

(१) क्योंकि जो जो उन्होंने प्रथम अपनी चिट्ठियों में प्रसिद्ध १५ लिखा था कि हमारी थियोसोफिकल सोसाइटी आर्यसमाज की शाखा हुई, उससे यह लोग बदल गये।

(२) उन्होंने कहा था कि वेदोक्त सनातन धर्म के ग्रहण और विद्यार्थी होकर संस्कृत विद्या पढ़ने को आते हैं, सो तो न किया, किन्तु अब किसी धर्म को नहीं मानते और न कुछ किसी धर्म की २०

१. यह विज्ञापन लगभग ३१ मार्च सन् १८८२ की मुम्बई ओरियण्टल प्रेस में छपा था। यही विज्ञापन पं० लेखराम कृत उर्दू जीवन चरित पृष्ठ ८४२-८४४ (हिन्दी स० पृष्ठ ८७८-८८२) पर छपा है। पण्डित जी ने इस का उर्दू अनुवाद नहीं किया। फारसी अक्षरों में भाषा मूल समान ही दी गई है। पं० लेखराम जी का पाठ अधिक शुद्ध है। आर्यधर्मेन्द्रजीवन में २५ कुछ शब्द बदले हुए प्रतीत होते हैं। हमें मूल मुद्रित प्रति प्राप्त नहीं हो सकी।

२. सं० १९४२ (सन् १८८५) में मोहनलाल विष्णुलाल पाण्ड्या उपमन्त्री परोपकारिणी सभा द्वारा मुद्रापित "आवेदन-पत्र" में ऋषि दयानन्द के पुस्तकसंग्रहान्तर्गत संख्या ११६ पर "**थियोसोफिकल सोसाइटी के दोषों का** ३० **स्वामी जी का उत्तर**" पुस्तिका निर्दिष्ट है, वह सम्भवतः यही विज्ञापन है।

जिज्ञासा की, न आज तक संस्कृत विद्या पढ़ने का आरम्भ किया और न करने की आशा है ॥

(३) उन्होंने कहा था कि जो इस सोसाइटी के सभासदों से फीस आवेगी वह आर्यसमाज के लिये होगी और बहुत सी पुस्तकें
५ भेंट की जावेंगी, वह तो कुछ भी नहीं किया, परन्तु जो हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के पास ७००)[1] रुपये भेजे थे वह भी निगल कर बैठ रहे, पुस्तकों का दान करना तो दूर किन्तु जिन बाबू छेदीलाल शिवनारायण आर्यसमाज मेरठ के सभासदों ने उनके सत्कार में स्थान, मान, सवारी और खान पान आदि में सैकड़ों रुपये खर्च
१० किये, इतने पर भी एच० पी० मैडम ब्लेवटस्की और एच० एस० करनेल आलकाट साहब ने जो एक पुस्तक उनको दिया था उसके ३०)रु० झट ले लिये, लज्जित भी न हुए। इसके सिवाय सहारनपुर, अमृतसर और लाहौर आदि के आर्यसमाजों ने बहुत सा सत्कार किया वह भी उन्होंने नहीं समझा और स्वामीजी ने भी जहां तक
१५ बना इनका उपकार किया। उसको न मान कर व्यर्थ लिखते हैं कि हमने स्वामी जी का बहुत सहाय किया, परन्तु स्वामी जी कहते हैं कि कुछ भी नहीं [किया] और जो किया हो तो प्रसिद्ध क्यों नहीं करते हैं सो कुछ भी प्रकट नहीं करते फिर कौन मान सकता है ?

(४) प्रथम इन्होंने अपने पत्रों में और यहां आकर स्वामीजी और
२० सब के सामने आकर ईश्वर को स्वीकार किया, फिर उस के विरुद्ध मेरठ में स्वामी जी और अनेक भद्र पुरुषों के सामने दोनों ने कहा कि हम दोनों ईश्वर को नहीं मानते। क्या यह पूर्वापर विरोध नहीं है ? तब स्वामी जी ने कहा कि तुम ईश्वर के मानने का खण्डन करो और हम मण्डन करें कि जो सच हो उसको मान लीजिये तब
२५ इन्होंने इस बात को भी स्वीकार न किया।

(५) जब यह आर्यावर्त देश में आने लगे तब एक समाचार पत्र (Indian Spectator) में तारीख २४ जुलाई सन् ७८ ईस्वी में छपवाया था कि न हम बुधिष्ट, न हम क्रिश्चियन और न हम

---

१. इन सात सौ रुपयों के सम्बन्ध में श्यामजी कृष्ण वर्मा ने २४
३० फरवरी १८७९ को श्री स्वामी जी के नाम के पत्र में लिखा था। वह पत्र लाहौर में नष्ट हो गया।

ब्राह्मण अर्थात् पुराण मत के मानने वाले हैं, किन्तु हम आर्य-समाजिक हैं। अब इससे विरुद्ध स्पष्ट छपवाया कि हम बहुत वर्षों से बुद्धिष्ट थे और अब भी हैं। क्या यह कपट और छल की बात नहीं है और जनवरी सन् ८० की चिट्ठी से सिद्ध होता है कि वे ईश्वर को मानते थे और आठ-महीने पश्चात् उसी सन् के अक्टूबर महीने में मेरठ में कहा कि हम दोनों ईश्वर को नहीं मानते। यह उसका छल नहीं तो क्या है ?

(६) यहां आकर प्रथम थियोसोफिकल सोसाइटी को आर्यसमाज की शाखा स्वीकार करके पश्चात् कहा कि मुख्य सोसाइटी न आर्य-समाज की शाखा और न आर्यसमाज मुख्य सोसाइटी की शाखा है, किन्तु जो एक दूसरे वेद की शाखा दोनों के साजे की है, इस से विरुद्ध अब छापके प्रसिद्ध किया कि हमारी सोसाइटी कभी आर्य-समाज की शाखा नहीं हुई थी और हम आर्यसमाज से बाहर हैं। क्या यह भी उनकी विपरीत लीला नहीं है कि जब उन्होंने बम्बई में सोसाइटी बनाई थी, उसमें स्वामी जी के कहने सुनने, लिखने बिना उनका नाम अपने मन से सभासदों में लिख लिया था। जब यह प्रथम मेरठ में मूल जी के साथ मिले थे तब स्वामी जी ने कहा था कि बिना हमारे कहे सुने तुमने सोसाइटी में हमारा नाम क्यों लिखा ? जहां लिखा हो काट दें। तब करनेल आलकाट साहब ने कहा कि हम इससे आगे ऐसा काम कभी न करेंगे। जहां लिखा है निकाल भी देंगे[1]।

फिर जब काशी में मिले, तब तक उन्होंने सोसाइटी से स्वामी जी का नाम नहीं निकाला था। तब स्वामी जी ने कड़ा पत्र लिखा कि जहां हमारा नाम लिखा हो वहां से शीघ्र निकाल दो[2]। जब उन्होंने तार भेजा कि अब हम क्या लिखें तब स्वामी जी ने तार से ही उत्तर दिया कि जैसा हमने प्रथम वैदिकधर्म्म उपदेशक लिखा था, वैसा लिखो। न मैं तुम्हारी वा अन्य सभा का सभासद हूं, किन्तु एक वेदमार्ग को छोड़ के किसी का संगी मैं नहीं हूं इस पर

१. इस बात का संकेत पूर्ण संख्या ५०० पृष्ठ ५५७ पंक्ति १-५ में है।

२. इस का संकेत भी पूर्ण संख्या ५०० पृष्ठ ५५६-५५७ पंक्ति २५-३१, १-२ में है।

भी जब वे शिमले में थे, तब ब्लैवस्टकी ने ऐसी असभ्यता की चिट्ठी लिखी कि जिसको कोई सभ्य स्वीकार न करेगा, क्या यह उनको योग्य था। स्वामी जी ने कभी उनको न लिखा था और न कहा था, उस पर भी इन्होंने स्वयं स्वामी जी का नाम लिख ५ लिया था। क्या यह लज्जा की बात नहीं है?

(७) जो इन्होंने मेरठ में प्रतिज्ञा की थी कि आज से पीछे आर्यसमाज के सभासदों को अपनी सोसाइटी में भरती होने को कभी न कहेंगे, इसी के दो दिन पीछे जब बाबू छेदीलाल अम्बाले तक उनके साथ गये, तब मार्ग में बहुत समझाते गये कि आप १० हमारी सोसाइटी के साथ हूजिये और पत्र शिमले से बाबू जी के पास भेज दिया आप सोसाइटी के सभासद हूजिये।

(८) ऐसी ऐसी छल कपट की बातें देखकर स्वामी जी ने आर्यसमाज मेरठ के वार्षिक उत्सव में व्याख्यान दिया था इनकी सोसाइटी में किसी वेदानुयायी को सभासद होने की कुछ आव- १५ श्यकता नहीं, क्योंकि जैसे नियम आर्यसमाज के हैं वैसे उनकी सोसाइटी के नहीं। इसपर शिमले से मैडम ब्लैवस्टकी ने असभ्यता और झूठ की भरी हुई चिट्ठी लिखी और स्वामी जी ने भी इसका उत्तर यथायोग्य दिया[1]। इसके पश्चात् स्वामी जी ने विचारा था कि जब हम बम्बई में जावेंगे, तब उनसे सब बातों का खुलासा २० कर लेंगे, ऐसा ही आर्यसमाज बम्बई चाहता था। जब स्वामी जी बम्बई में पहुंचे, तब बहुत से सभासद् और करनैल आलकाट साहब भी स्टेशन पर आये थे। जब स्वामीजी स्थान पर आ पहुंचे, पश्चात् उनसे स्वामी जी की बहुत सी बातें हुईं और स्वामी जी ने यह भी विदित कर दिया कि आप से और भी बहुत विषयों में २५ बातें करनी हैं। तब उक्त साहब ने स्पष्ट उत्तर न दिया। जब कुक साहब[2] के विषय में बातचीत करने के लिये स्वामी जी के पास आये तब भी कहा कि आपका और हमारा विचार हो जाना चाहिये था। तब करनैल आलकाट साहब ने कहा था कि हां करेंगे। इस पर भी स्वामी जी ने पानाचन्द आनन्द जी और राव

३० १. देखो पत्र पूर्ण संख्या ५००, पृष्ठ ५५३-५५६।

२. देखो पत्र पूर्ण संख्या ६०६, पृष्ठ ६५१-६५३

बहादुर पं० गोपालराव हरि देशमुख द्वारा कहलाया कि आप लोग मुझ से बातचीत करने को आवें नहीं तो हम को प्रसिद्ध भाषण देना होगा। पानाचन्द आनन्द जी से इन्होंने पूछ के स्वामी जी से कहा कि २७ मार्च ८२[1] को करनेल आलकाट साहब बातचीत करने को आवेंगे, फिर भी न आये। बम्बई से जयपुर पहुँचकर पत्र लिखा कि मैं नहीं आ सका, परन्तु मैडम ब्लैवस्टकी आप से बातचीत कर लेंगी। वह भी नहीं आई॥

तब स्वामी जी का भाषण आर्यसमाज और थियोसोफिकल सोसाइटी के पूर्वापर-विरुद्ध अर्थात् उनकी थियोसोफिकल सोसाइटी का पूर्व क्या सम्बन्ध था, अब क्या है, इस विषय पर व्याख्यान कराने के अर्थ आर्यसमाज बम्बई ने एक दिन पूर्व नोटिस छपवा कर प्रसिद्ध कर दिया तो भी मैडम ब्लैवस्टकी ने स्वामी के पास आकर बातचीत न की, तब स्वामी जी ने भाषण दिया[2]।

इस पर अपने थियोसोफिकल पत्र में लिखते हैं कि हमसे बिना कहे सुने स्वामी जी ने व्याख्यान दिया। क्या यह बात उनकी झूठ नहीं थी। इनमें उनकी चिट्ठियां पढ़ पढ़ाकर सुनाई कि जिसमें उन का पूर्वापर विरुद्ध-व्यवहार प्रकाश किया और यह कहा कि ये लोग कहते हैं कुछ, और करते हैं कुछ। ऐसा कहते हैं कि हम आर्यावर्त देश की उन्नति करने के लिये आये हैं, परन्तु उन्नति के बदले उनके काम अवनति-कारक विदित होते हैं। देखो स्वामी जी ने अनेक बार इस बात के करने से रोका कि तुम थियोसोफिस्ट समाचार में भूत, प्रेत, पिशाच आदि का होना लिखते हो, यह विद्या के विरुद्ध व असम्भव है और जो बातें विद्या से विरुद्ध हैं उनको मत लिखो, क्योंकि यह समाचार इस देश और यूरोप में भी जाता है। सब लोग जान जायेंगे कि आर्यावर्त देश में ऐसी ही व्यर्थ बातों के मानने वाले हैं। इस बात को अब तक नहीं माना और पूर्व पत्रों में लिखा था कि जो आप उपदेश करेंगे सो हम

१. अत: मार्च के अन्त में यह विज्ञापन छपा। पूर्ण संख्या ६४२ का पत्र भी देखें।

२. २८ मार्च सन् १८८२ = चैत्र शुक्ल ९, संवत् १९३९ मंगलवार, ६ बजे सायं व्याख्यान हुआ।

मानेंगे, क्या इस बात को भी कोई सच कर सकता है।

(६) जो पत्र कुक[1] साहब को लिखा था वह करनेल आलकाट साहब ने अपने हाथ से लिखा था और स्वामी जी ने लिखवाया। इस में (Most Divine) अर्थात् कौन सा धर्म अधिक सम्बन्ध ५ ईश्वर से रखता है, यह स्वामी जी के अभिप्राय से विरुद्ध लिखा था। जब उनके गये पश्चात् स्वामी जी ने इस पत्र की नकल बचवाई तो अशुद्ध विदित हुआ, फिर इसपर स्वामीजी के पास करनेल साहब आये और तब वह शब्द कटवा दिया अर्थात् उसके स्थान में ऐसा लिखवाया कि जब आप और मुझ से संवाद होगा तब विदित १० हो जायगा कि कौन धर्म ईश्वर प्रणीत है और कौन सा नहीं। इतने पर भी उन्होंने वैसा ही अशुद्ध छपवाया। क्या ऐसी बात उनको कर्त्तव्य थी? देखो यह उनकी सोसायटी के नियमों में— "थियोसोफिस्ट अर्थात् ईश्वर के मानने वाले, इस सोसायटी में फीस नहीं ली जाती, इस धर्म से कोई धर्म उत्तम न कहना न १५ जानना और सदा क्रिश्चियन धर्म के विरुद्ध रहना चाहिये" जो अजन्मा किसी का बनाया नहीं, जिसने यह सब बनाया है उस ईश्वर को [न] मानना, दस दस रुपये फीस लेना और जिस धर्म का व्याख्यान देते हैं, उसी को सब से उत्तम कहने लग जाते हैं, क्या यह खुशामदी और भाटों की लीला से कम है?

२० अब विशेष लिखना बुद्धिमानों के सामने आवश्यक नहीं। इतने नमूने ही से सब कोई समझ लेंगे। परन्तु इस पत्र के लिखने का यही प्रयोजन है कि उनकी सोसायटी और उनके साथ सम्बन्ध रखने से आर्यावर्त देश और आर्यसमाजों को सिवाय हानि के कुछ लाभ नहीं, क्योंकि इन लोगों का अन्तरीय अभिप्राय क्या है? २५ इसको वे ही जानते होंगे। जो इनका अन्तर ही निष्कपटी होता तो ऐसा पूर्वापर विरुद्ध व्यवहार क्यों करते? जब ये भयङ्कर नास्तिक, वाचाल और स्वार्थी मनुष्य हैं तो आर्यावर्त देश और आर्यसमाजस्थ पुरुषों को उचित है कि इन से सम्बन्ध और देशोन्नति की आशा न रक्खें।

३० देखो और भी थोड़ा सा उनके प्रपञ्च का नमूना—प्रथम

---

१. इन के नाम का पत्र पूर्ण संख्या ६०६ (पृष्ठ ६५१,६५३) पर देखें।

स्वामी जी का नाम लेते थे। जब स्वामी जी उनके जाल में न फंसे तो अब कोटहूमीलाल[1] का नाम लेते हैं जिसको न किसी ने देखा और न पूर्व सुना था। जो कभी उसके नाम से स्वार्थ सिद्ध न होगा तो गोत्र कोटहूमीसिंह[1] नाम शायद लेंगे। अब कहते हैं कि वह हमारे पास आता, बातें और चमत्कार दिखलाता है। देखो इनका ५ यह फोटो ग्राफ (चित्र) है, चिट्ठियां और पुष्प ऊपर से गिरते हैं, खोई हुई वस्तु निकलती हैं इत्यादि सब बातें उनकी झूठ हैं। क्योंकि दूसरी को तो जाने दो, परन्तु जब प्रथम करनेल साहब मैडम के साथ बम्बई में आये थे, तब कुछ वस्त्र आदि की चोरी हुई थी, उसके लिये बहुत सा यत्न पुलिस आदि से कराया था, १० उनको क्यों नहीं मंगा लिया? जब अपने पदार्थ न मंगवा सकें तो शिमले की बात को सच्ची कौन विद्वान् मानेगा।

जब स्वामी जी और मैडम से मेरठ में योग-विषय में बात हुई थी, तब कहा था कि योगशास्त्र और सांख्य की रीति से मैं योग करती हूं; तब स्वामी जी ने उनसे उस शास्त्रोक्त योग की रीति १५ पूछी। तब कुछ भी उत्तर न दे सकीं, अर्थात् जैसे बाजीगर तमाशा करते हैं उसी प्रकार की इनकी भी बातें हैं, जो योग थोड़ा भी करते हैं वह भीतर और बाहर से सरलता का व्यवहार करते हैं न कि छल और कपटयुक्त व्यवहार। जो योगविद्या को कुछ भी जानते तो ईश्वर को न मानकर भयङ्कर नास्तिक क्यों बन जाते। २० इन के योगविद्या के न जानने में ईश्वर का न मानना ही प्रमाण है। इसलिये यही निश्चय है कि इनकी सोसायटी और उसकी पूर्वापर विरुद्ध बातें विश्वास के योग्य नहीं हैं। इसलिये इनसे पृथक् रहना अति उत्तम है।

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु, २५
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।

---

१. इस व्यक्ति के विषय में श्री भाई जवाहरसिंह (लाहौर) का १७ फर्वरी १८८३ का पत्र देखें। इसने लाहौर आर्यसमाज में योगविद्या का अचम्भा दिखाने के लिये अपनी अंगुली कटवा ली थी। भाई जवाहरसिंह का पत्र तीसरे भाग में देखें। ३०

अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः[1] ॥

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६४९] पत्र

मन्त्री आर्यसमाज आनन्दित रहो[2]।

५ थियोसोफिकल सोसायटी के विषय में हमने यहां पत्र छपवाया है[3]। तुम को भेजते हैं। तुम उनको छोटी छोटी समाजों में भेज देना। और जब यह पत्र पहुंचे तो उसका एक व्याख्यान दे दो कि स्वामी जी ने थियोफिसटों से सम्बन्ध विच्छेद कर दिया है।

मार्च मुम्बई

—:o:—

१० [पूर्ण संख्या ६५०] पारसल-सूचना

[श्री नन्दकिशोर जी, जयपुर]

गोरक्षा-सम्बन्धी ५ फार्म।[4]

—:o:—

[पूर्णसंख्या ६५१] पारसल-सूचना

[लाला मूलराज जी एम० ए०]

१५ गोरक्षा-सम्बन्धी फार्म और थियोसोफिस्टों के सम्बन्ध का विज्ञापन।[5]

—:o:—

---

१. यह विज्ञापन आर्यधर्मेन्द्र-जीवन प्रथम संस्करण, पृष्ठ ३४८-३५२ से लिया गया।

२. यह पत्र पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ८४२ (हिन्दी सं० २० पृष्ठ ८७८) पर छपा है यह पत्र थियोसोफिस्टों की गोलमाल पोलपाल के साथ सब आर्यसमाजों को भेजा गया था। २८ से ३१ मार्च तक किस तिथि को छपकर प्रकाशित हुआ, यह ज्ञात नहीं।

३. अर्थात् पूर्ण संख्या ६८४ वाला विज्ञापन।

४. इस पत्र की सूचना अगले पूर्ण संख्या ६५३ के पत्र के अन्त में २५ मिलती है।

५. इस की सूचना पूर्ण संख्या ६५८ के पत्र पृष्ठ ६८८ पं० १४-१५ में मिलती है।

[पूर्ण संख्या ६५२] पत्र-सूचना

[पं० रामाधार वाजपेयी, लखनऊ]

थियोसोफिस्टों के सम्बन्ध में।[1]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६५३] पत्र

Bombay 8th April [1882][2] ५

To

Mr. Nand Kishore Singh,[3]

Dear sir,

I gladly acknowledge the receipt of your letter of the 4th instant. I am very glad to hear that Pandit Kaloo Ram's visit १० to that place was crowned with success. I am also delighted to hear that arrangements have been made for the prevention

---

१. इस पत्र की सूचना रामाधार वाजपेयी के अज्ञात--तिथि के पत्र से मिलती है। यह पत्र सम्भवत: ऋ० द० ने अप्रेल १८८२ के आरम्भ में लिखा होगा। रामाधार वाजपेयी का पत्र तीसरे भाग में देखें। १५

२. वैशाख कृष्ण ५, शनि, सं० १९३९।

३. श्री नन्दकिशोरसिंह जी ठाकुर, मोहन मौहल्ला, कासगंज, संयुक्त प्रान्त के निवासी थे। वे जयपुर कौंसल के मन्त्री रहे। ऋषि दयानन्द सरस्वती से उनका बड़ा प्रेम था। पहले उन्होंने महामहोपाध्याय स्वर्गीय पण्डित शिवदत्त जी की प्रेरणा से हमारे पास प्रतिलिपि भेजी थी। पुन: २० ४ अक्तूबर १९२८ को कासगंज से अपने निम्नलिखित पत्र के साथ सब मूल पत्र भेज दिये।

" ...... स्वामी जी महाराज के जितने पत्र मेरे पास थे, वोह सब इस पत्र के साथ भेजता हूं स्वीकार कर बाधित करें और मेरे योग्य सेवा सर्वदा लिखते रहै मेरी याद बनी रहै कि मैं अब इस संसार में थोड़े ही २५ दिनों का मेहमान हूं।

शुभम्॥ नन्दकिशोरसिंह"

इसके नाम का आगे छापा जा रहा आषाढ़ वदी १०, शनि, सं० १९४० (=३० जून १८८३) का पत्र और उस की टिप्पणी भी देखें।

of cow slaughter in Jeypor. I very much wished that such a work woud well have been done through the interference of a Raja You have certainly well planned that no kine (or oxen or she buffaloes) would be exported from your Raja.
५ The best plan which I would like to recommend in addition to yours, would be the following:—A census so to say, of these animals should be made—that all the cows etc., of the Kingdom should be counted. So also every new animal that is born (or every one that is died) should be reported to the
१० officer-in-charge of the business. This counting ceremony should be made after every six months or so. The reason of this is that in the night time or so is not quite impossible for the cattle to be stolen away.

That you have established an "Arya Dharma Sabha" is
१५ certainly a very praisworthy undertaking, you have effected. I hope will have for its object the welfare of the Aryas and the Unnati of their divine and true Vedic religion I anticipate a great benefit to the country from this Sabha of yours.

२० The cow affair is rapidly proceeding and with utter success. Here in Bombay two thousands of signatures are being taken in favour of the prevention of the slaughter. We mean to banish cow-slaughter not simply form our native states but we mean to apply to the parliament on that act. For this
२५ purpose, we mean to collect signatures of two crores of people. it is also hoped that the Rajas also will be pleased to advise each other in this matter. Pandit Kaloo Ram ji also deserves a great merit in this respect.

As for us we are doing quite well. The work of Veda
३० Bhashya is going on uninterrupted and successfully. The Aryasamajists of Bombay have bought a large piece of ground for the Samaj building, (for Rs. 6,500). And the necessary fund of money (about 12,000 or 15,000) required for the building is also ready.

३५ We have, separately sent to you 5 printed forms with respect to the prevention of cow-slaughter which you will soon receive. All the rules and sub-rules of the Arya Samaj

should be preserved in the Samaj you have successfully established In conclusion I mean to bless you all. Be giving me the necessary information in time.

From the 5 papers we have sent you will understand our plan throughly, Kindly take the signatures of as many men in your Kingdom as you can and keep them with you. We shall require them before long.[1]   ५

[दयानन्द सरस्वती]

[भाषानुवाद][2]

सेवा में –   बम्बई ८ अप्रेल [१८८२][3]   १०

श्री नन्दकिशोर सिंह[4] ।

प्रिय महोदय !

मुझे आपका ४ तारीख का पत्र प्राप्त[5] कर प्रसन्नता हुई। यह सुन कर प्रसन्नता हुई कि पण्डित कालूराम[6] का उस स्थान पर आगमन सफल रहा। मुझे यह जानकर भी प्रसन्नता हुई कि जयपुर में गोवध-निषेध का प्रबन्ध हो गया है। मेरी प्रबल इच्छा थी कि यह कार्य्य किसी राजा द्वारा होता। आपने यह अच्छी योजना बनाई है कि आपके राजा की ओर से गौओं (बैलों या भैंसों) का निर्यात नहीं होगा। आपकी योजना के साथ एक अच्छी सी योजना और जोड़ देना चाहता हूं जो इस प्रकार है—   १५

राज्य की सब गायों आदि की गणना करा दी जाए। प्रत्येक नया पशु जो पैदा हो (या मरे) उसकी सूचना इस कार्य के लिए नियुक्त कर्मचारी के पास भेज दी जाये। यह गणना प्रति ६ मास ७ मास बाद होनी चाहिये।   २०

---

१. इस पत्र का उर्दू अनुवाद पं० लेखराम कृत उर्दू जीवन चरित पृष्ठ ८७८, ८७९ (हिन्दी सं०, पृष्ठ ९३२-९३३) पर छपा है। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।   २५

२. यह भाषानुवाद संस्क० २ में प्रथमबार छापा गया था। यु० मी०

३. वैशाख कृष्ण ५, शनि, सं० १९३९।

४. पृष्ठ ६८३ की टि० ३ भी देखें।

५. यह पत्र हमें नहीं मिला। इस की सूचना मात्र तीसरे भाग में देखें।

६. श्री पं० कालूराम जी के विषय में पूर्ण संख्या ७८, पृष्ठ १०६, टि० ४ देखें।   ३०

इसका कारण यह है कि रात्रि आदि में असंभव नहीं कि पशु चुरा लिये जांय। आपने जो 'आर्यधर्मसभा' की स्थापना की है; वह निश्चित ही एक प्रशंसनीय कार्य है। मैं आशा करता हूं कि इसका उद्देश्य आर्यों का कल्याण और उनके ईश्वरीय तथा सत्य वैदिक धर्म की उन्नति होगी। मैं ५ आशा करता हूं कि आपकी इस सभा से देश का बड़ा भारी लाभ होगा।

गौओं का मामला बड़ी तेजी से और सबलता से आगे बढ़ रहा है। यहां बम्बई में दो हजार हस्ताक्षर गोवध-निषेध के विषय में करवाये जा रहे हैं। हम न केवल देशी राज्यों में ही गोवध बन्द कराना चाहते हैं, अपितु इस कार्य के लिए पार्लियामेन्ट से भी निवेदन करना चाहते हैं। १० इस कार्य के लिए हम दो करोड़ आदमियों के हस्ताक्षर चाहते हैं। मुझे यह आशा है कि राजा लोग परस्पर एक दूसरे को सम्मति देंगे। इस मामले में पण्डित कालूराम जी भी प्रशंसा के पात्र हैं। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, ठीक चल रहा है। वेदभाष्य का कार्य निर्विघ्न और सफलता पूर्वक चल रहा है। बम्बई के आर्यसमाजियों ने समाज-मन्दिर के लिए १५ ६५००) में एक भूमी खरीदी है। और मन्दिर के लिए अपेक्षित आवश्यक धन की राशी १२०००) से १५०००) भी है।

हमने गोवध-निषेध के सम्बन्ध में छपे हुऐ ५ फार्म[1] अलग भेजे हैं जो आपको शीघ्र प्राप्त होंगे। आर्यसमाज के साथ नियम और उपनियम उस आर्यसमाज में सुरक्षित रहने चाहिये जिसकी आपने सफलता पूर्वक स्थापना २० की है। अन्त में मैं आप सब लोगों को आशीर्वाद देता हूं। ठीक समय पर आवश्यक सूचना देते रहियेगा।

पांच फार्मों[1] से, जो हमने भेजे हैं, आप हमारी योजना पूर्ण रूप से समझ जावेंगे। कृपया अपने राज्य में जितने हस्ताक्षर आप करा सकें करायें और उन्हें आप अपने पास रखिए, हमें उन की शीघ्र आवश्यकता २५ होगी।

दयानन्द सरस्वती

:o:

---

१. गोरक्षा सम्बन्धी दो फार्म पूर्ण संख्या ६२८, ६२९ पृष्ठ ६६३-६६५ पर छपे हैं। शेष तीन फार्म कौन से छपाये थे, यह अज्ञात है। सम्भव है गोरक्षा-सम्बन्धी फार्मों की पांच प्रतियां यहां अभिप्रेत हों।

[पूर्ण संख्या ६५४] पत्र-सूचना

[पं० सुन्दरलाल जी, प्रयाग][1]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६५५] पारसल-सूचना

[पं० दयाराम, प्रयाग]

यजुर्वेदभाष्य अ० १४ के पृष्ठ ४१६-४४७ तक।[2] ५

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६५६] पारसल-सूचना

[लाला कालीचरण जी, फर्रुखाबाद]

जगन्नाथ की प्रश्नोत्तरी का खण्डन।[3]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६५७] पत्र-सूचना

[पं० भीमसेन, प्रयाग] १०

काम सावधानता से करने के विषय में।[4]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६५८] पत्र

लाला मूलराज जी एमे आनन्दित रहो।[5]

आपके दो पत्र आये। उत्तर इसलिये नहीं भेजा कि इस बात का पत्र कोई मसूदा वालों ने हमारे पास नहीं भेजा। अब उनका १५

---

१. पं० सुन्दरलाल ने १ जून १८८३ के पत्र में ऋ० द० के कई पत्र आने का उल्लेख किया है। उसके आधार पर यह एक पत्र-सूचना छाप रहे हैं। पं० सुन्दरलाल का पत्र तीसरे भाग में देखें।

२. इस की सूचना पं० भीमसेन के ४ मई १८८२ के पत्र से मिलती है। पं० भीमसेन का पत्र तीसरे भाग में देखें। २०

३. इस की सूचना आगे पूर्ण संख्या ६७५ के पत्र में है। उसके लेख से प्रतीत होता है कि यह प्रश्नोत्तरी का उत्तर अप्रेल के अन्त तक भेजा जा चुका था। यह उत्तर आगे 'समीक्षा' शीर्षक से पूर्ण संख्या ६६३ पर छापा जा रहा है। यह 'देशहितैषी' पत्र (अजमेर) में छपा था।

४. इस की सूचना पं० भीमसेन के ४ मई १८८२ के पत्र से मिलती है। २५ भीमसेन का पत्र तीसरे भाग में देखें।

५. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

पत्र आवेगा तो उस बात का जवाब आप को लिखेंगे। और आप जो उस बाबू .... को रखना चाहते हैं परीक्षा करली होगी कि कैसा शील स्वभाव का है। क्यों कि प्रायः ... . लोगों का स्वभाव तेज और कठोर भक्ष्याभक्ष्य में अनाचरी और लोभी भी ५ होते हैं। और राजवाड़ों में इन बातों का बड़ा विरोध है। अब हम इस विषय का पत्र मसूदा को भेजेंगे। जो हमारे पत्र का उत्तर न आया तो आपके पास कुछ उत्तर न भेजेंगे। पश्चात् जब कभी हम मसूदे को जायंगे तब उसका विचार होगा। आप जानते हैं कि रजवाड़ों का लखोटिया ज्ञान है अर्थात् जब तक अग्नि के सामने रहैं तब तक १० पिघले रहते हैं। तथापि हम पत्र भेज कर खबर मंगवावेंगे। बड़े भारी शोक की बात है कि आप ने अब तक गोकरुणानिधि की अङ्गरेजी नहीं की। हमने हमें (?) निरास होकर यहां मुम्बई में और लोगों से अङ्गरेजी बनवानी पड़ी अब आप उसमें कुछ मत बनाना। मालूम होता है कि आप के ऊपर बहुत कुछ बोझ पड़ १५ गया, इस कारण ढीले हो गये। आप के पास गोरक्षा और थियोसोफिष्टों के पूर्वापर विरुद्धाचर[ण] करने के विषय का भी पत्र[1] पहुंचा होगा। अब इनसे सम्बन्ध तोड़ दिया है। सब से हमारा नमस्ते कह दीजियेगा।

मिति वैशाख शुदी ११ शनि सम्वत् १९३९[2]।

२० मम्बई बालकेश्वर

[द० स०]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६५९] पत्र

लाला जीवनदास जी आनन्दित रहो[3]।

पत्र आप का आया समाचार विदित हुआ। यहां पारसी खत २५ पढ़ने वाले बहुत कम हैं इङ्गलिश के पाठक बहुत हैं। इस लिये जब कभी लिखें तब नागरी वा इंगरेजी में लिखें। इस पत्र का मतलब

१. गोरक्षा सम्बन्धी पूर्ण संख्या ६२८-६२९, पृष्ठ ६६३-६६५। थियोसोफिस्ट सम्बन्धी पूर्ण संख्या ६४८, पृष्ठ ६७५-६८२।

२. ता० २९ एप्रिल, सन् १८८२।

३० ३. यह पत्र महा० मुंशीराम सम्पा० पत्रव्यवहार पृ० ४५८-४५९ पर छपा है। उन्होंने पत्र की प्रतिलिपि से ही छापा था।

हम ठीक ठीक नहीं समझते हैं। जितना समझा है उतने का उत्तर लिखा जाता है। (सूद) शब्द का अर्थ जो रसोई करने वालों का है। यही अर्थ अन्यत्र सूत्रादि[1] में भी है। पाककर्त्ता का कोई दृढ़ निश्चय नहीं हो सकता, क्योंकि पाचक सब वर्ण में होते हैं। अब तो इसमें सनातन का व्यवहार ही प्रमाण हो सकता है। जो आप लोगों में यज्ञोपवीत होता और धरावट अर्थात् विधवा को पुनः दूसरे के घर बैठाना नहीं होता तो शूद्र वर्ण में गणना आप लोगों की नहीं। अब यह विचारना चाहिये कि (सूद) लोग क्षत्रिय हैं अथवा वैश्य। जो राजधर्म राज्य करना आप के पुरुष शौर्यादि गुणयुक्त, युद्ध में कौशल वाले हुए हों तो क्षत्रिय और वैश्य के व्यापारादि कर्म और गुण हों तो वैश्य समझना चाहिये। अब आप लोग ही इसका निश्चय कर लीजिये।

और जो कभी (सूत) शब्द विगण[2] के सूद हो गया हो तो आप अवश्य क्षत्रिय वर्ण हैं। हमने सुना है कि आज कल बाबू नवीनचन्द्रराय लाहौर में हैं और विधवा विवाह में प्रयत्न कर रहे हैं और आर्यसमाज लाहौर भी इस बात में बाबू जी से संमत हो गया है। ये ब्रह्मसमाजी लोग भीतर और तथा बाहिर और बात रखते हैं। इस का यह भी मतलब होता है कि जैसे हम लोग क्रिश्चनों के तुल्य अपमानित हुए हैं वैसे आर्यसमाज भी हो जाय, परन्तु जो अक्षतयोनि अर्थात् जिस का पुरुष के साथ कभी संयोग न हुआ हो उस कन्या के पुनर्विवाह करने में कुछ दोष नहीं, जिस का पुरुष से संमेल हुआ हो उस का नियोग करने में अपराध नहीं। इस से विपरीत करने से शास्त्र से विरुद्ध होने से अब अथवा पश्चात् बहुत कष्ट भोगना पड़ेगा अर्थात् वर्ण बाह्य होना होवे तो भी कुछ संशय नहीं। सब से मेरा आशीर्वाद कहियेगा[3]।

—:०:—

१. यहां कल्पसूत्रान्तर्गत धर्मसूत्रों से अभिप्राय प्रतीत होता है।

२. अर्थात् 'बिगड़ के'।

३. हमारा अनुमान है कि पत्र मुम्बई से भेजा गया था। वहीं "फारसी खत पढ़नेवाले बहुत कम" थे। प्रतिलिपि पर हस्ताक्षर तथा तिथि नहीं थी।

[पूर्ण संख्या ६६०] पत्र-सारांश

[पं० सुन्दरलाल जी, प्रयाग]

टाइप के लिये सीसा भेजने का प्रबन्ध यहां (=मुम्बई) से किया है ।[1]

—:०:—

५ [पूर्ण संख्या ६६१] पत्र

लाला कालीचरण जी आनन्दित रहो ।[2]

विदित हो कि पत्र तुम्हा[रा] आया। समाचार मालूम हुए। थियोसोफिष्टों की गोलमाल पोलपाल पत्र[3] के छपवाने [में] कुछ चिन्ता नहीं। क्योंकि जो जो उसमें बात लिखी हैं वे सब सच्ची हैं।
१० अवश्य छपवा दीजिये। जो लाला रामशरणदास ने लिखा है वह ठीक है। छपवाना ही चाहिये। उसमें जो कुछ लिखा गया है वह विचार पूर्वक सच्ची बातें लिखी हैं। जो ऐसा न हो तो हम यहां व्याख्यान क्यों देते[4]। और इसको क्यों छपवाते। छपवाने में कुछ हानि नहीं, किन्तु लाभ ही है। जो यह बात गोलमाल रखी जाती
१५ तो आर्यावर्त्त में नास्तिक मत फैल जाता। अपने साथ इनने मेल भी इसी प्रयोजन से किया था कि हमारा प्रवेश इस देश में हो जाय। इतना इनमें अच्छा गुण है कि वेद की बड़ाई और ईसाइयों का खण्डन करते हैं। यह भी जो स्थिर रहै तो। जो यह भी कपट हो तो क्या [पता]। जो इनका प्रसिद्धि व्यवहार है वह भीतर का
२० नहीं। इनके सम्बन्ध से जो कोई बुरी बात निकलती तो बहुत

---

१. पण्डित सुन्दरलाल जी ने [१० मई १८८२] के पत्र में 'दो पत्र' प्राप्त होने का उल्लेख किया है। एक पत्र पूर्ण संख्या ६४४ (पृष्ठ ६७२) पर छाप चुके हैं। दूसरा पत्र जिस में 'सीसे का प्रबन्ध करने का' उल्लेख था, वह प्राप्त नहीं हुआ। उसका यहां निर्देश किया है। प० सुन्दरलाल जी
२५ का पत्र तीसरे भाग में देखें।

२. मूल पत्र फर्रुखाबाद आर्यसमाज में है। उसकी प्रतिलिपि म० मामराज ने दिसम्बर सन् १९२६ में की। फर्रुखाबाद का इतिहास पृ० १६१ पर भी छपा है।

३. पूर्ण संख्या ६४८ का।

३० ४. देखो पूर्ण संख्या ६४२ (पृष्ठ ६७२) का पत्र।

धक्का आर्यसमाज को पहुंचता। और इन लोगों ने कई एक भोले भाले आर्यसमाजस्थों को बहका कर अपने सभासद कर लिये और दश रुपये फी[1] दश लिये। अब इनको कपटरूपी बातों के प्रसिद्ध होने पर उनकी आंख खुली कि ओहो ये ऐसे निकले अर्थात् विचारों को पश्चात्ताप करना पड़ा। ऐसे ही अन्य लोगों को भी जो कि आर्यसमाज में नहीं थे। यही उन लोगों के मुख से बात निकली कि वृथा ही हमारे दश दश रुपये फी[1] देने में गये॥ सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।　५

मई ता० १ सन् १८८२ ई०[2]।

[द० स०]　१०

(मम्बई बालकेश्वर गोशाला)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६६२]　　पत्र

ओ३म्

पण्डित दयाराम आनन्दित रहो[3]।

तुमने यह अंग्रेजी चिट्ठी यहां क्यों भेजी, जो कि थियोसोफिष्ट के विषय की थी। और तुमने लिखा है कि मैं भूल गया इसलिये दूसरा रजिष्टर अभी किया। यह क्या बात है? और वह रजष्टर अभी तक नहीं पहुंचा। और आज तक वेदभाष्य और मासिक हिसाब नहीं पहुंचा और यहां मम्बई में सर्वत्र आयगा, यह क्या कारण है। भीमसेन से कह देना कि भाषा के पत्र जल्दी भेजदे। सीसा सुर्मा स्याही तुम्हारे पास पहुंची वा नहीं? पहुंच गये हों तो हर्फ ढालके जल्दी काम चलाओ। आर्य पत्र का नोटिस भेजते[4] हैं टाइटल पेज पर छापदो। जितने पत्रे भीमसेन के पास भेजे थे, उन सब की भाषा बन चुकी वा नहीं।　१५　२०

---

१. अर्थात फीस।　२५

२. वैशाख शु० १३, सोम, सं० १९३९।

३. मूल पत्र परोपकारणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

४. इस विषय में पूर्ण संख्या ६४४, पृष्ठ ६७२ की टिप्पणी ५ देखें।

मिति जेष्ठ वदी ६ सम्वत् १९३९[1]

[द० स०]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६६३] पत्र

ओ३म्[2]

५ महाशय रूपसिंह जी योग्य इत: ब्रह्मचारी रामानन्द का अनेकविध शुभाशीर्वाद विदित हो। आपका कुशलपत्र आया, समाचार विदित हुए।

आपने जो सत्यार्थप्रकाश संस्कारविधि के विषय में लिखा, परन्तु यहां मेरे पास न होने से भेजने में अशक्य हूं। जो छापेखाने १० प्रयाग में होती तो भी मैनेजर दयाराम को लिख कर भेजवा देता और जो उस पुरुष को अत्यावश्यक हो तो आप मेरठ आर्यसमाज प्रधान लाला रामशरणदास के पास दाम भेज कर पुस्तक मंगवा लीजिये। अनुमान है कि वहां से पुस्तक आप को अवश्य मिल जायंगी। जो आपने गोरक्षार्थ पत्र के बाबत में लिखा सो हम ने १५ जिस समय आपके पास पत्र भेजा था, उसी समय लाहोरादि स्थानों में पत्र भेज दिये थे। **ऐसा आर्य्यावर्त्त के भीतर कोई देश बचा हो कि जहां दो चार स्थानों में पत्र न भेजे हों। और जहां जहां की यादगारी आती जाती वहां वहां अभी भेजते जाते हैं।** इस में कारण यह हुआ है कि **डांक वालों ने अनर्थ किया है।** जैसा इस २० विषय में आप का पत्र आया ऐसे ही कई एक महाशयों के पत्र आये कि पत्र पहुंचा, परन्तु गोरक्षार्थ का मेमोरियल[3] नहीं मिला। पुन: उन महाशयों के पास भेजना पड़ा। ईश्वर से ऐसी प्रार्थना करता हूं कि इस महोपकार कार्य करने में आप को अत्यन्त सहायता मिले और जो पत्रों की आपको आवश्यकता पड़े तो लिखना, २५ भेज दूंगा। मैं एक बात आप से कहता हूं कि जो आप प्रसन्नता से स्वीकार करें तो। क्या जैसे आप पहिले घूमने के वास्ते दो मास

---

१. ९ मई, १८८२।

२. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. सम्भवत: संख्या ६२८, ६२९ के गोरक्षा सम्बन्धी फर्मों से यहां ३० अभिप्राय है।

की छुट्टी लेकर आये थे ऐसे ही आप पुनः दो एक मास की छुट्टी लेकर पंजाब हाथा, पटियाला और काश्मीर आदि अच्छे अच्छे राजस्थानों में गोवध के नुकसान व्याख्यान द्वारा विदित कर, बड़े बड़े प्रधान राजपुरुष तथा राजा महाराजों की सही करावें तो बस आप आर्यावर्त्त में सर्वोत्तम प्रतिष्ठा और महापुण्य के भागी होंगे। यह लेख मैंने आपकी योग्यता समझ के लिखा। आशा है कि आप अपनी योग्यता को सफल करेंगे॥ किमधिकलेखेन बुद्धिमद्वर्य्येषु॥ अब १५ वा २० दिन में श्रीयुत स्वामी जी यात्रा करेंगे। विशेष समाचार लिखूंगा॥

आप का अभिवादन परम गुरु स्वामी जी को विदित कर दिया। श्री स्वामी जी का शुभाशीर्वाद आप को विदित हो॥ भद्रमस्तु॥

ज्येष्ठ वदी ९ शुक्र संवत् १९३८[1]॥　　　　ब्रह्मचारी रामानन्द

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६६४]　　　　पत्र

ओ३म्

पण्डित सुन्दरलाल जी आनन्दित रहो[2]!

विदित हो कि सीसा स्याही आदि दो तीन दिन हुए हैं रमाना हो गये। आज बिल्टी भी रमाना हो गई। उनसे जैसे अक्षर आप को चाहिये। वैसे ढलवा कर जल्दी काम चलाइये। श्याही बहुत सी भेजी है, तुम को आठ दश महीने को बहुत होगी। जो तुमने ज्वालाप्रसाद के विषय में लिखा सो ठीक है। उसको बुलाकर काम सिखला दो और भीमसेन से कहो कि व्याकरण की पुस्तक लिखकर शुद्ध कर तैयार कर दे। लाहोर ८।३।१८८२ ई० निम्नलिखित पुस्तक लाला बल्लभदास के पास से वैदिक यन्त्रालय प्रयाग में पहुंची। ता० १९ फरवरी सन् १८८१ को सन्दूक नग ३ में पुस्तकें बन्द करके लाहोर से मारफत रेल रवाना किया। महसूल

---

१. संवत् १९३८ गुजराती है। संवत् १९३९ चाहिये। १२ मई १८८२। परन्तु उस दिन ज्येष्ठ बदी १० है। इस पत्र का लिफाफा १६ मई को कोहाट पहुंचा। उस पर ऐसी ही मोहर है।

२. मूल पत्र परोपकारिणी सभा में सुरक्षित है।

बेरंग था। उसमें इस भांति पुस्तकें भेजी गईं —

३८ जिल्द आर्याभिविनय
३० ,, वेदविरुद्धमतखण्डन
३१ ,, शिक्षापत्रीध्वान्तनि०
१० ,, वेदान्तध्वान्तिनिवारण
१३११ ,, सन्ध्याभाष्य अर्थात् पंच०
२५१ ,, पोपलीला[1]
१३६ ,, जालन्धर की बहस[2]
१९ ,, वेदभाष्यभूमिका इस भांति अंक

०	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१३	१४	१५-१६
३	१	१	२	२	१	१	१	१	१	१	१	१	२

१८५ ,, ऋग्वेद अंक

१	२	३	४	५	६
२८	३०	३२	३१	३१	३३

१८९ ,, यजुर्वेद अंक

१	२	३	४	५	६
३१	३३	२८	३१	३३	३३

३४३५ ,, आर्योद्देश्यरत्नमाला
२८ ,, सत्यासत्यविचार[3]

और बहियां हिसाब की और हिसाब

ता० १३ मई सन् १८८२ ई०[4]

यजुर्वेद के भाषा के पत्रे, यजुर्वेद अंक गोकरुणानिधि और मासिक हिसाब पहुंचा।

[दयानन्द सरस्वती]

—:०:—

१. इस के लिये हमारा "ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास" परिशिष्ट ५, पृ० ८२-८४ देखें।

२. देखो ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास पृ० १८३। यह शास्त्रार्थ एक मौलवी के साथ लिखित रूप में हुआ था। इसे रा० ला० कपूर ट्रस्ट ने 'ऋषि दयानन्द के शास्त्रार्थ-संग्रह में' छापा है।

३. लीलाधर हरिदास ठाकर बम्बई निवासीकृत। देखो हमारा ऋ०द० ग्रन्थेतिहास, परिशिष्ट ५, पृष्ठ ८४, ८५।

४. ज्येष्ठ कृष्ण ११, शनि, सं० १९३९।

[पूर्ण संख्या ६६५] पत्र

ओ३म्

राजा दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो[1]।

पत्र आप का आया, समाचार विदित हुआ। हम बहुत आनन्द में हैं। आशा है कि आप लोग भी आनन्द में होंगे। यहां से हमारा विचार ज्येष्ठ शुदि पौर्णमासी के पश्चात् और आषाढ़ वदी ३० के पूर्व पूर्व इन्दोर की ओर यात्रा करने का है। क्योंकि महाराजे इन्दोर ने मुझ को बुलाने इन्दोर से तार भेजा था। इस समय वे पहाड़ को गये। १५ वा २० दिन इन्दोर में आ जायंगे। तब तक हम भी पहुंचेंगे। वहां से आंब भेजने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि यहां मुम्बई में आपुस और पारी संज्ञक आंब बहुत उत्तम होते हैं। जो न होते तो वहां से आना अवश्य होता। यहां डेढ़ महीने से आंब खाया करते हैं। आज आंबरस भी बहुत सा बना।

लाला कालीचरण से कह दीजियेगा कि अगले महीने में भा० सु० प्र० का नोटिस[2] वेदभाष्य पर छप जायगा॥

सब से हमारा आशीर्वाद कह दीजियेगा॥
ज्येष्ठ शुदी ६ मंगल सम्वत् १९३९[3]।
[द० स०] (मुम्बई)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६६६] पत्रांश

ओ३म्

बाबू नन्दकिशोरसिंह जी आनन्दित रहो[4]।

पत्र तुम्हारा आया, समाचार विदित हुए। जो वहां शास्त्रार्थ विषय में लिखा सो आप निश्चय जानों वे हम से शास्त्रार्थ सन्मुख

---

१. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में है। इस की प्रतिलिपि दिसम्बर सन् २६ में मामराज ने की। फर्रुखाबाद का इतिहास पृ० २१९ पर भी छपा है।

२. देखो पूर्ण संख्या ६६७ (पृष्ठ ६६७)।

३. २३ मई सन् १८८२ मंगलवार।

४. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। श्री स्वामी जी ने लाल रंग से कहीं-कहीं शोधा है।

आके कभी न करेंगे। देखो दो तीन बार हम जयपुर में आये और प्रसिद्धि भी कर दी कि जिस पण्डित का जिस जिस विषय में शास्त्रार्थ करना हो सन्मुख आकर करे। परन्तु कोई भी न आया, न किसी ने शास्त्रार्थ किया। अब रहा वहां आने का, उस की यह ५ बात है कि जो श्रीमान् महाराजा जी के हस्ताक्षर का पत्र आवेगा तो आना हो सकता है अथवा वहां जो सब में अधिक विद्वान् हो उस का रेल खर्च देकर और दो एक अच्छे उत्तम पुरुष पक्षपात रहित हों साक्षी के वास्ते जहां हम हों वहां लेकर चले आइये अथवा जहां होंगे वहां से ही अच्छे योग्य पुरुषों को साक्षी करके १० जो जो शास्त्रार्थ की बातें होंगी वे सब लिखी जायंगी। पुनः पत्र द्वारा श्रीमान् महाराजा[1] जी को विदित कर दिई जायगी और छपवा कर भी प्रसिद्ध भी होंगी। जिससे सब लोगों को सत्यासत्य विदित हो जाय। यह राजाओं का मुख्य धर्म है कि शास्त्रार्थ कर कराके सत्यासत्य का निश्चय करना औरों को कराना। **देखो बड़े १५ शोक की बात है कि जयपुर में अनेक गिरजाघर बन गये और पादरी लोग राम कृष्णादि भद्र पुरुषों की निरन्तर निंदा करते हैं और सैकड़हों को बहका कर भ्रष्ट कर रहे हैं। उनके हटाने को पण्डित वा राजा आदि राजपुरुषों ने कुछ भी प्रयत्न न किया। और जो आप लोगों ने सत्य वेद धर्म की उन्नति होने के वास्ते २० समाज स्थापित किया है उसकी उन्नति होने में पण्डित आदि विघ्नकर्त्ता होते हैं।** इतने ही से तुम समझ लो कि ये क्या शास्त्रार्थ करेंगे सिवाय परोक्ष में गाल बजाने के। जो कोई तुम से शास्त्रार्थ करने की बात कहे उसको तुम इतना ही उत्तर दो कि लो खर्च आने जाने का हम देते हैं, चलो हमारे साथ स्वामी जी २५ पास शास्त्रार्थ करने को, अथवा तुम राजा जी से प्रवन्ध कराओ स्वामी जी के बुलाने के वास्ते, हमारे बुलाने से तो आ नहीं सकते। किसी प्रधान पुरुष वा रा[जा] जी की संमति से बुलाइये और शास्त्र[ार्थ] कर सत्य का प्रतिपादन **और असत्य का खण्डन कीजिये। हम तो इस में बहुत प्रसन्न हैं,** जो कोई स्वामी जी से शास्त्रार्थ करें तो, क्योंकि हम को भी मालूम हो जायगा कि क्या ३० सत्य है और क्या झूठ॥

---

१. अर्थात् जयपुर के महाराजा।

आप भद्र पुरुष लोग इस वेदोक्त सत्यधर्म के विषय में उत्साह पूर्वक दृढ़ निश्चित रहेंगे तो इस समाज की उन्नति करके संसार को फायदा पहुंचा सकोगे, अन्यथा वहां उन्नति को प्राप्त होकर फल-प्राप्ति पर्य्यन्त पहुंचना कठिन है। क्योंकि वहां बड़े बड़े धूर्त्त लोग हैं। तथापि जो मूर्ख लोग अपनी बुराई को नहीं छोड़ते तो बुद्धिमान् धर्मात्मा लोग अपनी धर्मात्मता को क्यों छोड़ कर दुःख सागर में पड़ें। देखिये—

(निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः)॥

यह कवि का श्लोक है विचार लीजिये।
मि० ज्ये० शु० १४ बुध सं० १९३९।'

[दयानन्द सरस्वती]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६६७]   विज्ञापन[1]

सब सज्जन लोगों को विदित हो कि एक भारतसुदशाप्रवर्त्तक नाम का पत्र सनातन वेदोक्त धर्म विषयक व्याख्यान नाटक[3] तथा सत्योपदेशों से सुभूषित हो के प्रतिमास निकलता है जिस किसी को उसके ग्रहण की इच्छा हो वह लाला कालीचरण रामचरण मन्त्री आर्य्यसमाज फर्रुखाबाद के पास लिख के मंगवा लेवें उस का वार्षिक मूल्य कम है अग्रिम १≡) डाक व्यय समेत

---

१. ३१ मई १८८२। मुम्बई से जयपुर भेजा गया।

२. यह विज्ञापन ऋग्वेदभाष्य अंक ३८, ३९ (सम्मिलित) ज्येष्ठ शुक्ल १४ सं०१९३९ (= ३१ मई १८८२)टाइटल पेज ४ तथा ऋग्वेदभाष्य अङ्क ४२-४३ सम्मिलित (आश्विन कृष्ण १९३९ के)टाइटल पेज ३ पर ऋ. द. के हस्ताक्षर के बिना छपा है। पू० सं० ६६५ पृष्ठ ६९५ के पत्र में इस विज्ञापन को छापने का आदेश दिया है।

३. नाटक के विषय में अगले १६ अक्टूबर १८८२ के पूर्ण संख्या ७२३, ७२४ तथा मार्ग० वदी १४, सं० १९३९ (=९ दिसम्बर १८८२) के पूर्ण सं० ७३१ के पत्र देखें।

पश्चात् देने से २≡) हैं और इतने पर भी विशेष यह है कि जो कुछ बचता है वह संस्कृत और देश की उन्नति में लगाया जाता है ॥ (ह० दयानन्द सरस्वती)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६६८] गुजराती पत्र

५ ओ३म्[1]

आर्यसमाज मुंबई
ता० ५ मी जून १८८२[2]

मित्रवर ठाकोरदास मूलराज जोग, मुंबई

यत आपे जे जेठ सुद १५[3] ने दीने श्रीमत् पंडित दयानन्द
१० सरस्वती स्वामी ने पोस्ट कार्ड लख्यो हतो तेना प्रत्युत्तरमां जणाववामां आवेछे के जो कोई आपना मतनो ज्ञाता तथा धर्मोपदेशक विद्वान् प्रतिज्ञा पूर्वक नियम थी शास्त्रार्थ करवाने तत्पर होय तो स्वामी जी ने शास्त्रार्थ करवाने कोई पण प्रकारे अडचण न थी, मात्र व्यवस्था घटती रेहेवी जोइये, तेथी आपनी जो सत्यासत्य
१५ निर्णय कराववानी इच्छा होय तो आपना मतनो कोई विद्वान् माननीय धर्मोपदेशक साथे नक्की करी महने लखी जणावशो तो हमें तूर्त घटती व्यवस्था करी आपने विदित करशुं, परंतु ए बाबत ढील न थवी जोइए केम के स्वामी जी थोड़ा दाहाडामां जनार छेत गयवाद सघलो श्रम व्यर्थ जशे तेथी त्रण दिवसनी अंदर कृपा
२० करी लखी मोकलशी अने जो ए प्रकारे करवानी आपनी इच्छा न होय तो हमारे आपने दलगिरी साथे लखवुं पडेछे के स्वामी जी जे एने मली खुलासो लेवा आवेछे तेनी सांजना ५ थी ६ वागता सुधी प्रतिदिन मुलाकात लेयछे, त्यां जो आप जवा चाहो तो कृपाकरी महने लखी जणावशो तों हुं पणते वखते हाजर रहीश, हालतो अेज
२५ विनति।

हुं छु आपनो सेवक
सेवकलाल करसनदास
मन्त्री आर्यसमाज मुंबई
जगजीवन कीका स्ट्रीट घर नंबर ६१

—:०:—

१. दयानन्द सरस्वती मुखचपेटिका, प्रथम भाग पृ० ४०-४१ ।

३० २. आषाढ़ कृ० ४, सोम, सं० १९३९ । ३. १ जून, १८८२ ।

[पूर्ण संख्या ६६९] पत्र

लाला कालीचरण जी आनन्दित रहो[1]। फर्रुखाबाद

विदित हो कि प्रयाग में दयाराम मैनेजर हैं। उससे अकेले से काम बहुत होने के कारण से ठीक नहीं चल सकता। इस लिये पंडत सुन्दरलाल जी लिखते हैं कि द० रा० के पास एक सहायक और रखना चाहिये। इस लिये आप को लिखते हैं कि एक प्रामाणिक पुरुष तीन भाषा जाननेवाला कि जिस का आप को बड़ा विश्वास हो वहां भेजें। ऐसा पुरुष तलाश कर के आप हमको और पंडित सुन्दरलाल जी को भी [इस] विषय में लिखें। उसका मासिक १५) रु० वा २०) रु० वा जितना आप योग्य समझें करें। परन्तु काम बहुत ठीक होना चाहिये। पंडित सुन्दरलाल जी अन्डमान एक मास तक ब्रह्मा के मुल्क को जाने वाले हैं। इसलिये उनके सामने ही उस पुरुष का वहां पहुंच जाना चाहिये। वह पुरुष सदैव के लिये वहां रहना चाहिये। यह नहीं कि थोड़े दिन के लिये रहे। आपका समाज प्रयाग से निकट है। इस लिये आप लोगों में से कोई कोई मा[स द]ो मास से प्रयाग जाकर देख आया करें तो ठीक प्रबन्ध रहे। परन्तु वहां जाना पं० सुन्दरलाल जी न हों तब जाना जाहिये। और जब वे हों तब कुच्छ जरूरत नहीं। सब से हमारा आशीर्वाद कहना। पत्र का उत्तर शीघ्र देना चाहिये।[2]

हस्ताक्षर
[दयानन्द सरस्वती]
मुम्बई बालकेश्वर

ता० ९ जून स० १८८२[3]।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६७०] पत्र-सारांश

[खंडेराव पाण्डुरंग, खण्डवा]

हम बम्बई से आते हुए खण्डवा ठहरेंगे, स्थान का प्रबन्ध

---

१. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में है। दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज ने इस की प्रतिलिपि की। फर्रुखाबाद का इतिहास पृष्ठ १९२ पर भी कुछ पाठ भेद के साथ छापा है।

२ पत्र के नीचे कुछ पंक्तियां समर्थदानजी ने अपनी ओर से लिख दी हैं।

३. आषाढ़ कृष्ण ८, शुक्र, १९३९।

करें।[1]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६७१] पत्र

पंडित सुन्दरलाल जी आनन्दित रहो।[2]

प्रयाग

५ विदित हो कि हम यहां से ता० १४ जून बुधवार[3] दिन सायं-
काल यहां से रेल में बैठकर बृहस्पति के दिन अनुमान १० बजे
खण्डवे पहुंचेंगे। अब पीछे पत्रि आदि खण्डवे को भेजा करें। दूसरे
मैनेजर के लिये हमने फर्रुखाबाद को लिख दिया है[4]। उत्तर जैसा
आवेगा वैसा आपको लिखेंगे।'अव्ययार्थ' को छपे बहुत दिन हो गये
१० हैं परन्तु उसका विज्ञापन वेदभाष्य[पर]अभी तक नहीं दिया गया है
सो यह दयाराम की कितनी भूल है। अब तत्काल दिलवावो। हमने
भीमसेन के शोधे भये पुस्तक देखे तो बहुत भूल निकलती है। इससे
ज्ञात होता है कि वह बड़ा गाफिल है। अब पीछे आप उसका
मासिक पूरा प्रतिमास न दिया करें कुछ न्यून दिया करें अर्थात्
१५ दश बीश रुपये अपने में उसके रखने चाहिये। जिससे कि वह काम
अच्छा किया करे। नीचे लिखे नाम के छः रुपयों की रसीद छाप
देना गत वर्ष की—

कवि कृश्नाराम इच्छाराम ग्राम "खरसाज" जिला सूरत ६)

नीचे लिखे धर्मार्थ छाप दो।

२० चौधरी जालिमसिंह ग्राम रुपधनी जिला एटा २०)

---

१. इस पत्र की सूचना खंडेराव के १७ जून १८८२ के पत्र से मिलती है। इसी पत्र में ४ दिन पहले इस पत्र का उत्तर देने का उल्लेख है। अत: यह पत्र खण्डेराव ने १० या ११ जून को बम्बई भेजा होगा। खंडेराव का १७ जून १८८२ का पत्र भी तीसरे भाग में देखें।

२५ २. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है। इस पत्र का कुछ भाग दयानन्दग्रन्थमाला शताब्दी संस्करण की भूमिका पृष्ठ १८ पर भी छपा है।

३. आषाढ़ कृष्ण १४, सं० १९३९। अगले पूर्णसंख्या ६७६ पृष्ठ ७०४ की टिप्पणी ३ देखो।

३० ४. देखो पूर्ण संख्या ६६९ पृष्ठ ६९९।

वोहरा अमरचन्द ग्राम रुपधनी जिला एटा　　　　२०)
पत्रादि सब खण्डवे को भेजना।

हस्ताक्षर
ता० ११ जून सं० १८८२।[1]　　　　[दयानन्द सरस्वती]
मुम्बई बालकेश्वर　　५

आज कल वर्षा यहां अत्यन्त होती है। जो वक्त तारीख को चलना न हुआ तो दूसरा पत्र बुधवार के दिन आपको देंगे।[2]

--:o:--

[पूर्ण संख्या ६७२]　　　पत्र-सारांश

[खंडेराव पांडुरंग, खण्डवा]

[हम १४ जून को चल कर १५ जून को खण्डवा नहीं पहुंच रहे हैं][3]　　१०

--:o:--

[पूर्ण संख्या ६७३]　　　पत्र

ओ३म्

लाला कालीचरण जी मंत्र[ी] व रईस आनन्दित रहो[4]।

---

१. आषाढ़ कृष्ण ११, रवि०, सं० १९३९।　　१५

२. प्रतीत होता है श्री स्वामी जी १४ जून बुधवार को मुम्बई से नहीं चले। ला० ठाकुरदास ने ठीक १३ जून को उन्हें नोटिस दिलवाया (यह नोटिस तीसरे भाग में देखें)। उसी का उत्तर १९ को श्री स्वामी जी के वकीलों ने दिया। वह उत्तर पूर्ण संख्या ६७६ (पृष्ठ ७०४-७०६) पर देखें।　　२०

३. इस की साक्षात् सूचना कहीं से प्राप्त नहीं है। परन्तु १७ जून १८८२ के खण्डेराव के पत्र से विदित होता है कि ऋ० द० का इस आशय का पत्र १३ या १४ जून को लिखा अवश्य पहुंचा था। इस लिये उसने १७ जून के पत्र में पूछा है 'अब आप बम्बई से कब चलोगे?' खण्डेराव का पत्र तीसरे भाग में देखें।　　२५

४. मूल पत्र आ० स० फर्रुखाबाद में सुरक्षित है। इसकी प्रतिलिपि १८ दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज जी ने की। फर्रुखाबाद का इतिहास पृ० १९३ पर कुछ पाठभेद के साथ छपा है।

विदित हो कि एक पत्र [आप] को पहले दिया था[१]। उसमें प्रयाग में छापेखाने में मैनेजर रखने के लिये आप को लिखा था। परन्तु पीछे से यह नि[श्च]य ठहरा कि वहां समर्थदान को भेजना चाहिये। समर्थदान यहां हैं। सो यहां से प्रयाग को चले जायेंगे।
५ ये प्रयाग को मास डेढ़ मास तक जा[वेंगे] इनका यह काम किया हुआ है। इनको इस काम में तजरवा हो चुका है। ये काम अच्छा चलावेंगे। इसलिये इनसे पक्काई करली है। सो अ[ब] आप मैने-जर के तलाश करने में परिश्रम न करें। जो इनसे पक्काई न होती तो आपको परिश्रम करना पड़ता।

१० आर्य्यदर्पण में जो जगन्नाथदास ने लिखा है उसका उत्तर आप बहुत उत्तम रीति से लिखें। कुछ दबना मत। खूब टुकड़े टुकड़े उड़ादो। ऐसा न हो[गा] तो वे बंध न होंगे। वह लेख केवल जग-न्नाथदास का ही नहीं है। उसमें इन्द्रमणी को भी शामिल समझना चाहिये। [मु]सलमानों के मुकद्दमे में सहायार्थ रुपया आया था
१५ उस में इन्द्रमणि ने क्या क्या लीला की। सो तो आपको [वि]दित ही है। फिर ऐसे का क्या लिहाज रखना। बराबर लिखना चाहिये[२]।

	हस्ताक्षर
ता० १४ जून १८८२[३]	दयानन्द सरस्वती
२०	मुंबई

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६७४] पत्र

अ[ो३म्][४]

लाला कालीचरण जी आनन्दित रहो।

---

१. पूर्ण संख्या ६६६, पृ० ६९९।

२५ २. मूल पत्र के जीर्ण होने के कारण कोष्ठगत पाठ फट चुके थे।

३. आषाढ़ कृष्ण १४, बुध, सं० १९३९।

४. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में सुरक्षित है। इसकी प्रतिलिपि दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज जी ने की। फर्रुखाबाद का इतिहास पृ० १९३ पर भी थोड़े से पाठभेद के साथ छपा है। मूल पत्र के जीर्ण होने
३० के कारण कोष्ठगत पाठ फट चुके थे।

लेखनीय यह है कि लाला रामचरण जी के पुत्र के देहान्त होने का हम को समाचार मिला। सो यह गृहस्थ लोगों को वास्तव में शोक का कारण है। परन्तु आप लो[ग] बुद्धिमान् हैं सो धैर्य्यावलम्बन करें। क्योंकि विद्या ऐसे शोक के समय में धैर्य्यावलम्बन कराने वाली है। सुख में तो मूर्ख और विद्वान् स[भी] आनन्दित रहा करते हैं। परन्तु दुःख में तो विद्वान् ही धैर्य्यावलम्बन करके शोकाकुल नहीं होते। विद्या का फल सच पूछो तो यही है। अब आप लोग सब घर के धीरजता धारण करके शोक निवृत्त करें। क्योंकि शोकाकुल रहने से अनेक प्रकार की हानियां होती हैं।

जगन्नाथदास की प्रश्नोत्तरी का खण्डन बहुत दिन हुए हम आपके पास भेज चुके हैं। उसके भेजे पीछे भा० सु० प्र० के दो अङ्क निकल चुके हैं। परन्तु आपने उसको छापा नहीं। अब आप उसको शीघ्र ही छाप दें। **क्योंकि ऐसे काम में ढील करने से बड़ी हानि होती है। क्योंकि पाखण्डिओं को तो होसला होता जाता है और आर्य लोगों के चित्तों में भ्रम का सञ्चार होने लगता है। इसलिये आप अब इसके छापने में ढील न करें।**

आप को विदित ही है कि देखो इन्द्रमणि ने उपकार का कैसा प्रत्युपकार किया है। अब देखो तो ऐसे ऐसे नामांकित पुरुषों की ही यह दशा है तो अन्य साधारण की क्या कथा है।

हस्ताक्षर

ता० १६ जून[1]	दयानन्द सरस्वती	
स० १८८२	मुम्बई	

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६७५]　　पत्र-सूचना

[खंडेराव पाँडुरंग, खण्डवा][2]

---

१. आषाढ़ शुक्ल १, शुक्रवार, सं० १९३९।

२. इस पत्र की सूचना खण्डेराव के २७ (?, २०) जून १८८२ के पत्र से मिलती है। इसमें सम्भवत: ऋ० द० ने खण्डवा पहुंचने की तिथि का निर्देश किया होगा। ऋ० द० २४ जून को खण्डवा पहुंचने थे। अत:

[पूर्ण संख्या ६७६] पत्र

Bombay 19th June 1882.[1]

To,

Messrs Smith & Frere,

५ Attorneys for Lala Thakar Das Moolraj[2]

Dear Sir,

Your letter of the 13th[3] instant addressed to Pandit Dayanand Suruswatee Swami has been placed in our hands and in reply we are instructed to state that the Slokes referred
१० to by you are believed to be by our client extracts from works published by person of great reputation among the Jains and to contain the principles of tenets of the Jain religion as propounded by several Jain Philosophers.

These Philosophers have no doubt differed from one
१५ another and our client in these extracts had no other intention then that of giving a general idea of the tenets of the Jain religion as propounded by their several Philosophers. Our client emphatically denies that in making these extracts he had any intention of wounding and offending the reli-
२० gious feelings of any portion of the followers of the Jain religion.

Our client is actuated by no other desire than to seek the truth and if your client or any other person satisfies our client that any portion of the extracts is improperly taken or
२५ is opposed to the principles of the Jain religion our client will have no objection whatever to have such portions ex-

---

खण्डेराव के पत्र में २४ जून निश्चित ही अशुद्ध है। २० जून का पत्र रहा होगा। खण्डेराव का यह पत्र तीसरे भाग में देखें।

१. आषाढ़ शुक्ल ४, सोम, सं० १९३९। यु० मी०।

३० २. दयानन्द सरस्वती मुखचपेटिका, प्रथम भाग पृष्ठ ४४-४६ पर मुद्रित। ऋ० द० ने ठाकुरदास के जिस नोटिस का यह उत्तर दिया था, उसे तीसरे भाग में देखें।

३. पूर्व (पूर्ण संख्या ६७१, पृष्ठ ७००) के अनुसार स्वामी जी १४ जून को बम्बई से नहीं चले। इसी नोटिस रूपी उत्तर दिलाने के कारण पीछे
३५ चले।

punged from the 2nd edition which the publisher Raja Jay Krishnadas, C. S. I. of Mooradabad intends to publish.

Our client desires yours to refer to the notice published at the commencement of the 'Satyarth Prakash' by the publisher in which he states the objects of the publication and accepts the whole responsibility in respect of the book. The further sale and publication of the book are entirely under the control of the publisher.

Yours truly,
(Signed) PAYNE & GILBERT.

[भाषानुवाद]

बम्बई १२ जून १८८२[1]

सेवा में

श्री स्मिथ और फ्रेयर

लाला ठाकुरदास मूलराज के मुख्तियार

प्रिय महोदय,

पण्डित दयानन्द सरस्वती स्वामी के पते से भेजा हुआ १३ जून का पत्र हमें प्राप्त हुआ। हमें उत्तर में यह कहने के लिए आदेश दिया गया है कि मेरे मोअक्किल का विश्वास है कि जिन श्लोकों के विषय में आपने पूछा है वे जैनियों में सुप्रतिष्ठित व्यक्तियों द्वारा प्रकाशित ग्रन्थों में से लिये गये हैं। और उनमें जैनमत के सिद्धान्त हैं, जैसा कि अनेक जैन दार्शनिकों ने प्रतिपादित किया है।

वे दार्शनिक निःसन्देह परस्पर मतभेद रखते हैं और हमारे मोअक्किल को इन उद्धरणों से अनेक दार्शनिकों द्वारा प्रतिपादित जैन धर्म के सिद्धान्तों के सामान्य परिचय देने के अतिरिक्त और कुछ अभीष्ट न था। हमारा मोअक्किल दृढ़तापूर्वक इस बात से इन्कार कर रहा है कि इन उद्धरणों से उसे जैन धर्म के कुछ अनुयायियों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाना अभीष्ट था।

हमारा मोअक्किल सत्यान्वेषण से भिन्न किसी अन्य भावना से प्रेरित

---

१. आषाढ़ शुक्ल ४, सोम, सं० १९३९। पृष्ठ ७०४ की टिप्पणी २, ३ भी देखें।

नहीं है। यदि आप का मोअक्किल या कोई अन्य पुरुष हमारे मोअक्किल को सन्तुष्ट करदे कि उद्धरण का कोई भाग अनुचित रूप से लिया गया है या जैन धर्म के सिद्धान्तों के विरुद्ध है तो हमारे मोअक्किल को उसमें कोई आपत्ति न होगी कि वह दूसरे संस्करण से जिसे प्रकाशक मुरादाबाद ५ निवासी राजा जयकृष्णदास सी० एस० आई० प्रकाशित करना चाहते हैं ऐसे भागों को निकलवा दें।

हमारा मोअक्किल तुम्हारे मोअक्किल का ध्यान इस सूचना की ओर आकृष्ट करना चाहता है जो प्रकाशक ने सत्यार्थप्रकाश के आरम्भ में प्रकाशित कराई है जिस में वह प्रकाशक का उद्देश्य बतलाता है और पुस्तक १० के सम्बन्ध में सारा उत्तरदायित्व स्वीकार करता है। पुस्तक का आगामी विक्रय और प्रकाशन पूर्णरूप से प्रकाशक के अधिकार में है।

आपके

(हस्ताक्षर) पेन और गिल्बर्ट

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६७७] पत्र

१५ लाला[1] कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि हम सुख पूर्वक मुम्बई से खंडुआ में आ गये हैं। यहां रा० रा० भाऊ दादा जी के बगीचे में ठहरे हैं। हमने दश महीने का पंडितों के जमा खर्च का हिसाब लाला मोहनलाल को दे दिया है। और २००) रुपये उनसे पंडितों के मध्ये लिये हैं। २० १४) रुपये पिछले बाकी रहे थे। सब मिलके २१४) रुपये हुए। उन में से १६०) रुपये पंडितों के मध्ये खर्च हुए। शेष ५४) रुपये रहे सो वहां लाला निर्भयराम जी के पास जमा खर्च करा देना। अनुमान है कि वह कागज भी आप के पास पहुंच गया होगा। आर्य्य प्रश्नोत्तरी को शांति के साथ इस महीने में छाप के प्रसिद्ध २५ कर देना। उस ही के साथ आर्य्यदर्पण का उत्तर भी छाप देना॥ सब से आशीर्वाद कह देना॥ शुभमिति।

---

१. यहां से 'ठहरे हैं।' तक का अंश पं० लेखरामकृत उर्दू जीवन चरित पृ० ५३८ (हिन्दी सं० पृष्ठ ५७८) पर उद्धृत है।

ता० २५ जून सन् १८८२ ई०[1]।

[दयानन्द सरस्वती] (खंडुग्रा[2])

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६७८] **पत्र-सूचना**

३ जुलाई १८८२ खण्डुग्रा[3]।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६७९] **पत्र** ५

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान ग्रानन्दित रहो[4]।

विदित हो कि पंडित सुन्दरलाल जी जो ग्रपनी ग्रोर से रामनारायण वा तुम्हारे साथ प्रबन्ध कर जायंगे तो अच्छा होगा ग्रथवा जैसी उनकी इच्छा हो चाहे पत्र द्वारा छापाखाने का प्रबन्ध १० रखें वा किसी मनुष्य द्वारा। जब तुम को ग्रपने हाथ से कुंजी सोंप गये तो निश्चय होता है कि तुम्हारा विश्वास उनको है। ग्रच्छा तुम जानों वे जानें। उनकी ग्रोर से रामनारायण सहायक रहेगा। तुम ग्रपनी ग्रोर से चेतन रहना। ग्रौर जो कुछ वहां विशेष व्यवस्था होगी उसको विशेश्वरसिंह जना देगा। जो इस १५ समय भीमसेन वा ज्वालादत्त को सोंप जाते तो उन से कभी प्रबन्ध

---

१. ग्राषाढ़ शुक्ल ९, रविवार, सं० १९३९। लिफाफे पर २६ जून की मोहर है।

२. मूल पत्र ग्रार्यसमाज फर्रुखाबाद में सुरक्षित है। इसकी प्रतिलिपि दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज जी ने की। फर्रुखाबाद का इतिहास २० पृ० १९५ पर भी छपा है। हमने सारा मूल पत्र से छापा है।

३. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवन चरित पृ० ५३८ (हिन्दी सं० पृष्ठ ५७८) पर इतनी ही सूचना है। पूर्ण संख्या ६७३ (जून १४) के पत्र में लिखा है कि मुन्शी समर्थदान को वैदिक प्रेस प्रयाग में भेजने की पक्काई की। यह पत्र प्रयाग को भेजा गया। यह भी सम्भव है कि यह पत्र-सूचना २५ ग्रगले पूर्ण संख्या ६७९ वाले पत्र के विषय में दी गई हो, क्योंकि वह भी ३ जुलाई का ही है।

४. मूल पत्र परोपकारिणी सभा ग्रजमेर में सुरक्षित है।

होना सम्भव नहीं था। अच्छा हुआ जो तुमको सौंप गए। अनुमान है कि जो दयाराम को ले जायंगे तो २ वा ३ महीने में दयाराम लौट आवेगा। पंडित जी कहते हैं कि पत्र द्वारा हम यथायोग प्रबन्ध रखेंगे। यह भी ठीक है। जो तुम को प्रधान करना चाहते ठीक है तुम प्रधान हो जाओ। वहां वेद भाष्य के डेढ़ अङ्क के ऋग्वेद के पत्रे वहां हैं क्योंकि हम यहां मन्त्र और पत्रों की संख्या रखते हैं। केवल बैठा रहने के वास्ते जल्दी जल्दी छाप कर पत्रों का तकादा किया करता है। और व्याकरण के पुस्तक अभी तक तैयार नहीं किये। अब भीमसैन से कह देना कि १० दिन के पश्चात् तुम को स्वामी जी के पास रतलाम में जाना होगा। चाहे घर होकर जाओ चाहे इधर ही से। क्योंकि जो हमारे पास रतलाम में आवेगा तो फिर उदयपुर की ओर जाने में उसको सुबीता पड़ेगा, अन्यथा २० कोश पैदल आना पड़ेगा। और उधर भीलों का भी भय है। अब वहां दो पंडित का रहना उचित नहीं। जो वहां रहेगा उसको यथेष्ट प्रफ सोधना और ५ मन्त्रों से कम भाषा कभी न बनेगी और जो अधिक बनावेगा उसको योग्यता विदित होगी। अब जब तक हमारी दूसरी चिट्ठी न आवे तब तक चिट्ठी पत्र न भेजना।

ता० ३ जुलाई १८८२ [दयानन्द सरस्वती]
श्रावण कृष्ण[1] २ चन्द्रवार सं० १९३९।

--:०:--

पूर्ण संख्या ६८०] पत्र

ओ३म्[2]

स्वस्ति श्रीमदनवद्यगुणगणालंकृतेभ्यः श्रीयुतमहाराजाधिराजभ्यो[3] धीरवीर श्री नाहरसिंहवर्मभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन

---

१. द्वितीया तृतीया सम्मिलित थी।

२. मूल पत्र शाहपुरा समाज में सुरक्षित है।

३. यहां **'राजाहस्सखिभ्यष्टच्'** (अष्टा० ५।४।९१) से समासान्त टच् प्रत्यय प्राप्त होकर **'श्रीयुत महाराजाधिराजेभ्यो'** रूप प्राप्त होता है। परन्तु **'विभाषा समासान्तो भवति'** (महाभाष्य ६।२।१९७) इस परिभाषा से टच् प्रत्यय नहीं हुआ, ऐसा जानना चाहिये। महाभारत आदि प्राचीन ग्रन्थों में

आशिषो भूयासुस्तमाम्, शमत्रास्ति तत्र भवदीयं च नित्यमेधमान-
माशासे श्रीमान् महाशयों का गोकरुणायुक्त रजष्ट्री पत्र[1] खंडुवा में
पहुंचा। देख कर अति आनन्द प्राप्त हुआ। धन्य है महाशयों को
कि जिनका तन मन धन सब परोपकारार्थ है। आप के सदृश आप
ही हैं। महाशयों के सामने विशेष लिखना आवश्यक नहीं जो कि ५
स्वल्प लेख से बहुत जान लेते हैं। वेदभाष्य के कार्य रहने से
श्रीमानों के पास पत्र न भेज सका। जब इधर की ओर आना होगा
तब प्रथम ही श्रीमानों को विदित कर दिया जायेगा। अब मैं मुम्बई
से चलकर खंडुवा[2]। **खंडुवा से कल[3] सायंकाल इन्दौर में, अब इन्दौर
से कल[4] सायंकाल की गाड़ी में बैठकर रतलाम में पहुंच**[5] पश्चात् १०
वहां से उदयपुर जाने का विचार है। उसी लिये कि वेद विद्या-
लयादि उत्तम कार्यों का प्रवन्ध हो जाय। श्रीमान् महाराजाधि-
राजजी जो उचित समझें इस बात पर श्रीमान् आर्य्यकुल दिवाकर
महाशयों को लिखें। जिससे पूर्वोक्त कार्य शीघ्र ही सिद्ध हो। जो
कुछ चित्तौड़गढ़ में अच्छी बातें हुई हैं वे सब महाराजाधिराजों के १५
प्रयत्न का फल है। एक पोपलीला[6] का पुस्तक आज भेजा है और

'टच्' प्रत्यय-रहित नकारान्त राजन् शब्द के अनेक प्रयोग उपलब्ध होते हैं।
देखो 'संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास' भाग १, पृष्ठ ३८-३९, सं०
२०३० का संस्करण।

१. इस पत्र में महाराजा शाहपुराधीश के द्वारा ४०००० चालीस २०
सहस्र मनुष्यों की सही कराई गई थी। द्र० —पूर्णसंख्या ६८३(पृष्ठ ७११)।

२. खण्डुवा आषाढ़ शुक्ल ८, सं० १९३९ (२४ जून १८८२) को
पहुंचे थे।

३. पत्र श्रावण वदी ४, मंगलवार, (४ जुलाई १८८२) को इन्दौर से
लिखा है। अत: खण्डुआ से ३ जुलाई की सायं चले थे। २५

४. अर्थात् ५ जुलाई १८८२ की सायं इन्दौर से चलेंगे।

५. पूर्ण संख्या ६८३ के पत्र में इन्दौर से रात की दो बजे की गाड़ी से
रवाना होने का निर्देश है। अत: वे ६ जुलाई की प्रात: रतलाम पहुंचे थे।
पूर्ण संख्या ६८३ पृ० ७११ की टि० २ में देखो।

६. इस पुस्तक के लिये देखो "ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास" ३०
परिशिष्ट ५, पृष्ठ ८२।

वेदाङ्गप्रकाशादि पुस्तक मंगवाने का पता यह है (प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय प्रयाग) ऐसा लिखकर भेज दीजिये अवश्य पत्र पहुंच जायगा। जो जो पुस्तकें मंगवावेंगे वे वे सब उचित समय में पहुंचते रहेंगे। जब मैं उदयपुर में पहुंचूंगा तब महाराजाधिराज ५ जी को समाचार विदित कर दूंगा। सब सज्जनों से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा। मिति श्रावण वदी ४ मङ्गलवार सम्वत् १९३९[1] शुभम्

(इन्दौर) ह० दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६८१] पारसल-सूचना

१० [श्री महाराजाधिराज नाहरसिंह वर्मा, शाहपुरा]

पोपलीला का पुस्तक।[2]

श्रावण वदी ४, सं० १९३९।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६८२] कार्ड

श्रीयुत पण्डित शालिग्राम बाबू गदाधरप्रसादसिंह बाबू जग-१५ न्नाथ जी आनन्दित रहो। विदित हो कि मैं ४ जुलाई को यहाँ स्वामी दयानन्द (सरस्वती) जी महाराज के चरणों में पहुंचा। आप का समाचार कहा। श्रवण कर महाराज आनन्दित हुए। और मैं नागपुर ले जाने के वास्ते आया। परन्तु स्वामी जी राजपुताना देश में जावेंगे और हुलकर महाराज यहां नहीं हैं। सर्व २० सभासदों से आनन्द कहना। दूसरा पत्र विस्ता[र] पूर्वक भेजूंगा।

ह० आत्मानन्द सरस्वती

५ जुलाई सन् ८२[3] इन्दौर छावनी

सब से मेरा आशीर्वाद कहियेगा। दयानन्द सरस्वती[4]

—:०:—

---

१. ४ जुलाई, १८८२।

२५ २. इसका निर्देश पूर्ण संख्या ६८० के पत्र में है। उसी के अनुसार तिथि का उल्लेख किया है।

३. श्रावण वदी ५, बुधवार, सं० १९३९।

४. यह हस्ताक्षर ऋषि दयानन्द ने स्वहस्त से बनाया है। शेष पत्र

[पूर्ण संख्या ६८३] कार्ड

ओ३म्[1]

श्री स्वामी जी का आशीर्वाद विदित हो। स्वस्ति श्री मित्रवर बाबू रूपसिंह क्लार्क जी योग्य इतः रामानन्द ब्रह्मचारी का नमस्ते। गोरक्षा की सही पहुंची। आपने यह काम धन्यवाद देने योग्य किया। अब भी सही कराइये। जो गोरक्षार्थ [मे]मोरियल पत्र न रहे हों तो लिखना, परन्तु हस्ताक्षर अलग अक्षर स्पष्ट रहें, जिसमें सुगमता से पढ़ने में आवे। यहां हमारे पास श्रीयुत महाराजाधिराज श्री नाहरसिंह जी साहपुरा मेवाड़ से ४०००[०] चाली[स] हजार मनुष्यों की सही कराके भेजी है। श्री स्वामी जी मुम्बई से चल के खंडुवा, खंडुवा से इन्दोर, अब इन्दोर से आज दो बजे रात्री[2] की गाड़ी में बैठ के रतल[ा]म को जायेंगे। वहां ८ वा १० दिन रह कर पश्चात् उदयपुर को जायेंगे॥

विशेष समाचार उदयपुर में पहुंचे के पश्चात् भेजूंगा॥ भद्र-

उनके शिष्य स्वामी आत्मानन्द ने लिखा है। हम ने ता० २३-४-१९२७ को एक पत्र बिलासपुर भेजा था। उसके उत्तर में पत्र संख्या ८०, ता० ११-५-१९२७ को नरसिंहपुर से मध्यदेश विदर्भ आ० प्र० सभा के मन्त्री श्री शिवलाल जी ने यह मूल कार्ड हमें भेजा था। मूल कार्ड अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है। पं० शालीग्राम तथा बाबू जगन्नाथ प्रसाद से बिलासपुर में म० मामराज ता० २ फरवरी सन् १९४४ को मिले थे। अन्य कोई पत्र नहीं मिला।

१. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. इस पत्र के अनुसार ५ ता० की रात को बैठकर ६ ता० की प्रातः स्वामी जी रतलाम पहुंचे। यहां 'आज दो बजे रात्री' साधारण बोल चाल के अनुसार जानना चाहिये। अंग्रेजी तिथि पत्रानुसार बारह बजे रात से तारीख बदल जाती है। यहां पूर्णसंख्या ७८ (पृष्ठ १०७) के पत्र में अद्यतन शब्द का अर्थ और उसकी टि० १ भी देखें। पं० लेखराम जी कृत जीवनचरित (हिन्दी सं०) पृष्ठ ५७८ पर तथा महेशप्रसाद जी ने 'महर्षि दयानन्द कब और कहां' पुस्तक में श्रावण कृष्ण ५ अर्थात् ५ जुलाई को रतलाम पहुंचना लिखा है। सो ठीक नहीं है। श्रावण ६ अर्थात् ६ जुलाई की प्रातः वे रतलाम पहुँचे थे।

मिति।

कल स्वामी आत्मानन्द सरस्वती जी इन्दोर में हमारे पास आगये ॥ ता० ५ जुलाई सन् १८८२ ई०[1]।

रामानन्द ब्रह्मचारी (इन्दोर)

—:०:—

५ [पूर्ण संख्या ६८४] पत्रांश[2]

....

आज हम इन्दोर से दो बजे [रात्री[3]] को गाड़ी में बैठ कर रतलाम जावेंगे। वहां से उदयपुर जाने का विचार है। श्रावण[4] वदी ५, बुद्धवार। इन्दोर ५ जुलाई ८२।

१०

दयानन्द सरस्वती
इन्दोर

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६८५] पत्र-सारांश

[मुंशी समर्थदान]

भीमसेन को हमारे पास भेजो[5]।

—:०:—

१५ [पूर्ण संख्या ६८६] तार-सारांश

[मुंशी समर्थदान]

भीमसेन को हमारे पास भेजो[5]।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६८७] पत्राशय

[कविराज श्यामलदास, उदयपुर][6]

---

२० १. प्रथम श्रावण कृष्ण ५, बुध, सं० १९३९।

२. यह पत्रांश पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ५३८ (हिन्दी सं० ५७८) पर उद्धृत है।

३. पृष्ठ ७११ की टि० २ देखो।

४. यह शुद्ध श्रावण अर्थात् प्रथम श्रावण है।

२५ ५. देखो अगली पूर्ण संख्या ६८९ तथा ६९० का पत्र।

६. नाम का निर्देश कहीं नहीं मिलता है। कविराज श्यामलदास

हम श्री महाराज को दिये हुए अपने वचनानुसार [उदयपुर] आते हैं। आप सवारी आदि का प्रबन्ध कर के हम को सूचित करें।[1]

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६८८] तार-सूचना ५

[कविराज श्यामलदास, उदयपुर]

सवारी के प्रबन्ध के विषय में।[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६८९] पत्र

ओ३म्[3]

मुंशी समर्थदान आनन्दित रहो। १०

विदित हो कि आज कार्ड पत्र आया, समाचार विदित हुआ। परन्तु जो तुमने प्रथम पत्र में लिखा था कि विशेष यहां का वर्तमान द्वितीय पत्र में लिखूंगा वह समाचार इस पत्र में नहीं लिखा?

के श्रावण कृष्ण १० सं० १९३९ (१० जुलाई १८८२) के पत्र तथा पं० लेखराम के वर्णन से नाम की कल्पना की है। १५

१. इस पत्राशय का निर्देश पं० लेखराम कृत जीवनचरित हिन्दी सं० पृष्ठ ५७८ पर मिलता है। यह पत्र जावरा स्टेशन पर पहुंचकर ८ जुलाई को ऋ०द० ने उदयपुर से लिखा, ऐसा पं० लेखराम का कथन है। उस समय जब उदयपुर तक रेल नहीं थी, तब ८ को लिखा पत्र १० को उदयपुर पहुंचना कठिन है। कविराज श्यामलदास का श्रा० कृ० १० (१० जुलाई २० १८८२) का पत्र १४ जुलाई को जावरा में ऋषि दयानन्द को मिला (द्र०—पं० लेख० जी० च० हिन्दी पृष्ठ ५७८)। श्री देवेन्द्र बाबू संकलित जीवन चरित में रतलाम (६ या ७ जुलाई) पहुंच कर उदययुर पत्र देना लिखा है वह युक्त प्रतीत होता है। इसके उत्तर में कविराज श्यामलदाल का श्रावण कृष्ण १० सं० १९३९ का पत्र तीसरे भाग में देखें। २५

२. इस तार की सूचना भी श्री श्यामलदास कविराज ने श्रावण कृष्ण १०, सं० १९३९ (=१० जुलाई १८८२) के पत्र से मिलती है। कविराज श्यामलदास का पत्र तीसरे भाग में देखें।

३. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

क्या यह द्वितीय पत्र न था? अथवा लिखते समय स्मरण न रहा हो जो कि लिखा विशेष समाचार दूसरे पत्र में लिखूंगा। अब कब दूसरा पत्र लिखा जायगा? वह समाचार अवश्य लिखना। यन्त्रालय में जो दो महीने आगे का छपा हुआ वेदभाष्य है सो अधिक-
५ अधिक वेदभाष्य ही के छपने से क्या लाभ होगा। और जो प्रति मास में छपने के वास्ते वेदभाष्य ही भेजा जाय तो कई एक दिन तक वेदभाष्य ही के शोधने में व्यतीत हो जांय। पुन: आगे-आगे न बनने से कहां से छपेगा। जो वेदाङ्ग-प्रकाश के अक्षर नहीं हैं तो ढलवा लो। वहां शीशा रक्खा किस काम में आवेगा। और जब
१० तक अक्षर न बन चुकें तब तक कम्पोजीटरों को छुट्टी देदो। जब अक्षर बन जावें तब बुला लेना। उन्हीं अक्षरों को ढलवाओ जिनकी आवश्यकता है। क्या फूंडरी में अक्षर नहीं ढलते हैं जो लिखते हो कि अक्षर नहीं हैं। जिस प्रकार काम अच्छे प्रकार चले उस प्रकार प्रबन्ध सर्वदा ध्यान में रखना चाहिये।
१५ **पण्डित भीमसेन के बुलाने के लिये १ तार और दो एक पत्र भेज चुके हैं**[1]। उससे कह देना कि स्वामी जी के पास जावरा नवाब का जिला इन्दोर में चला आवे। और तुम वेदभाष्य और मासिक हिसाब भी यहीं जावरा में भेज दो। सर्वदा वहां का यथेष्ट समाचार लिखा करो। और जो हम लिखें उसमें ध्यान देकर
२० काम चलाया करो।

ता: ११ जुलाई १८८२
श्रावण कृष्ण मङ्गलवार सं० १९३९
[दयानन्द सरस्वती] (जावरा)

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६९०] पत्र

२५ मुन्शी समर्थदान आनन्दित रहो[2]।

---

१. इन में से एक उस पत्र ओर संकेत है जो ३ जुलाई १८८२ को समर्थदान को लिखा था। देखो पूर्ण संख्या ६७९ का पत्र, पृष्ठ ७०७। तार तथा द्वितीय पत्र प्राप्त नहीं हुआ, उन का सारांश पूर्ण संख्या ६८५ ६८६, पृष्ठ ७१२ पर दिया है।

३० २. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

विदित हो कि जो **हमने लिखा और तार भेजा था** उसको याथातथ्य किया होगा। वेदाङ्गप्रकाश के छपने के लिये शीघ्र ही फुंडरी में अक्षर ढलवालो। और पूर्व पत्रों का उत्तर यथावत् विस्तार पूर्वक लिखना। विशेष हाल कल के पत्र[1] से जान लेना। अब देखो छापेखाने का प्रबन्ध, करनवास के ठाकुर शेरसिंह ने हमारे पास पत्र भेजा है। उसको तुम्हारे पास भी भेजते हैं। देख कर यथोचित प्रबन्ध करना। इसने २१) रुपये हमको मेरठ में वेद-भाष्य के मध्ये दिये थे। वे रुपये टाटल पेज पर छप भी चुके[2]। भला ऐसे-ऐसे ग्राहकों को वृथा अपनी अज्ञानता से क्लेश देते हैं। इस ग्राहक के २५॥) रुपये आ चुके हैं। अब पांचवें वर्ष के ८) रुपये रहे होंगे, मंगवा लेना। जो इनके पास वेदभाष्य न जाता हो तो जहां से बंध हुआ हो वहां से उनसे पूछ कर बराबर भेजा करना और जो जाता हो तो अच्छा है। और करनवास में ठाकुर गोपाल सिंह भी वेदभाष्य लेते हैं। उनसे भी बाकी रुपये उन्हीं के द्वारा और उनके भी रुपये पांच वर्ष के अन्त तक के सब मंगवा लेना। और छापेखाने की व्यवस्था अच्छे प्रकार रखना। इति ता० १३ जुलाई सन् १८८२ ई०।

श्रावण कृष्ण १३ बृहस्पतवार दयानन्द सरस्वती
सं० १९३९ नवाब का जावरा (मालवा)

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६९१] पत्र

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो[3]!

विदित हो कि लाला जगन्नाथदास मुरादाबाद की प्रश्नोत्तरी के विषय में विस्तार से लिख के ७ पृष्ठ भेजते हैं[4]। पहुंचेंगे। जिस

---

१. पूर्ण संख्या ६८९ का पत्र। यहां 'कल' शब्द से विदित होता है कि वह पत्र श्रा० कृ० ११, मंगलवार को लिखा और अगले दिन बुधवार को भेजा गया।

२. इस विषय में पूर्ण संख्या ४४६ (पृष्ठ ४८७) भी देखें।

३. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में सुरक्षित है, इस की प्रतिलिपि दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज ने की। फर्रुखाबाद का इतिहास पृष्ठ १९५ पर भी छपा है।

४. पूर्ण संख्या ६७४ (पृष्ठ ७०३) में 'प्रश्नोत्तरी का खण्डन बहुत दिन

समय पहुंचे उसी समय १००० प्रति छपवा देना। परन्तु छपवाने में विलम्ब किंचिन्मात्र भी न करना। पश्चात् तुम अपने समाचार में छपवाना। छपवाने में इतना ध्यान रखना कि जैसा लेख है वैसा ही छपवाना। कम व अधिक न करना। और इसका मूल्य)॥
५ आना रखना। परन्तु बाहर के मंगवाने वालों से डाक व्यय भी ले लेना। इसको शीघ्र ही छपवाके सर्वत्र प्रसिद्ध कर दो। जिस से लोगों की शङ्का दूर हो जाय। और उनकी बुद्धि का भी प्रकाश हो जाय कि ये गुरु और चेला किस प्रकार के हैं। और इन्होंने क्या-क्या विचित्र वर्त्तमान किया है। आज कल आत्मानन्द
१० सरस्वती स्वामी जी हमारे पास हैं। इति

ता० १३ जुलाई सन् १८८२ ई०।[1]

[दयानन्द सरस्वती]
मालवा नवाब का जावरा

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६९२] पारसल-सूचना

१५ [लाला कालीचरण जी फर्रुखाबाद]
जगन्नाथ की प्रश्नोत्तरी की समीक्षा के ७ पृष्ठ।[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ६९३] समीक्षा-पत्र

श्रीयुत सम्पादक देशहितैषी महाशय मन्त्री आर्य्यसमाज अजमेर समीपेषु[3]।

---

२० हुए भेज चुके हैं' ऐसा लिखा है। वह उत्तर संक्षिप्त था। यह उत्तर विस्तृत है यह इसी वाक्य के 'विस्तार से' शब्द से स्पष्ट है।

१. प्रथम श्रावण कृष्ण १३, बृहस्पतिवार, सं० १९३९।

२. इसका निर्देश पूर्ण संख्या ६९१ के पत्र में है। इसे रजिस्ट्री से भेजने का उल्लेख आगे पूर्ण संख्या ७१० के पत्र में मिलता है।

२५ ३. मुंशी इन्द्रमणि ने सहायता में आए हुए धन का पूर्वप्रतिज्ञा के अनुसार पूर्ण ब्यौरा न बताया और न छापा। जब श्री स्वामी जी ने उन सब से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया, तब मुन्शी जी ने आर्यप्रश्नोत्तरी (संवत् १९३८, आर्यदर्पण प्रेस, शाहजहांपुर) छापी। उसका उत्तर लिखवा कर श्री

स्वामी जी ने भारत सुदशा प्रवर्तक में छपने के लिये भेजा। फर्रुखाबाद समाज वालों ने वह न छापा।

अपने १६ जून के पत्र (पूर्ण संख्या ६७४, पृष्ठ ७०३) में श्री स्वामी जी ने ला० कालीचरण को लिखा—"प्रश्नोत्तरी का खण्डन बहुत दिन हुए हम आप के पास भेज चुके हैं। उस के पीछे भारत सु० प्र० के दो अंक निकल ५ चुके हैं। परन्तु आप ने उस को छापा नहीं।" अर्थात् श्री स्वामी जी का यह उत्तर ऐप्रिल १८८२ में लिखा गया होगा।

पुन: १३ जुलाई का पत्र पूर्ण संख्या ६९१ के अनुसार श्री स्वामी जी ने उसी प्रश्नोत्तरी का एक विस्तृत उत्तर छपने को भेजा।

फर्रुखाबाद वालों ने यह उत्तर भी न छापा। और मन्त्री आ० स० १० फर्रुखाबाद ने १४-७-८२ को एक पत्र (संख्या २७) श्री स्वामी जी की सेवा में खण्डुआ भेजा। उस का विषय "प्रश्नोत्तरी" था। पुन: मन्त्री समाज ने १९-७-८२* को एक और पत्र (संख्या ५२) श्री स्वामी जी को जावरा भेजा—

"पत्र आप का और ७ पृष्ठ आर्यप्रश्नोत्तरी के उत्तर में पहुंचे। छापने १५ के विषय में अन्तरङ्ग सभा से यह अनुमति मिली कि नया प्रेस एक्ट में छपने छापने का विषय है"...... और जो १००० प्रति अलग छापी जावे वह भी ऊपर के कारणों से (मुझे छोड़) आप लिखें जिसके नाम से छपवाने का विचार किया जावे।"

फिर १४ अगस्त १८८२ [पूर्ण संख्या ६९८] के पत्र में श्री स्वामी जी २० ला० कालीचरण को लिखते हैं—

"अभी तक "आर्य प्रश्न०" के उत्तर नहीं छपवाये। क्या कारण है। जो प्रेस एक्ट की शंका हो तो पत्र के देखते पण्डित मुन्नालाल मन्त्री आ० स० अजमेर के पास भेज दीजिये। वे छाप देंगे।"

फिर श्री स्वामी जी ने उदयपुर से श्रावण शुक्ल ३ संवत् १९३९ २५ [१७ अगस्त १८८२। पूर्णसंख्या ७००] को बाबू दुर्गाप्रसाद के नाम एक पत्र

---

* हमें यह तारीख अशुद्ध प्रतीत होती है। इस के दो कारण हैं। १—इस पत्र की पत्र संख्या २७ है और १९-७-८२ को लिखे पत्र की संख्या ५२ है। ५ दिन में २५ पत्र लिखे जाना सम्भव प्रतीत नहीं होता। २—१४-७-८२ को ऋ० द० खण्डवा में नहीं थे, जावरा में थे। अत: यहां २४-६-८२ ३० तारीख हो सकती है। यह पत्र प्रश्नोत्तरी के संक्षिप्त विषय में था।

प्रिय सम्पादकवर! जो मनुष्य स्वार्थ बुद्धि छोड़ परमार्थ करने में प्रवृत्त नहीं होता उसका हृदय पूर्ण शुद्ध होना असम्भव है, चाहे वह बहुत युक्ति और गूढता अपनी कपटता को प्रसिद्ध करने में कैसा ही यत्नवान् क्यों न हो। उसका कपट कभी न कभी प्रका-
५ शित हो ही जाता है। प्रत्यक्ष दृष्टान्त देख लो कि लाला जगन्नाथदास मुन्शी इन्द्रमणिजी के शिष्य की बनाई हुई [आर्य्यप्रश्नोत्तरी] की समालोचना करने से (बहुत से विषय उसमें सत्य और परोपकारक दीख पड़ते हैं, परन्तु बहुधा विषय उसमें ऐसे भी हैं कि जिनके सुनने वा पाठ करने वालों का भ्रमजाल में फंस वेदादि
१० सत्य शास्त्रों से विरुद्ध होना सम्भव है। यह विरुद्ध विषय केवल लाला जगन्नाथदास ही के अभिप्राय से नहीं किन्तु मुन्शी इन्द्रमणि भी उन दोषयुक्त विषयों के अनुयायी प्रतीत होते हैं।) अस्तु जो हो मुझ को सत्य-सत्य परीक्षा इस ग्रन्थ की करके दोषों का प्रकाश करना अवश्यनीय है। कारण, सज्जन लोग गुणग्रहण कर दोषों
१५ को छोड़ दें। इतना ही नहीं, किन्तु जैसे विषयुक्त उत्तमान्न का बुद्धिमानों को त्याग करना अवश्य होता है, इसी प्रकार आर्य्य लोगों के लिये यह [आर्य्यप्रश्नोत्तरी] ग्रन्थ गुणों के साथ दोषदायक होने से श्रेष्ठ को त्याग के योग्य है। अब इसका कुछ थोड़ा सा नमूना संक्षेप से दिखलाता हूं।

२० [आर्य प्रश्नोत्तरी पृष्ठ २। प्रश्नोत्तरी ७] परमात्मा ने सृष्टि की आदि में श्री ब्रह्माजी के हृदय में वेदों का प्रकाश किया। उन से ऋषि मुनि अस्मदादिकों को प्राप्त हुए।

लिखा। उस में भी इसी उत्तर के छापने का उल्लेख है।

२४ अगस्त १८८२ को [पूर्णसंख्या ७०१] श्री स्वामीजी पुन: लिखते हैं—
२५ "तुमने "आ० प्र०" के उत्तर अजमेर पण्डित मुन्नालाल जी के पास भेज दिये। अच्छा किया।"

१४-८-८२ को [पूर्ण संख्या ६९७] ही मुन्नालाल सम्पादक देशहितैषी श्री स्वामी जी को अजमेर से लिखता है—

"आर्य्य प्रश्नोत्तरी के खण्डन को किसकी ओर ये प्रकाश करें।"

३० अन्त में यह उत्तर देशहितैषी अजमेर में "उचित वक्ता" के नाम से छपा।

[समीक्षा] यह बात प्रमाण करने योग्य नहीं, क्योंकि (**अग्नेर्वै ऋग्वेदो जायते वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात्सामवेदः**) शतपथ ब्राह्मण वचन[1]।

"अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्।
दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थमृग्यजुःसामलक्षणम्॥"

मनुस्मृति [१।२३] का वचन। अब देखिये अग्नि आदि महर्षियों से ऋग्वेदादि का प्रकाश हुआ। इत्यादि ब्राह्मणवचनों के अनुसार मनुजी महाराज कहते हैं कि ब्रह्मा जी ने अग्न्यादि महर्षियों के द्वारा वेदों की प्राप्ति की। अत एव **"यो वै ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै"** इस श्वेताश्वतरोपनिषद् [६।१८] के वचनार्थ की संगति शतपथ और मनुजी के वचन से अविरुद्ध होनी चाहिये। किन्तु परमात्मा ने चारों महर्षियों के द्वारा श्री ब्रह्मा जी को चार वेदों की प्राप्ति कराई। और अब भी जो कोई चार वेदों को पढ़ता है वही यज्ञ में ब्रह्मासन को प्राप्त और उसी का नाम ब्रह्मा भी होता है। यदि मुन्शी इन्द्रमणिजी और उनके शिष्य लाला जगन्नाथदास वेद और तदनुयायी ब्राह्मणादि ग्रन्थों को पढ़े होते तो ऐसे भारी भ्रम में पड़ ऐसे-ऐसे अन्यथा भाषण वा लेख क्यों करते? इनको उचित है कि अपना हठ छोड़ सत्य का ग्रहण अवश्य करें।

[पृष्ठ ३ प्रश्नोत्तरी १६] जीव वास्तविक अनन्त हैं। इस कारण ईश्वर के ज्ञान में भी अनन्त ही हैं।

[समीक्षा] जब जीव देश काल वस्तु परिच्छिन्न अर्थात् भिन्न-भिन्न हैं। उनको अनन्त कहना मानों एक अज्ञानी का दृष्टान्त बनना है। अनन्त तो क्या, परन्तु परमेश्वर के ज्ञान में असंख्य भी नहीं हो सकते। परमेश्वर के समीप तो सब जीव वस्तुतः अतीव अल्प हैं। जीवों की तो क्या परन्तु प्रति जीव के अनेक कर्मों के भी अन्त और संख्या को परमेश्वर यथावत् जानता है। जो ऐसा न होता तो वह परब्रह्म जीव और उसके कर्मों का जैसा-जैसा जिस-जिस जीव ने कर्म किया है उन-उन का फल न दे सके। जब कोई इनसे प्रश्न करे कि एक-एक जीव अनन्त हैं वा सब मिल के? जो

---

१ शत० ब्रा० ११।५।२।३ में **त्रयो वेदा अजायन्त अग्नेर्ऋग्वेदो वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात् सामवेदः।**

एक-एक अनन्त है तो **"य आत्मनि तिष्ठन्"** इत्यादि ब्राह्मण[1] वचन अर्थात् जो परमात्मा व्याप्य जीवों में व्यापक हो रहा है और ऐसा ही लाला जगन्नाथ ने "पृष्ठ ५। प्रश्नोत्तर ३२" के उत्तर में लिखा है कि "जीवेश्वर का व्याप्य व्यापक सम्बन्ध और
५ पृष्ठ ४ प्र० २१" "में जीव को अणु माना है।" जीव शरीर को छोड़ दूसरे शरीर में जाता और शरीर के मध्य में रहता है। इसलिये अनन्त वा असंख्य ईश्वर के ज्ञान में नहीं। किन्तु जीवों के ज्ञान में जीव असंख्य हैं। जिन लाला जगन्नाथदास वा मुन्शी इन्द्रमणिजी को अपने ग्रंथस्थ पूर्वापर विरुद्ध विषयों का ज्ञान भी नहीं
१० है तो आगे क्या आशा होती है। इसी से इनके सब प्रपंचों का उत्तर समझ लेना शिष्टों को योग्य है।

[पृष्ठ ४ प्र० २४] "जीव के गुण वास्तव में विभु हैं, परन्तु बद्धावस्था में अविद्या से आच्छादित होने से परिछिन्न हैं। मुक्तावस्था में विभु हो जाते हैं।"

१५ [समीक्षा] विभु गुण उसी के होते हैं जो द्रव्य भी विभु हो। और जिसको अणु मानते हैं क्या उसके गुण विभु कभी हो सकते हैं? क्योंकि गुणों का आधार द्रव्य होता है। भला कोई कह सकता है कि परिछिन्न द्रव्य में विभु गुण हों। क्या गुणी एक देशी और गुण विभु हो सकते हैं? और गुणी को छोड़ केवल गुण पृथक्
२० भी रह सकता है? नहीं! नहीं!! और जो (पृष्ठ ४। प्रश्नोत्तर २१) जीव को अणु माना है। वह भी ठीक नहीं। क्योंकि एक अणु में भी जीव रह सकता है। अर्थात् एक अणु में अनेक जीव रह सकते हैं। देखो अणु कांच वा पृथिवी आदि के मध्य में से पार नहीं जा सक्ता और जीव जा सकता है। इसीलिये जीव अणु से भी
२५ सूक्ष्म है और इसके गुण भी विभु नहीं। हां मुक्तावस्था में जिस ओर उसका ज्ञान होगा उस दूरस्थ पदार्थ को भी अपने ज्ञान से जान लेता है। नहीं तो **"युगपज्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसो लिङ्गम्"** इस न्याय शास्त्र [१।१।१६] के सूत्र का अर्थ ही नहीं घट सकेगा। जो एक क्षण में एक पदार्थ को जाने अनेक को नहीं, उसी को मन
३० कहते हैं। वही मन मुक्तावस्था में भी रह जाता। पुनः उसी मनरूप साधन से विभु गुण वाला जीव कैसे हो सकता है।

---

१. शत० १४।६।७।३२॥

[पृष्ठ ४ प्रश्न २५] "जीव परतन्त्र है।"

[समीक्षा] जीव किस के आधीन है? जो कहो कि परमेश्वर के तो जो कुछ जीव कर्म कर्त्ता है वह स्वतन्त्रता से वा ईश्वराधीनता से? जो ईश्वराधीनता से करता है तो जीव को पाप पुण्य का फल न होना चाहिये, किन्तु ईश्वर को होना चाहिये। जैसे सेना- ५
ध्यक्ष वा राजा की आज्ञा से कोई किसी को मारे वह अपराधी नहीं होता, अथवा किसी के मारने में लकड़ी तलवारादि शस्त्र [न] अपराधी और न दण्डनीय होते हैं, वैसे ही जीवों को भी दण्ड न होना चाहिये। किन्तु पाप पुण्य का फल सुख दुःख ईश्वर भोगे। इसलिये जीव अपने कर्म करने में सर्वदा स्वतन्त्र और पाप का फल १०
दुःख भोगने में ईश्वर की व्यवस्था से परतन्त्र रह जाते हैं जैसे चोर चोरी करने में स्वतन्त्र और राजदण्ड भोगने में परतन्त्र हो जाते हैं इसी प्रकार जीवों को भी जानो।

[पृष्ठ ४ प्रश्नोत्तर २८] "मुक्त जीव कर्म्मवश होकर कभी फिर संसार से नहीं आते। ईश्वरेच्छानुकूल अपनी इच्छा से केवल धर्म १५
रक्षा करने को आते हैं।"

[समीक्षा] पाठक गण! विचारिये यह अविद्या का प्रताप नहीं तो और क्या है? जो कहते हैं कि जीव संसार में कभी नहीं आते और ईश्वरेच्छानुकूल अपनी इच्छा से केवल धर्म रक्षा करने को आते भी हैं। धन्य! भला इस पूर्वापर विरुद्धता को गुरु और चेले २०
ने तनिक भी न समझा। विचारणीय है कि जिसका ज्ञान, सामर्थ्य, कर्म अन्त वाले हैं उसका फल अनन्त कैसे हो सकता है? और जो मुक्ति में से जीव संसार में न आवें तो संसार का उच्छेदन अर्थात् नाश ही हो जाय। और मुक्ति के स्थान में भीड़ भड़क्का हरद्वार के मेले के समान हो जाय। और ईश्वर भी अन्त वाले गुण कर्म्म २५
का फल अनन्त देवे तो वह न्यायरहित हो जाय। और परिमित गुण कर्म स्वभाव वाले जीव अनन्त आनन्द को भोग भी नहीं सके। फिर यह बात वेद तथा शास्त्र से विरुद्ध भी है। देखो "**अग्नेर्नूनं कतमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम। स नो मह्या अदितये**

पुनर्दात्पितरं च दृशेयं मातरं च" ऋग्वेद[1] वचन—अर्थ—हम उसी सुन्दर निष्पाप परमात्मा का नाम जानते हैं और स्वप्रकाश स्वरूप जगदीश्वर प्राप्तमोक्ष जीवों को पुनः अवधि पर संसार में माता पिता के दर्शन कराता है अर्थात् मुक्ति सुख को भुगा के पुनः संसार ५ में जन्म देता है॥ इसी प्रकार सांख्य शास्त्र में भी लिखा है **"नात्यन्तोच्छेदः"**[2] इत्यादि वचनों से यही सिद्ध होता है कि अत्यन्त जन्म मरण का छेदन [न] किसी का हुआ और न होगा, किन्तु समय पर पुनः जन्म लेता है। इत्यादि प्रमाणों और युक्तियों से मुक्त जीव भी पुनरावृत्ति में आते हैं।

१० [पृष्ठ ४ प्रश्नोत्तर ४०] "एक वृक्ष में एक ही जीव होता है न अनेक।"

[समीक्षा] जो एक वृक्ष में एक जीव होता तो प्रत्येक जीव [वृक्ष] में पृथक् पृथक् जीव कहां से आते और किसी वृक्ष की डाली काट कर लगाने से जम जाता है उसमें जीव कहां से आया, इस १५ लिये एक वृक्ष में अनेक जीव होते हैं।

[पृष्ठ ५ प्रश्नोत्तर ३५] अनेक पूर्व जन्मों के कर्म जो ईश्वर के ज्ञान में स्थित हैं वे सञ्चित कहलाते हैं।

[समीक्षा] क्या जीव का कर्म जीव के ज्ञान में सञ्चित नहीं होता? जो ऐसा न हो तो कर्म्मों के योग से पवित्रता और २० अपवित्रता जीव में न होवे। इसलिये जो जो अध्ययनादि कर्म जीव करते हैं उन का सञ्चय जीव ही में होता है, ईश्वर में नहीं। किन्तु ईश्वर तो केवल उन के कर्म्मों का ज्ञाता है और फल प्रदाता है।

[पृष्ठ १२—प्रश्नोत्तर ७७] "केवल देवता और शिष्ट पुरुषों के २५ नाम पर जन्माष्टम्यादि व्रत है। सो ईश्वरातिरिक्त किसी भी देवता की उपासना कर्तव्य नहीं।"

[समीक्षा] क्या शिष्ट पुरुषों से भिन्न भी कोई देवता है? विना पृथिव्यादि के तेतीस और वेदमन्त्र तथा माता पिता आचार्य

---

१. द्र० ऋ० १।२४।२॥ ऋग्वेद में 'अग्नेर्वयम्' पाठ है। 'अग्नेर्नू नम्' ३० पाठ स० प्र० के द्वितीय सं० पृष्ठ २३६ पर भी छपा था।

२. इस का पूरा पाठ है—इदानीमिव सर्वत्र नात्यन्तोच्छेदः। सांख्य १।१६०॥

अतिथि आदि के जिन का वेदों ने पूजन अर्थात् सम्यक् सत्कार करना कहा है। क्या यह भी मनुष्यों को कर्तव्य नहीं।

[पृष्ठ १३—प्रश्नोत्तर ८२] "जो कुछ ईश्वर ने नियत किया है उसमें न्यूनाधिक्य करने वाला कोई नहीं। जो बात जिस प्राणी के लिये जिस काल में जिस प्रकार से ईश्वर ने नियत की है उससे ५ विरुद्ध कभी नहीं होती।"

[समीक्षा] क्या ब्रह्मचर्य्य और योगाभ्यासादि उत्तम कर्मों से आयु का अधिक होना और कुपथ्य से वा व्यभिचारादि से न्यून नहीं होता? जब ईश्वर का नियत किया हुआ ही होता है तो जीव के कर्मों की अपेक्षा कुछ भी नहीं रह सकती। और जो अपेक्षा है १० तो केवल ईश्वर ने नियत नहीं किया किन्तु दोनों निमित्तों से होती है। जो हमारा क्रियमाण स्वतन्त्र न हो तो हम उन्नति को प्राप्त कभी नहीं हो सकते। इसीलिये हम कर्म करने में स्वतन्त्र और ईश्वर जीवों के कर्मों को यथायोग्य जानकर कर्म्मानुसार शुभाऽशुभ फल देने में स्वतन्त्र है। ऐसा माने विना ईश्वर में वे ही दोष आ १५ जावेंगे जो २५ वें प्रश्नोत्तर की समीक्षा में लिख आये हैं।

[पृष्ठ १३ - प्रश्नोत्तर ८४] "स्वर्ग संसारान्तर्गत है वा लोकान्तर ("उत्तर" स्वर्ग लोकविशेष) है वहां क्षुधा पिपासा बुढ़ापा आदि दुःख नहीं है।

[समीक्षा] क्या लोकान्तर का नाम संसार है नहीं। क्या विना २० मुक्ति के वा प्रलय अथवा स्थूल शरीर के क्षुधादि की निवृत्ति हो सकती है। ऐसे विशेष स्वर्गलोक को गुरु शिष्य देख आये होंगे। जो पूर्वमीमांसा को देखा होता तो ऐसी अन्यथा बातें क्यों लिखते। देखिये "**स एव स्वर्गः स्यात् सर्वान्प्रत्यविशिष्टत्वात्**" 'पूर्वमीमांसा'[1] का वचन। जो सर्वत्र अविशेष अर्थात् सुख विशेष की प्राप्ति का नाम २५ स्वर्ग और दुःख विशेष की प्राप्ति का नाम नरक लिखा है। सब जीवों को सब संसार में प्राप्त होता है किसी विशेष लोकान्तर ही में नहीं। और जहां शरीर धारण श्वास प्रश्वास भोग वृद्धि क्षय आदि होते हैं वहां क्षुधा पिपासा और बुड्ढापन आदि क्यों नहीं? यह सब अविद्या की बात है। ध्यान दीजिये वेद का कोष क्या ३०

---

१. पूर्वमीमांसा ४।३।१५॥ यहां 'एव' पद नहीं है।

कहता है (स्वः) साधारण नाम में है निघं १।४। "स्वः सुखं गच्छति यस्मिन् स स्वर्गः" जिस में सुख की प्राप्ति हो वह स्वर्ग कहाता है। परन्तु "**गौणमुख्ययोर्मध्ये मुख्ये कार्य्यं सम्प्रत्ययः**" यह व्याकरण महाभाष्यकार का[1] वचन है। इस से यह सिद्ध होता है
५ कि निर्मल धर्म्माऽनुष्ठानजन्य सत्य विद्यादि साधनों से सिद्ध आत्मीय और शारीरिक सुख विशेष है। उस प्रधान सुख की प्राप्ति का नाम स्वर्ग है ॥

[पृष्ठ १४—प्रश्नोत्तर ९१] "सम्पूर्ण जीव वास्तव में ईश्वर के दास हैं इस कारण मनुष्यों के नाम में ईश्वर वाच्य शब्द में दास
१० शब्द का प्रयोग करना अत्युत्तम है।"

समीक्षा यह शास्त्रीय व्यवहार से सर्वथा बाहर है। किन्तु केवल कपोलकल्पना मात्र ही है क्योंकि—

"शर्म्मवद् ब्राह्मणस्य स्याद् राज्ञो रक्षासमन्वितम्।
वैश्यस्य गुप्तिसंयुक्तं शूद्रस्य तु जुगुप्सितम् ॥"

[मनु० २।३२]

१५
जैसे ब्राह्मण का नाम विष्णु शर्म्मा, क्षत्रिय का विष्णु वर्म्मा, वैश्य का विष्णुगुप्त और शूद्र का विष्णुदास इस प्रकार नाम रखना चाहिये। जो कोई द्विज शूद्र बनना चाहे तो अपना नाम दास शब्दान्त धर ले और जो शास्त्रोक्त विधि छोड़ मनोमुख चले उस
२० को क्या कहना।

[पृष्ठ १६ प्रश्नोत्तर ९७] "परलोक और धर्मार्थ के फल तथा ईश्वर को न मानने वाले को नास्तिक कहते हैं।"

[समीक्षा] इसमें केवल इतनी ही न्यूनता है कि "**नास्तिको वेदनिन्दकः**"[2] जो लाला जगन्नाथदास और मुन्शी इन्द्रमणि जी ने
२५ मनुस्मृति पढ़ी वा अच्छे प्रकार से देखी भी होती तो वेद-निन्दक का नाम नास्तिक क्यों न लिखते, जिससे सब कुछ अर्थ आ जाता और लक्षण भी दृष्टि पड़ता।

[पृष्ठ –१६ प्रश्नोत्तर ९८] "हिन्दू" शब्द संस्कृत भाषा का नहीं है, पारसी भाषा में वास्तविक अर्थ "हिन्दुस्तान" के रहने
३० वाले का है और (काला, लुटेरा, गुलाम) "यह सांकेतिकार्थ हैं"।

---

१. महाभाष्य १।१।१५। २. मनुस्मृति ५।११॥

[समीक्षा] वह क्या ! जब संस्कृत भाषा का नहीं है तो इसका वास्तविक अर्थ कभी नहीं हो सक्ता,[1] वास्तविक अर्थ [में] इस देश वालों का नाम (आर्य्य) और इस देश का नाम "आर्य्यावर्त्त है"। इस सत्यार्थ को छोड़ असत्यार्थ की कल्पना करनी मुझ को तो अविद्या और हठ की लीला दृष्टि पड़ती है। जब "अर्बी" की (लुगात) नामक पुस्तक में लिखा है कि लुटेरे आदि का नाम हिन्दू है तो उस भाषा में वास्तविक नाम[2] क्यों नहीं ? केवल सांकेतिकार्थ क्यों ? अर्थात् जो कोई आर्य्य होकर अपने हिन्दू नाम होने में आग्रह करे उन्हीं का नाम काला, लुटेरा, गुलामादि का रहो, आर्य्य का नहीं।

[पृष्ठ १९—प्रश्नोत्तर १००] पहिले कहने वाला **"परमात्मा जयति"** कहे और उत्तर देने वाला **"जयति परमात्मा"** कहे।

[समीक्षा] यह कल्पना वेदादि शास्त्रों से विरुद्ध होने के कारण सर्वथा मिथ्या ही जान पड़ती है क्योंकि **"नमस्ते रुद्र मन्यवे०[3]। नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः[4]"** इत्यादि यजुर्वेद वचन **"परमर्षिभ्यो नमः[5] नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो"[6]** इत्यादि उपनिषद् वचन, इनसे निश्चित यही सिद्ध होता है कि परस्पर सत्कारार्थ (नमस्ते) शब्द से व्यवहार करने में वेदादि सत्यशास्त्रों का प्रमाण है और परस्पर अर्थ भी यथावत् घट जाता है जैसे (ते) तुभ्य वा तव अर्थात् जिसको मान्य देता है उसका वाची है और (नमः) शब्द नम्रार्थवाचक होने से नमस्कार कर्त्ता का बोधक है मैं तुम कूं नमता हूं अर्थात् (ते) आप वा तेरा मान्य वा सत्कार करता हूं। इसमें नमस्कर्त्ता और नमस्करणीय दोनों का परस्पर प्रसङ्ग प्रकाशित होता है और यही अभिप्राय दोनों का है कि दोनों प्रसन्न रहें और जो असम्बद्ध प्रलाप अर्थात् तीसरे परमेश्वर का प्रसङ्ग लाना

---

१. द्र०—ततश्चासत्यशब्देषु कुतस्तेष्वर्थसत्यता। भट्ट कुमारिल, तन्त्रवार्तिक १।३।९, पृष्ठ २३७, पूना सं०। इस का भाव है—असत्यशब्दों = अपशब्दों = असंस्कृत शब्दों में अर्थ की सत्यता वास्तविकता नहीं हो सकती है।

२. यहां 'नाम' शब्द के स्थान में 'अर्थ' शब्द होना चाहिये।

३. यजु: १६।१॥

४. यजु: १६।३२।

५. अनुपलब्ध।

६. तै० आर० ७।१ के अन्त में।

है सो व्यर्थ ही है। जैसे **"आम्रान् पृष्टः कोविदारानाचष्टे"** किसी ने किसी से पूछा कि आम्र के वृक्ष कौन से हैं उसने उसे उत्तर दिया कि यह कचनार के वृक्ष हैं, क्या ऐसी ही यह बात नहीं है? किसी ने ईश्वर का प्रश्न पूछा ही नहीं और न कोई परस्पर
५ सत्कार के व्यवहार में ईश्वर प्रसङ्ग है और कह देना कि (परमात्मा सारे उत्कर्षों के साथ विराजमान है) यह वचन हठयुक्त का नहीं है तो और क्या है? हां, जहां परमात्मा की स्तुति प्रार्थना उपासना उपदेश और व्याख्या करने का प्रसङ्ग हो तो वहां परमात्मा के नाम का उच्चारण करना सब को उचित है। जैसा
१० राम राम, जय गोपाल, जय श्री कृष्णादि शब्दों से परस्पर व्यवहार करना यह हठ दुराग्रह से सम्प्रदाई लोगों ने वेदादि शास्त्रविरुद्ध मनमानी व्यर्थ कल्पना की है, उसी प्रकार से मुंशी इन्द्रमणि जी वा ला० जगन्नाथदास जी की युक्ति और प्रमाण से शून्य यह कल्पना दृष्टि पड़ती है। इन विषयों में मुंशी इन्द्रमणि जी
१५ और स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का सम्वाद भी पूर्व समय में हो चुका है। परन्तु मुंशी जी कब मानते हैं। विशेष क्या लिखें, शोक है कि लाला जगन्नाथदास की करतूतों को विचार अब मुझ को यह कहना पड़ा कि इन दोनों महात्माओं[1] के प्रतिज्ञा से विरुद्ध करना आदि अन्यथा व्यवहारों को जो कोई सज्जन पुरुष जानना
२० चाहै वे आर्य्यसमाज मेरठ लाला रामसरनदासादि भद्र पुरुषों से पूछ देखें कि एक अन्य मार्गियों के विवाद विषय की शान्तिकारक व्यवहार प्रसङ्ग में इन्होंने कैसा-कैसा विपरीत व्यवहार किया, जिस को सब जानकार आर्य्य लोग जानते हैं। सत्य यह बात चली आती है कि "सब पापों का पाप लोभ है[2]" जो कोई उसी तृष्णारूपी नदी प्रवाह में बहे जाते हैं उन में पवित्र वेदोक्त आर्य्य धर्म्म
२५ की स्थिरता होनी कठिन है। अब जो मुन्शी इन्द्रमणि जी और उनके चेले लाला जगन्नाथदास, स्वामी जी और भद्र आर्य्यों की व्यर्थ निन्दा करें तो इसमें क्या आश्चर्य है? पाठकगण! ठीक भी तो है जब जैसे में वैसा मिले फिर क्या न्यूनता रहै। जैसे दावानल

---

३० १. अर्थात् मुंशी इन्द्रमणि और लाला जगन्नाथदास। 'महात्माओं' यह व्यङ्ग्यात्मक वचन है।

२. लोभश्चेद् गुणेन किम्? भर्तृहरि नीतिशतक।

अग्नि का सहायक वायु होता है वैसे ही इन के श्री मुन्शी बखतावरसिंह जी सहायकारी बन बैठे। अब तो जितनी निन्दा आर्य्य लोगों और स्वामी की करें उतनी ही थोड़ी। चलो भाई यह भी अच्छी मंडली जुड़ी, महाशयो! जब तक तुम्हारा पेट न भरे तब तक निन्दा करने में कसर न रखना, क्योंकि यह अवसर अच्छा मिला है। जैसे किसी कवि ने यह श्लोक कहा है सो बहुत ठीक है। ५

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः[1] ॥१॥ १०

चाहे कोई अपने मतलब की नीति में चतुर निन्दा करे वा स्तुति करै, चाहै लक्ष्मी प्राप्त हो वा चली जाओ, चाहे मरण आज ही हो वा वर्षान्तरों में, परन्तु जो धीर पुरुष महाशय महात्मा आप्तजन हैं वे धर्म्म मार्ग से एक पाद भी विरुद्ध अर्थात् अधर्म मार्ग में नहीं चलते हैं ॥१॥ १५

सभ्य गणो! यह तो आर्यों की शुभेक्षा का कारण हैं, परन्तु जो प्रथम उत्तमाचरण करके पश्चात् गड़बड़ा जायं वे ही तो आर्य्यावर्त के हानिकारक होते हैं। परन्तु यह सदा ध्यान में रखना चाहिये कि **"श्रेयांसि बहुविघ्नानि"**[2] जो इस सनातन वेदोक्त सत्य धर्म का आचरण करते हैं उस में अनेक विघ्न क्यों न होय, तदपि इस सत्यमार्ग से चलायमान न होना चाहिये। सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर परमात्मा अपनी कृपा दृष्टि से इन विघ्नों को हम से और हम को इन से सर्वदा दूर रख कर हम से आर्यावर्त की उन्नति कराने में सहायक रहे। इस थोड़े से लेख से सज्जन पुरुष बहुत सा जान लेंगे। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु ॥ २० २५

एक उचित वक्ता

—:o:—

१. यह भर्तृहरिकृत नीतिशतक का वचन है।

२. यह सुभाषित वचन है।

[पूर्ण संख्या ६६४] पत्र

ओ३म्'

श्री स्वस्ति परोपकारप्रिय सद्गुणविभूषित महाशय बाबू रूपसिंहाभिधेयेषु रामानन्द ब्रह्मचारिणो शतधाऽऽशिषो भूयासुस्तमां, शमिहास्ति तत्र भवदीयं च नित्यमेधमानमाशासे।

महाशय ! नमस्ते। आप का शुभ समाचारों से अलंकृत अनुग्रह पत्र (मालवा नवाब का जावरा) में सुशोभित हुआ। अवलोकन कर अतीव हर्षित हुआ। परमात्मा से सर्वदा यही प्रार्थना करता हूं कि आप महाशय पुरुषों की बुद्धि को परोपकार के करने में निरन्तर नियुक्त किया करे, जिससे पुनः यह आर्यावर्त्त देश अपनी पूर्व दशा को सम्प्राप्त होकर अपने मनुष्यरूपी वृक्ष में धर्म अर्थ काम और मोक्ष रूपी चतुष्टयफलों से संयुक्त होकर परमानन्द भोगे। धन्य है आप के पिताजी को जिन महाशय की ऐसी विशाल बुद्धि कि जो इस महोपकारक गोरक्षार्थ विषय को श्रवण कर अति हर्षित हुए और आप को उत्साही किया। परमात्मा करे ऐसे ही पिता सब के होवें। और आप मेरा मान्य पूर्वक आशीर्वाद भी विदित कीजियेगा। मैं नाम से विदित नहीं हूं, परन्तु उनकी ऐसी योग्यता के जानने से मुझको अति आनन्द हुआ और ऐसे परोपकार प्रियों के नाम से विदित होने की भी चेष्टा हुई। आशा है कि आप विदित कर देंगे। दूसरा यह हर्ष हुआ कि अब आप का उद्वाह होने वाला है और आपकी योग्यता भी हुई अत्युत्तम है आप प्रसन्नता के साथ अपना विवाह कीजिये। आप बहुत सारी बातें जानते भी हैं। तथापि मेरा मन नहीं मानता, इस कारण लिखता हूं। देखिये मूल कारण आर्य्य[ा]वर्त्त के सुधार होने का उचित समय पर विवाह का होना और सत्योपदेश। गृहाश्रम केवल भोग विलास के अर्थ नहीं, किन्तु संसार की उन्नति के अर्थ है। अर्थात् संस्कारविधि के अनुसार विवाहाऽनन्तर उचित समय पर क्रिया करना। इस आश्रम का मुख्य फल यही है कि सुन्दर, धीर, वीर, विद्यादि शुभ गुण युक्त पुत्र रूपी फल की प्राप्ति होना। विना विधि के साङ्गोपाङ्ग कोई भी कार्य सिद्ध नहीं होता। इसलिये

१. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

उचित समय पर जो आप को जिज्ञासा हो पत्र द्वारा विदित करना। मैं (श्रीयुत परम पूज्य गुरु जी) से पूछ कर आपको विदित करूंगा, वैसा ही करना होगा। आप विवाह किये पश्चात् इस महोपकारार्थ पंजाब हाथा और काश्मीर आदि **राजधानियों में जा गोरक्षा के विषय में (गोकरुणानिधि) के अनुसार व्याख्यान देकर** ५ **सही करावें** तो क्या ही अत्युत्तम बात होवे कि जिसकी उपमा भी मैं देने में असमर्थ हूं। परन्तु इतना तो कह सकता हूं कि थोड़े ही श्रम से महापुण्य का सञ्चय कर अपने मनुष्य जन्म को सफल कर लोगे। जो तुम ने सही करा के भेजी थी वह हमारे पास मुम्बई में पहुंची अब जिन जिन मनुष्यों की सही कराई जाय, वह प्राय: देव- १० नागरी के अक्षरों में होनी चाहिये। और स्पष्ट अक्षर जिससे स्पष्टता से नाम बंच जावे, परन्तु जो पुरुष अप[ना] नाम किसी विद्या में न लिख सके उसका नाम सही कराने वाला पुरुष उसकी सम्मति से लिख दे और एक बही के समान पत्रों को बना कर उस में सब गोरक्षाप्रिय मनुष्यों की सही करानी। पश्चात् उस ग्राम वा १५ नगर में जो माननीय प्रतिष्ठित पुरुष हो उससे हस्ता[क्ष]र गवाही के समान सही कराने के पत्र पर इस प्रका[र क]राना कि (हमारे यहां इतने मनुष्यों की सही हुई। पश्चात् अपना नाम लिख दे।) यह रीति पीछे से श्री स्वामी जी ने प्रकट की है। इस प्रकार के लेख से किन्हीं को राजसम्बन्धी भय न होगा। यह डरपुकनों के २० लिये है। मुख्य तो विज्ञापनपत्र[1] के अनुसार सही कराना। गो-रक्षार्थ आजकल भारतमित्र कलकत्ता ने पत्र छपवा के सही करा रहा है। मुम्बई के लोगों ने भी बहुत सी सही करली और बराबर कराते जाते हैं और गुजरात आदि देशों में भी सही होती है। और स्वामी [जी] के पास मेवाड़ महाराजाधिराज नाहरसिंह जी ने २५ ४०००(०) इतने हजार मनुष्यों की ओर से सही करके भेज दी है। और मध्य देश में भी बहुत सी सही हो गई। प्रति दिवस होती जाती है। **इस महोपकारक काम में डाक वालों ने दुष्टता बहुत सी की है**[2]। क्योंकि बहुत से स्थानों को पत्र भेजे,

१. पूर्ण संख्या ६२९ पृष्ठ ६६५। ३०

२. इस बात का संकेत कई पत्रों में है। बुद्धिमान् पाठकों को इस का रहस्य समझना चाहिये।

परन्तु उन के पत्र आने से यह विदित हुआ कि उनके पास नहीं पहुंचे। देखिये आश्चर्य की बात है (लाला रामशरणदास मेरठ के पास) **३०० पत्र रजिस्ट्री कराके भेजे थे इतने पर भी उनके पास न पहुंचे, पुनः उनके पास ५० पत्र भेजे हैं।**[1] **परमात्मा कृपा करे**
५ **कि ऐसे ऐसे विघ्नकारी राक्षसों से** बचा कर इस महोपकारक कार्य की सिद्धि करने में आर्य भाइयों को सहायता देकर इस कार्य की सिद्धि करावे। किमधिकलेखेन परोपकारप्रियेषु। **आज वा कल परम गुरु जी उदयपुर पधारेंगे।**

ता० २४ जुलाई १८८२ ई०[2]। रामानन्द ब्रह्मचारी
१० मालवा जावरा नवाव का

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६९५] **पत्र**

(ओ३म्)

लाला कालीचरणदास रामचरण जी आनन्दित रहो[3]।

विदित हो कि प्रथम तो तुम लिखते थे कि शीघ्र (आर्यप्रश्नो-
१५ त्तरी) के विस्तारपूर्वक प्रत्युत्तर लिख के भेज दीजिये। जब भेज दिये तो अब कहते हो कि कानून बनकर आवे तो छापें। छपाने में विलम्ब करना अच्छा नहीं। जो उसमें कोई शब्द निकालने योग्य हो तो निकाल दीजिये। परन्तु जो जो उनके अभिप्राय के शब्द हैं उनमें कुछ न्यूनाधिक न करना॥

२० **कल हम (मालवा नवाब के जावरा से चितोड़गढ़) में आ पहुंचे।** यहां के हाकिम ठाकर जगन्नाथ जी ने हमारे लिये यथा-योग्य प्रबन्ध किया है। **अब दो एक दिन में उदयपुर जायेंगे।** अनुमान है कि चातुर्मास वहीं होगा।[4]

१. इतना काले टाइप में छपा पाठ पत्र में काट दिया गया है।

२५ २. प्रथम श्रावण शुक्ल ६, सोम, सं० १९३९।

३. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में सुरक्षित है। म० मामराजजी ने जनवरी सन् १९२७ में प्रतिलिपि की। फर्रुखाबाद का इतिहास पृष्ठ १९६ पर भी छपा है।

४. यह अन्तिम पंक्ति पं० लेखराम संपा० उर्दू जीवन चरित पृष्ठ ५५६
३० (हिन्दी सं० पृष्ठ ५९६) पर उद्धृत है। हम ने मूल पत्र से इसे छापा है।

ता० २६ जुलाई सन् १८८२ ई०[1]।

[दयानन्द सरस्वती] (चितोड़गढ़ मेवाड़)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६९६]　　　पत्र-सूचना

[राजराणा फतेहसिंह जी, देलवाड़ा][2]

कुशल क्षेम का समाचार पूछा।　　५

[द्वितीय] श्रावण कृष्ण १२ [सं० १९३९][3]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६९७]　　　पत्र-सूचना

[मुन्नालाल जी, मन्त्री आ० स० अजमेर]

आर्य प्रश्नोत्तरी के उत्तर देशहितैषी में छापने के विषय में[4]

१४ अगस्त १८८२[5]।　　१०

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६९८]　　　पत्र

ओ३म्

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो[6]।

विदित हो कि **आज ४ वा ५ दिन व्यतीत हुए हैं, हम उदयपुर में आके नौलखा बाग के महल में ठहरे हैं**[7]। यहां सब प्रकार　　१५

---

१. प्रथम श्रावण शुक्ल ११, बुध, सं० १९३९।

२. इस पत्र की सूचना राजराणा फतेहसिंह के सं० १९३९ अधिक श्रावण सुदि ४ के पत्र से मिलती है। राजराणा फतेहसिंह का पत्र तीसरे भाग में देखें। वे राजराणा महाराणा सज्जनसिंह के पश्चात् उदयपुर की गद्दी पर बैठे थे।　　२०

३. १० अगस्त १८८२। तिथि का उल्लेख राजराणा के पत्र में है।

४. इस पत्र की सूचना अगले पूर्ण संख्या ६९८ के पत्र में है।

५. द्वितीय श्रावण शुक्ल १, सोम, सं० १९३९।

६. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में सुरक्षित है। जनवरी सन् १९२७ में म० मामराज जी ने उसकी प्रतिलिपि की। फर्रुखाबाद का इतिहास पृष्ठ १९७ पर भी छपा है।　　२५

७. पत्र १४ अगस्त १८८२ का है, अतः स्वामी जी लगभग १० अगस्त को उदयपुर पहुंचे होंगे।

आनन्द मङ्गल है। बहुत दिन हो गये हैं, अभी तक "आर्य प्रश्नोत्तरी" के उत्तर नहीं छपवाये[1] क्या कारण है। जो प्रेस एक्ट की शङ्का हो तो देखत पत्र के पण्डित मुन्नालाल मन्त्री आर्यसमाज अजमेर के पास भेज दीजिये। वे छाप देंगे। इस विषय में पत्र भी आज उनके पास भेज दिया है। जो छप चुकी हो तो शीघ्र विदित करो।

और गोरक्षार्थ कितनी सही हो चुकी। इस का भी उत्तर लिखना। इस समय (आर्यभाषा के) राजकार्य में प्रवृत्त होने के अर्थ जो मोमरियल छपे हैं[1] सो शीघ्र भेजना। और आप लोग भी जहां तक हो सके **गोरक्षार्थ सही और आर्यभाषा के राजकार्य में प्रवृत्त होने के अर्थ शीघ्र प्रयत्न कीजिये**। और फर्रुखाबाद के आर्य्यसमाज तथा पाठशाला का जैसा वर्तमान हो लिखना। और हम भी जो कुछ विशेष यहां का समाचार लिखने योग्य होगा लिखेंगे।

१४ अगस्त सन् १८८२ ई०[2] [दयानन्द सरस्वती] (उदयपुर)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ६९९] **पत्र**

ओ३म्[3]

स्वस्ति श्रीमद्वर-सद्गुण-समूहालंकृतेभ्यो राजराजाऽधि[4]-श्रीयुतनाहरसिंहवर्म्मभ्यो दयानन्दसरस्वती-स्वामिन आशिषो भूयासुस्तमां शमिहास्ति तत्र भवदीयं च नित्यमेधमानमाशासे। उदन्नु[5] नृगिरा[6] वेदितव्यः। विदित हो कि अब हम परमात्मा की कृपा से

---

१. ऋषि दयानन्द की प्रेरणा से आर्य भाषा को राजकार्य में प्रवृत्त कराने के हेतु अनेक स्थानों से मेमोरियल भेजे गये थे। उन में से नमूने के रूप में आर्यसमाज मेरठ द्वारा प्रेषित मेमोरियल तथा कानपुर से प्रेषित निवेदन की प्रतिलिपि हम परिशिष्ट ४ में छाप रहे हैं।

२. द्वितीय श्रावण शु० १, सोम, १९३९।

३. मूल पत्र राजकार्यालय शाहपुरा में सुरक्षित है।

४. राजराजेषु अधि। शौण्डादिगण (काशिका २।१।४०) में 'अधि' का पाठ होने से सप्तमी समास जानना चाहिये।

५. 'उदन्नु'—उदं नु। वद धातु से घञर्थ में 'क' प्रत्यय। कित् होने से सम्प्रसारण—उद = वार्ता। अथवा 'उदन्तन्नु' पाठ होना चाहिये। उदन्त = वार्ता का वाची है।

६. नृगिरा = सामान्य जन भाषा।

उदयपुर में पहुंच कर नौलखा बाग के राजमन्दिर में निवास किया है। और एक दिन श्रीयुत आर्य्यकुल-दिवाकर भी सुशोभित हुए थे। कोई एक दो कला पर्य्यन्त अच्छे-अच्छे विषयों में चर्चा भी हुई थी। और पश्चात् जो जो लिखने योग्य वर्तमान होगा वह श्रीमान् के निवेदन किया जावेगा। ५

श्रीमान् अपने कुशल समाचारों को विदित किया करें। प्रथम तो श्रीमान् महाशयों ने करुणा पूर्वक ४०००० हजार पुरुषों की ओर से हस्ताक्षर कर पत्र मम्बापुरी में हमारे पास भेजा था, परन्तु अब इस विषय में श्रीमानों के प्रबन्ध से कितनी सही हुई है। जो भवान् सदृश महाशय इन महोपकारक माता पिता के १० समान संसार के रक्षक करुणापात्र गायादि पशुओं के दुःख निवारणार्थ प्रयत्न किया है वा करते जाते हैं, वह अवश्य सफल होकर इस आर्य्यावर्त्त की औषधिरूप होकर सब आर्यों के हृदय की अग्नि को शान्त करेगा।

किमधिकलेखेन श्रीमद्राजाधिराजबुद्धिमद्विचक्षणेषु अलमिति॥ १५

श्रावण[1] शुक्ल १ मङ्गल संवत् १९३९[2]। (उदयपुर)

[दयानन्द सरस्वती]

--:o: -

[पूर्ण संख्या ७००]　　　पत्र

ओ३म्[3]

श्रीयुत बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो। २०

विदित हो कि हम मुम्बई से चलकर ठहरते ठहराते अब उदयपुर में पहुंच कर नौलखा बाग के राजमहल में निवास किया है।

---

१. यह द्वितीय श्रावण है। शुक्ल १ को सोमवार था। क्या प्रतिलिपि करने वाले ने २ को १ तो नहीं पढ़ा।

२. १५ अगस्त १८८२। २५

३. पहले हम ने इस पत्र का लगभग आधा उत्तर भाग बंगाली बाबू श्री देवेन्द्रनाथ के संग्रह से श्री पं० घासीराम जी की कृपा से म० मामराज द्वारा अक्टूबर १९२६ में प्राप्त किया था। फिर ला० मामराज फर्रुखाबाद से सन् १९२७ में मूल पत्र की प्रतिलिपि लाये। मूल पत्र फर्रुखाबाद आर्यसमाज में सुरक्षित है। फर्रुखाबाद का इतिहास पृ० २१६ से २१८ पर ३० किंचित् शब्दभेद के साथ छपा है।

एक दिन श्रीयुत आर्य्यकुलदिवाकर श्री महाराणा जी पधारे थे। अच्छे विषयों में वार्त्तालाप हुआ। और राजपुरुष प्रतिदिन आया जाया करते हैं। यथायोग्य प्रश्नोत्तर भी होते हैं। जो आगे विशेष वर्तमान लिखने योग्य होगा विदित करेंगे। आशा है कि आप
५ अपना कुशल क्षेम का भी समाचार लिखेंगे।

बड़े आश्चर्य का विषय है कि पुकारते तो हैं हमारी उन्नति हो, परन्तु उन्नतिकारक विषय जब आ पड़ता है तब ऐसे निरुत्साही और भयातुर होकर चुपचाप बैठे रहते हैं। क्या ऐसी ही बातों से उन्नति होने कि आशा करते हैं। देखिये लाला काली-
१० चरण जी ने प्रथम चिट्ठी पर चिट्ठी[1] भेजीं और बड़ी शीघ्रता के साथ लिखा कि (मुरादाबाद वाले जगन्नाथ निर्मित प्रश्नोत्तरी के) विस्तारपूर्वक उत्तर प्रमाणों के साथ भेजिये[1]। जब हमने वेदभाष्य के काम को छोड़ प्रमाण सहित उत्तर लिख रजष्टरी कराके भेज दिये और उसके साथ एक पत्र भी भेजा कि शीघ्र छपवा कर
१५ प्रसिद्ध कर देओ[2]। उस शीघ्रता का फल यह हुआ कि अब दो महीने व्यतीत हुए एक अक्षर भी नहीं छपवाया। लिखा कि प्रश[3] एकट होने वाला है। उसको देख पश्चात् छपवावेंगे। यह इनको केवल किसी के बहकाने से भ्रम मात्र हुआ है। क्योंकि जो ऐसा होता तो भारतमित्रादि पत्रों में अवश्य छपता। अथवा अन्य
२० मनुष्यों के द्वारा भी सुनने में आता। सो केवल प्रश[3] एकट के भ्रम होने से डर गये हैं। भला ऐसे ऐसे सद्यः कर्त्तव्य कर्मों के करने में भ्रम मात्र से डरकर निरुत्साही हो जाना अवनति का कारण नहीं तो क्या है। इसलिये —

आप उस प्रश्नोत्तरी के उत्तरों को लेके पण्डित मुन्नालाल मन्त्री
२५ आर्य्यसमाज अजमेर के पास देखत पत्र के भेज दीजिये। अथवा जो अगले भारतसुदशाप्रवर्तक के अङ्क में छपने का प्रारम्भ हो गया हो कुछ तो चिन्ता नहीं। दूसरी अति शोक करने की यह बात है कि आजकल सर्वत्र **अपनी आर्यभाषा के राजकार्य में प्रवृत्ति होने**

---

१. ये चिट्ठियां उपलब्ध नहीं हुईं।
३० २. देखो पत्र पूर्ण संख्या ६६१।
३. अर्थात् प्रेस एक्ट।

के अर्थ (भाषा के प्रचारार्थ जो कमीशन हुआ है) उसमें पंजाब हाथा आदि से मेमोरीयल भेजे गये हैं। परन्तु मध्यप्रान्त, फरुखाबाद, कानपुर, बनारस आदि स्थानों से नहीं भेजे गये। ऐसा ज्ञात हुआ है। और गत दिवस नैनीताल की सभा की ओर से एक इसी विषय में पत्र आया था। उसके अवलोकन से निश्चय हुआ कि पश्चिमोत्तर देश से मेमोरियल नहीं गये। और हम को लिखा है कि आप इस विषय में प्रयत्न कीजिये। अब कहिये हम अकेले सर्वत्र कैसे घूम सकते हैं। जो यही एक काम हो तो कुछ चिन्ता नहीं। इसलिये आप को अति उचित है **कि मध्यदेश में सर्वत्र पत्र भेज कर बनारस आदि स्थानों से और जहां जहां परिचय हो सब नगर वा ग्रामों से मेमोरियल भिजवाइये। यह काम एक के करने का नहीं। और अवसर चूके वह अवसर आना दुर्लभ है। जो यह कार्य सिद्ध हुआ तो आशा है कि मुख्य सुधार की नीव पड़ जावेगी**। आप स्वयं बुद्धिमान् हैं। इसलिये विशेष लिखना आवश्यक नहीं। **और गोरक्षार्थ कितनी सही हुई है**। इस विषय में ध्यान देना अवश्य है। **बड़े हर्ष के ये दोनों विषय प्रकाशित हुए हैं**। इस लिये जहां लों हो सके तन मन धन से सब आर्यों को अति उचित है इन दोनों कार्यों के सिद्ध करने में प्रयत्न करें। वारंवार ऐसा निश्चय होता है कि ये दो सौभाग्यकारक अंकुर आर्यों के कल्याणार्थ उगे हैं। अब हाथ पसार न लेवे तो इस से दौर्भाग्य [की] दूसरी क्या बात होगी। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्य्येषु। लाला निर्भयराम से हमारा आशीर्वाद कहियेगा।

शुद्ध श्रावण शुक्ल ३ बृहस्पति सम्वत् १९३९[1]।

[दयानन्द सरस्वती] (उदयपुर)

—:०:—

१. शुद्ध श्रावण शुक्ल अर्थात् द्वितीय श्रावण का शुक्ल पक्ष। उत्तर भारतीय पञ्चाङ्गों की यह रीति है कि जिस वर्ष जो मास अधिक होता है, उसे शुद्ध मास के कृष्णपक्ष के बाद में गिनते हैं। अर्थात् प्रथम शुद्ध मास का कृष्ण पक्ष, तदनन्तर अधिक मास का शुक्ल पक्ष, तदनन्तर अधिक मास का कृष्ण पक्ष और तदनन्तर शुद्ध मास का शुक्ल पक्ष। तदनुसार १७ अगस्त सं० १८८२ को यह पत्र लिखा गया।

[पूर्ण संख्या ७०१] पत्र

(ओ३म्)

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो[1]।

विदित रहो कि पत्र तुम्हारा आया। समाचार मालूम हुआ।
५ **तुम ने 'आर्य प्रश्नोत्तरी' के उत्तर अजमेर पण्डित मुन्नालाल जी के पास भेज दिये। अच्छा किया। अब वे शीघ्र छाप डालेंगे।** विद्यार्थियों को निम्न लेखानुसार ग्रन्थ पढ़ना पढ़ाना चाहिये। **कि प्रथम क्रम से वेदाङ्गप्रकाश पढ़वाना।** फिर वैदिक निघण्टु। फिर पिङ्गल सूत्र। पश्चात् काव्य की रीति से मनुस्मृति। इत्यादि ग्रन्थ जब पढ़
१० चुकें तब आगे पूछना। और हम यहां आनन्द मंगल में हैं। आशा है कि परमेश्वर की कृपा से तुम भी कुशल युक्त होगे। सब से हमारा आशीर्वाद कह देना। द्वितीय श्रावण शुदी १० गुरु संवत् १९३९[2]।

[दयानन्द सरस्वती]

१५ [राज मेवाड़ उदयपुर]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७०२] पत्र

ओ३म्[3]

श्रीयुत पण्डित गोपालराव जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि गोरक्षार्थ हस्ताक्षर पत्र के सहित आप का
२० **कुशल पत्र पहुंचा।** पत्रस्थ समाचार के अवलोकन करने से अत्यन्त हर्ष हुआ। यह आप ने सर्वोपकारक धन्यवादार्ह पुरुषार्थ किया। परमात्मा दिन प्रति ऐसे ही कर्मों के सिद्ध करने में उत्साही करे। आशा है कि **आर्यभाषा के प्रचारार्थ भी आप स्वपुरुषार्थ की प्रकटता करेंगे।** हम उदयपुर पहुंच कर नौलखा बाग के राज

---

२५ १. मूल पत्र आर्य स० फर्रुखाबाद में सुरक्षित है। दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज ने इसकी प्रतिलिपि की। फर्रुखाबाद का इतिहास पृ० २०० पर भी छपा है।

२. ता० २४ अगस्त १८८२।

३. दयानन्द दिग्विजयार्क तृतीय खण्ड पृष्ठ ७९ से उद्धृत। फर्रुखाबाद
३० का इतिहास पृष्ठ २०० पर भी छपा है।

महलों में ठहरे हैं। **एक बार श्रीयुत आर्यकुल दिवाकर श्री महाराणा साहब पधारे। परस्पर प्रेम प्रीति के साथ समागम हुआ। जैसा उन का नाम है वैसे ही गुण भी देखे।** इत्यादि[1]। द्वितीय श्रावण [शुदी] १२ शनि सम्वत् १९३९[2]।

(दयानन्द सरस्वती)   ५

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७०३]   पत्र-सूचना

[श्री राव बहादुरसिंह जी मसूदा।
दुतीक श्रावण शुदी १२[2] उदयपुर][3]।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७०४]   पत्र-सूचना

[छगनलाल मसूदा]।   १०

······ महाराज गजसिंह जी और उनके भाई भी व्याख्यान में आये।[4]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७०५]   पत्र-सारांश

[भीमसेन]

---

१. पत्र पूर्ण संख्या ६९९ के अनुसार १५ अगस्त तक महाराणा जी   १५
एक बार ही आए। और पुन: २६ तक नहीं मिले। २९ को मिले, देखो पत्र पूर्ण संख्या ७०८।

२. २६ अगस्त १८८२।

३. इस पत्र का संकेत महाराज बहादुरसिंह (मसूदा) के सं० १९३९ भाद्र सुदि ६ सोमवार (=१८ सितम्बर १८८२) के पत्र में मिलता है।   २०
महाराजा बहादुरसिंह का पत्र तीसरे भाग में देखें।

४. राव बहादुरसिंह जी मसूदा ने सं० १९३९ भाद्र सुदि ६, सोमवार, (=१८ सितम्बर १८८२) के अपने पत्र में पं० छगनलाल मसूदा के नाम आए पत्र में से यह पंक्ति लिखी है। इस पत्र की तिथि पिछले पत्र की तिथि ही अर्थात् द्वितीय श्रावण सुदी १२ होगी।   २५

हम अपने पास तुम को २२) नकद और अन्न वस्त्र भी दिया करेंगे। और छुट्टी में भी उतना ही मासिक दे दिया जावेगा[1]।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७०६] पारसल-सूचना

[मुंशी समर्थदान, प्रयाग]

५ ऋग्वेदभाष्य के दो पृष्ठ और यजुर्वेदभाष्य के पत्रे।[2]

—:०:—

[पूर्णसंख्या ७०७] पारसल-सूचना

मुंशी समर्थदान, प्रयाग]

सत्यार्थप्रकाश भूमिका पृष्ठ ५, तथा प्रथम समुल्लास के ३२ पृष्ठ[3]।

१० भाद्र वदी १, मङ्गल, सं० १९३९[4]।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७०८] पत्र

प्रवन्ध-कर्त्ता मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो[5]!

विदित हो कि ऋग्वेद के दो पृष्ठ हमने भेज दिये, पहुंचे होंगे। और यजुर्वेद के भी भेजे हैं। **आज सत्यार्थप्रकाश के शुद्ध करके ५**
१५ **पृष्ठ भूमिका के और ३२ पृष्ठ प्रथम समुल्लास से भेजे हैं, पहुंचेंगे। भीमसेन के पास हमने पत्र भेज दिया** और यह लिख दिया कि हम अपने पास तुझको २२) नगद और अन्न वस्त्र भी दिया करेंगे।

---

१. यह सारांश पूर्ण संख्या ७०८ में निर्दिष्ट है। तिथि अज्ञात है।

२. इस पारसल की सूचना ऋ० द० के पूर्ण संख्या ७०८ के पत्र से
२० मिलती है। तिथि अज्ञात है। पत्र में 'पहुंचे होंगे' लेख से विदित होता है कि पत्र लिखने की भाद्र वदी १, सं० १९३९ (=२९ अगस्त १८८२) तिथि से ४-५ दिन पूर्व अवश्य भेजे होंगे। ३. इस पारसल की सूचना भी ऋ० द० के पूर्ण संख्या ७०८ के पत्र से ही मिलती है।

४. यह तिथि पूर्ण संख्या ७०८ के पत्र में 'आज' पद के अनुसार दी
२५ है। २९ अगस्त १८८२।

५. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है। पहली तीन पंक्तियां Works of Maharshi Dayanand, पृ० १२९ पर भी छपी हैं।

और छुट्टी में भी उतना ही मासिक दे दिया जायगा। उसका स्व-भाव है कि जब तक रुपये पास रहेंगे तब तक ऐसा ही करेगा। तुम भी उसको पत्र लिख देना, शीघ्र चला आवे।

वहां क्या ज्वालादत्त एक फार्म के लिये भी तैयार नहीं कर सकता। वह बड़ा लिखने वाला है। ये दोनों एक से ही हैं। जैसा भूतनाथ वैसा प्रेतनाथ। इनसे चतुराई के साथ काम लेना। ये काम-चोर हैं।

निम्नलिखित पुस्तकें पहुंची

भूमिका	५	स्त्रैगस्ता	१
चांदापुर	२४	वर्णो	२
संध्या	५०	गोकरु०	५०
व्यवहा०	१०	भूमि०	२५
संस्कृत	४	अनु०	२५
संधि	१	आर्यो०	४९
नामि	१	शास्त्रा०[1]	२५
कारकी	१	गोतम०[2]	२५
सामासी	१		

आज श्रीयुत महाराणा जी इस बाग में प्रातःकाल से पधारे हैं। अब सायंकाल से रात्री के समय में वार्तालाप होगा। जो लिखने योग्य समाचार होगा सो लिखेंगे। यहां हम आनन्दमंगल में हैं। तुम वहां सब से अच्छी प्रकार काम लेना। आशा है तुम अच्छे प्रकार प्रबन्ध करोगे। और यन्त्रालयस्थों से आशीर्वाद कह देना।

भाद्र बदी १ मंगल सम्वत् १९३९[3]।　　　[दयानन्द सरस्वती]

(राज मेवाड़ उदयपुर)

—:०:—

१. सम्भवतः 'शास्त्रार्थ जालन्धर'। देखो पृष्ठ ६९४ (पं० ८) पर निर्दिष्ट 'जालन्धर की बहस'।

२. गोतम अहल्या की कथा। इसके विषय में 'ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास' पृष्ठ १२८ देखें।

३. २९ अगस्त १८८२।

[पूर्ण संख्या ७०६] **पत्र**

ओ३म्[1]

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि ३ सप्तंबर का लिखा हुआ अति लम्बायमान
५ पत्र तुम्हारा पहुंचा[2]। पत्रस्थ समाचार मालूम हुए। टैप के विषय में हमने तुमको प्रथम ही लिखा था[3] कि मंगवालो। परन्तु तुम्हारी इस प्रकार की सम्मति हुई थी कि यहां ढलवा लेंगे। अब तुम्हारी सम्मति यह है कि यहां नहीं बन सकते। अब तुम मुम्बई और कलकत्ता से पत्र भेज कर ठीक ठीक भाव का निश्चय कर लो कि
१० मुम्बई और कलकत्ते से कितना फेर पड़ता है। और जब मंगवाओ तब बहुत विचार से मंगवाना अर्थात् बाबू विश्वेश्वरसिंह पण्डित देवीप्रसाद और कम्पोजीटरों से पूछ और आप स्वयं देख भार कर। फिर जिस जिस प्रकार के जो जो अक्षर वा मात्रा और जिन अक्षरों का अपने यहां अधिक काम पड़ता है उन उन को मंगवा
१५ लेना। और जो कलकत्ते से मंगवाये जायेंगे तो अच्छा होगा। क्योंकि वहां से टैप मंगवाने में फूण्डरी के सांचे भी बराबर काम में आवेंगे। और वहीं के सांचे अपने यन्त्रालय में हैं भी। इस विषय में पण्डितजी की भी सम्मति कलकत्ते ही से मंगवाने की थी। प्रथम कलकत्ते से टैप मंगवाये थे। सो हम को खबर है कि कोई ४०)
२० रुपये और कोई ५०) रुपये और कोई कोई ६०) रुपये [मन] के हिसाब से आये थे। सो उन में से अच्छे अच्छे तो बखतावर चुरा ले गया। क्योंकि पीछे तोलने से ५ऽ मन टैप घटा था।

अब सत्यार्थप्रकाश छपेगा। इसलिये भाषा के अक्षर अधिक मंगवाना चाहिये। सत्यार्थप्रकाश में संस्कृत पाठ के अक्षर भाषा से
२५ कुछ थोड़े उन्नीस बीस होने चाहिये। आजकल जो मूल मन्त्रों वा पदों में अक्षर लगते हैं वे बिलकुल कुढंगे हैं। इसलिये अब दो तीन महीने का तो वेदभाष्य छपा रखा ही है। तब तक आख्यातिक छपवाओ। क्योंकि आगे वेदभाष्य उत्तम अक्षरों में छपना चाहिये।

---

१. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।
३० २. यह आवश्यक पत्र हमें प्राप्त नहीं हुआ।
३. ऋषि दयानन्द का यह पत्र हमें प्राप्त नहीं हुआ।

और जो तुमने टैप ढालने वाले के विषय में लिखा, ठीक है। वह दश पांच मन टैप नहीं ढाल सकता। किन्तु अटके समय उसका सहायक मात्र है कि जिससे काम बन्ध न रहे। विशेष अक्षर वह तैयार नहीं कर सकता। और कितना सुर्मा पड़ना चाहिये यह भी उस को ठीक ठीक ज्ञान नहीं है। मुम्बई और कलकत्ते के अक्षरों में ५
कुछ बहुत भेद तो नहीं है। किन्तु मुम्बई के अक्षरों की ढाल और प्रकार की है और कलकत्ते की और प्रकार की। परन्तु कलकत्ते से मंगवाने में मुम्बई से दूना नहीं तो सवाया वा डचौढ़ा दाम अवश्य लगेगा। आगे जैसी तुम्हारी सम्मति हो। और जहां से मंगवाने में सोबिता समझो वहां से मंगवाना उचित है। परन्तु इस बात का १०
प्रबन्ध शीघ्र करो। अपने यन्त्रालय के अक्षरों को चलते दो वर्ष हो गये हैं। इसलिये उनमें अब कुछ फेर पड़ गया है। और जिन टैपों में आख्यातिक के कम्पोज में कम पड़ते हों उन को जल्दी ढलवा लो। आर्यपत्र लाहौर और देशहितैषी अजमेर जिस प्रकार का नोटिस वेदभाष्य के टाटल पेज पर छपने के लिये भेजें, वैसा १५
एक बार छाप देना।[1] आगे सब काम बुद्धिमत्ता के साथ करना, औरों से करवाना।

ता० ८ सिप्तंबर सन् १८८२ ईस्वी [दयानन्द सरस्वती]
भाद्र कृष्णा ११ शुक्रवार सं० १९३९ (उदयपुर राज मेवाड़)

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७१०] **पत्र** २०

प्रबन्धकर्त्ता मुन्शी समर्थदान आनन्दित रहो[2]।

विदित हो कि ता० ४ सप्तम्बर लिखा हुआ पत्र तुम्हारा पहुंचा। समाचार ज्ञात हुए।

टैप के विषय में एक पत्र आज भेज चुके[3]। उसके अनुसार

---

१. आर्य पत्र लाहौर का विज्ञापन ऋग्वेदभाष्य ४२-४३ तथा ४८-४९ २५
के सम्मिलित अङ्कों में दो बार छपा है (द्र०—पूर्ण संख्या ६४४ पृष्ठ ६७२ की टि० ५)। देशहितैषी का विज्ञापन भी ऋग्वेदभाष्य के ४२-४३ सम्मिलित (आश्विन कृष्ण १९३९) में छपा है। विज्ञापन तीसरे परिशिष्ट में देखें। २. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

३. सम्भव है पूर्ण संख्या ७०९ (८ सितम्बर) वाला पत्र ही ९ सितम्बर ३०

प्रबन्ध करना।

जो कहीं पद छूट जाता है यह भाषा बनाने वाले और शुद्ध लिखने वाले की भूल है। हम प्रायः इस बात में ध्यान नहीं देते, क्योंकि यह सहज बात है। अच्छा जहां कहीं रह जाया करे तुम
५ देख लिया करो कि किस-किस मन्त्र में क्या-क्या छूटा। और यहां लिख के भेज दिया करो[1]।

ज्वालादत्त चाहें रात दिन काम करे, परन्तु तुम देख लिया करो कि कितना काम करता है कितना नहीं। इस को व्याकरण बनाने में देर इसलिये लगती है कि उस को व्याकरण का अभ्यास
१० कम है। तभी बहुत सी पुस्तकें रखनी पड़ती हैं—जो इससे आख्यातिक न बन सके तो यहां भेज दो। यहां भीमसेन आ जायगा, तब उससे बनवा कर शुद्ध करके भेज देंगे।

जिन अक्षरों में वेदभाष्य की भाषा छपती है उसमें भाषा और जिन अक्षरों में पदान्वय छपता है उनमें संस्कृत का पाठ छपना
१५ चाहिये[2]। और दो हजार कापी छपनी चाहियें। **जहां-जहां उचित समझो वहां-वहां नोट दे देना।** सत्यार्थप्रकाश अच्छे कागज और टैप में छपवाना। जो इन अक्षरों से पुस्तक न बिगड़े तो छापने का आरम्भ कर दो। और मुम्बई कलकत्ते के भाव ताउ का शीघ्र निश्चय करके जहां सोबिता पड़े, माल अच्छा मिले और दाम
२० कम लगे, वहां से मंगवा लेना। टैप के बिना शीघ्र काम न चल सकेगा।

यहां कोई पांच सात बात चलाई हैं और स्वीकार भी कर ली है। परन्तु उन में से अभी कोई सिद्ध नहीं हुई। इसलिये नहीं लिखा। जब उनमें से कोई भी बात सिद्ध हो जायगी, वह चाहें
२५ गुप्त हो वा प्रगट, परन्तु तुम को विदित कर देंगे। अभी तक महाराणा जी का विचार अच्छा है। आगे जैसा होगा विदित कर

को इस पत्र से पूर्व भेजा गया, क्योंकि उस में टाइप के विषय में विस्तार से लिखा है।

१. यहां तक का पाठ आर्यधर्मेन्द्र-जीवन तृतीय संस्करण के पृ० ३७०
३० पर है।

२. यह निर्देश सत्यार्थप्रकाश छापने के लिये है।

दिया जायगा।

पांच पत्र गोरक्षार्थ सही कराने के और पांच विज्ञापनपत्र[1] भेजे हैं, पहुंचेंगे। न रहें तो वहीं छपा लेना। हमारे पास सही तो कई स्थानों से आयी है, परन्तु संख्या हमने नहीं की। जब करेंगे तब लिखेंगे। यहां के कार्य हुए पश्चात् सब संख्या पूरी हो ५ जायगी। कार्य सिद्धयर्थ प्रयत्न कर रहे हैं। आशा है कि परमात्मा की कृपा से पूरे हो जायेंगे।

भाद्र वदी १२ सम्वत् १९३९[2]। दयानन्द सरस्वती
उदयपुर नौलखा बाग

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७११] पारसल-सूचना १०

[मुंशी समर्थदान, प्रयाग]

पांच पत्र गोरक्षार्थ सही कराने के और पांच विज्ञापन।[3]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७१२] पत्र

ओ३म्[4]

प्रबन्धकर्ता मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो। १५

ता० १३ सितम्बर का लिखा हुआ पत्र तुम्हारा पहुंचा। समाचार ज्ञात हुए। दो पत्र[5] पूर्व तुम्हारे पास टैंपादि के विषय में विस्तार पूर्वक लिख भेजे हैं, पहुंचे होंगे। उन्हीं के अनुसार टैंप आदि के विषय में शीघ्र प्रबन्ध करना।

इस पत्र का उत्तर यह है कि जो हम प्रतिदिन एक फार्म के २० लिये शुद्ध करके भेजा करें तो आगे वेदभाष्य का काम सब बंध हो जाय। अब आगे बने नहीं तो पुनः छापने के लिये कहां से भेजा जाय। और तुम भी क्या छापो। अब ४ महीने का वेदभाष्य छपा रखा है। इसलिये इस टैंप में वेदभाष्य आगे न छपना चाहिये।

---

१. द्र० – पूर्ण संख्या ६२८ और ६२९ के पत्र तथा विज्ञापन। २५

२. ९ सितम्बर १८८२।

३. इस की सूचना ऋ० द० के पूर्ण संख्या ७१० से मिलती है।

४. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

५. सम्भवतः पूर्ण संख्या ७०९, ७१० के।

क्योंकि इसके मूल अक्षर बहुत बड़े और बेडौल के हैं। जब नया टैप आ जायगा तब वेदभाष्य को अच्छे अक्षरों में छापा जायगा। हमारा विचार यह है कि ८ फार्म वेदभाष्य के और ८ अन्य वेदाङ्गप्रकाशादि के १६ फार्म से कम अपने निज पुस्तक न छपने
५ चाहिये। और जो अधिक छापने की आवश्यकता हो शुद्धप्रति छापने के लिये यन्त्रालय में उपस्थित हो उस समय एक एक फार्म भी प्रति दिन छप सकता है वा अधिक भी। क्योंकि अपना काम बढ़ाया जाय तो कुछ कम नहीं है। जो पण्डित सुन्दरलाल जी और तुम्हारी भी यही सम्मति है कि जो बाहर का काम यन्त्रालय में
१० लिया जाय तो अधिक यन्त्रालय को फाइदा हो सकता है और हानि किसी प्रकार से न होगी, तो भले ही बाहर का काम ले लो। कुछ चिन्ता नहीं। **परन्तु जब हम बाहर के काम से निज पुस्तकों के छपने में वा कुछ और प्रकार से हानि होती देखेंगे तो उसी समय बाहर का काम बंध करा देंगे**। इस बात में सर्वदा ध्यान रखना।
१५ और जो हम को निश्चय यह विदित हो जायगा कि बाहर के काम से यन्त्रालय को फाइदा पहुंचा और निज पुस्तकों के छपने में भी हानि न हुई देखेंगे तो दूसरे प्रेस का भी प्रबन्ध करने में यत्न किया जायगा। परन्तु किसी प्रकार की हानि होने पर नहीं।

तुम्हारे लिखने से निश्चय हुआ कि सातवें दिन आख्यातिक
२० का एक फार्म तैयार होता है। इसका कारण मुख्य तो यह है कि **ज्वालादत्त को व्याकरण का बोध कम है। और** आख्यातिक प्रक्रिया भी कठिन है। इसलिये उससे यथावत् न बन सकेगी। इस लिये आख्यातिक के पत्र उससे लेकर यहां भेज दो। कल भीमसेन भी हमारे पास आ गया है। यहां शीघ्र उसको बनवा और शुद्ध
२५ करके तुम्हारे पास भेज देंगे।

थोड़े दिनों के पश्चात् और सत्यार्थप्रकाश के पत्रे शुद्ध करके भेज देंगे। तुम सत्यार्थप्रकाश के छापने का आरम्भ कर दो। काम कभी बंध मत रखो। और टूटे फूटे अक्षरों को फुंडरी में ढलवा लो। काम बंध मत रखो। और सौवर तथा पारिभाषिक के भी
३० पत्रे बनवा कर भेजे जायेंगे। आर्यो० १ चादां० १ इन दो पुस्तकों के कम होने का कारण यह है कि न जाने तुम्हारे बांधने में कसर

रही अथवा डाक में कुछ बिगाड़ हुआ। हमारे पास तो वहां खुला[1] और पुस्तक टूटी फूटी होकर पहुंची। उसी समय गिनी तो दो कम हुई। ये किसी ने ले ली होगी। और वेदान्तिध्वान्ति तुमने भेजी कब, जो रसीद भेजें। जो भेजा भी तो यहां नहीं पहुंचा। उसने नौकरी क्यों छोड़ी। क्या उसकी इच्छा नौकरी करने की नहीं थी। हम तो यह जानते हैं कि तुम्हारे नीचे एक दूसरा सहायक चाहिये, क्योंकि तुम कहीं विशेष कारण से गये आये तो वह काम कर सके। इसलिये तुम्हारी इच्छा हो तो किसी योग्य पुरुष को रख लो। ५

यहां श्री महाराणा जी प्रतिदिन मिलते और समागम करते हैं। और एक मौलवी से प्रश्नोत्तर प्रतिदिन होते हैं और वे लिखे भी जाते हैं[2] सो तुम्हारे पास भेजेंगे। अभी महाराणा जी से दो एक बार एकान्त में गोरक्षार्थ सही आदि कराने के विषय में बातें चीतें हुई हैं। आशा है कि यह कार्य सिद्ध हो जायगा। इसके सिवाय जो और कोई बात होगी सो पीछे से लिखेंगे। हम सब प्रकार से आनन्द मङ्गल से हैं। १० १५

[भाद्र शुदी (६ ?) सम्वत् १९३९[3]।]

उदयपुर

[दयानन्द सरस्वती]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७१३] पारसल-सूचना २०

[मुंशी समर्थदान, प्रयाग]

सौवर का हस्तलेख।[4]

—:o:—

१. अर्थात् पारसल।

२. ये प्रश्नोत्तर अक्षरशः पं० लेखराम जी कृत जीवनचरित में छपे हैं। इसे रामलाल कपूर ट्रस्ट की ओर से 'दयानन्द-शास्त्रार्थ-संग्रह' में प्रकाशित किया है। २५

३. १८ सि० १८८२। तिथि हमने अनुमान से लिखी है।

४. इसकी सूचना अगली पूर्ण संख्या ७१६ के पत्र (पृष्ठ ७४६) में है। सौवर के अन्त में ग्रन्थरचना-काल भाद्र शु० १३ सं० १९३९ लिखा है। उसके दो तीन दिन पीछे प्रेस में भेजा गया होगा। ३०

[पूर्ण संख्या ७१४] पत्र-सूचना

[पं० सुन्दरलाल जी, प्रयाग]

टाइप मंगाने की सम्मति दे दें[1]।

सं० १९३९ आश्विन वदी ६ चन्द्रवार[2]।

—:o—

५ ### [पूर्ण संख्या ७१५] पत्र-सूचना

[मुंशी समर्थदान, प्रयाग]

कुंवर जवाहरसिंह के २२॥–) भीमसेन के मार्फत पहुंचने के विषय में[3]।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७१६] पत्र

१० मुंशी समर्थदान आनन्दित रहो।[4]

विदित हो कि २१ सप्तम्बर का लिखा हुआ पत्र पहुंचा। समाचार ज्ञात हुए। हम तुमको इस विषय में कई बार लिख चुके हैं कि अभी वेदभाष्य की प्रति इसलिये नहीं भेजते कि वेदभाष्य के मूल मन्त्र तथा पद के अक्षर बेढंगे हैं। और भाषा के भी अक्षर १५ घिस गये हैं। इसलिये बाहर के छापने के लिये हमने आज्ञा दे दी है। सो लेकर छापो। और उनसे रुपये लो। जब नये अक्षर आ जांय तब वेदभाष्य छापा जायगा।

हमने सौवर भेजा था सो छापते होंगे। और कोई ८ वा १० दिन में पारिभाषिक तैयार करा कर भेज देंगे। इस पत्र के साथ २० दूसरा पत्र भेजा है उस के पास विक्रिय पुस्तकों का सूचीपत्र भेज देना।

---

१. इस की सूचना अगली पूर्ण संख्या ७१६ के पत्र में है। तथा अश्विन शुदी ३ सं० १९३९ (=१५ अक्तूबर १८८२)पूर्ण संख्या ७२१ के पत्र(पृष्ठ ७४९) में भी इस का निर्देश है।

२५ २. अक्टूबर १८८२।

३. इस की सूचना आश्विन सुदी ३ (=१५ अक्टूबर सन् १८८२) पूर्ण संख्या ७३१ के पत्र (पृष्ठ ७६५) में है।

४. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

पत्र तुम्हारा दूसरा भी २९।९।८२ समय का लिखा आया। हाल जाना। इसमें दो बातें हैं। एक तो अक्षर मंगाने के लिये तुम ने पं० सु० जी० की सम्मति विरुद्ध लिखी। सो आज हम भी एक पत्र उन को भेज देते हैं। वे तुमको सम्मति शीघ्र देवेंगे। तुम कलकत्ते में यदुनाथ बनर्जी को लिखो कि वे अक्षर भेज देंगे। पहिले ४०) रु० मन उनके यहां से पहिले[1] आये थे। सो अब भी मिलेंगे। भाड़ा पृथक् लगेगा। और जितने मन अक्षरों की आवश्यकता हो और जो जो अक्षर जितने जितने कम बढ़ चाहिये सो सब [लिखो।] उनके रुपये हम वहीं कलकत्ते में दिला देंगे। और सेवकलाल निर्भयराम को भी हम कागज के लिये लिख देंगे। और सत्यार्थ-प्रकाश के छपाने को हमारा तो यही विचार है कि नवीन टैप में छपे। जो आरम्भ न किया होय तो पीछे छापना। और आरम्भ कर भी दिया हो तो उस में संस्कृत के मूल वचन कुछ बड़े अक्षर में और भाषा छोटे में। **तथा जो तुम को विचार पूर्वक नोट देना हो सो भी देते जाना।**

संवत् १९३९ आश्विन वदी ६ चं०[2]　　　　[दयानन्द सरस्वती]
उदयपुर[3]

--:०:--

[पूर्ण संख्या ७१७]　　　पत्रांश

पं० छगनलाल [मसूदा]

....

[4]श्रीयुत महाराणा जी दूसरे तीसरे [दिन] समागम करते हैं। और उपदेश सुन कर बहुत से व्यसन अर्थात् दिन का सोना, रात्रि में न सोना, दिन चढ़े उठना इत्यादि बहुत बातें छोड़ दी हैं। और अच्छी अच्छी बातों को ग्रहण करते जाते हैं।

---

१. यह पद भूल से दो बार लिखा गया।

२. २ अक्टूबर १८८२ सोमवार।

३. पूर्ण संख्या ७१६ से आगे समर्थदान का जो अधूरा पत्र संस्क० १ और २ में यहां छपा था, उसे हम आगे पूर्ण संख्या ७३७ पर छाप रहे हैं।

४. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ५६४ (हिन्दी सं० पृष्ठ ६०५) पर इतना अंश उद्धृत है।

आश्विन सु० ११ सं० १९३९ । ७ अक्तूबर ८२[1]
उदयपुर[2]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७१८] कार्ड

ओ३म्[3]

५ सम्वत् १९३९ आश्विन वदी १४[4]।

महाशय बाबू रूपसिंह जी योग्य रामानन्द ब्रह्मचारी का नमस्ते विदित हो । महाशय ! कई एक पत्र आप के पास विस्तार पूर्वक समाचार लिख के भेजे[5] परन्तु प्रत्युत्तर एक का भी न मिला । इस में क्या कारण हुआ । अब पत्र देखते ही अपना विस्तार पूर्वक १० समाचार भेजना । श्रीयुत जगद्गुरु स्वामी जी महाराज उदयपुर में विराजमान हैं । श्रीयुत आर्य्यकुल-दिवाकर महाराणा जी अत्यन्त प्रेम से आते हैं और उपदेश सुनकर बहुत हर्षित होते हैं । **कई एक बातों को छोड़दीं जो कि हानिकारक हैं । और कई एक बातें जो कि सर्व सुख दायक हैं उनको ग्रहण कर ली हैं** । आशा है श्री १५ स्वाामी जी के प्रताप से यह देश भी पवित्र हो जायगा । गोरक्षार्थ यहां भी सही हो गई हैं । आशा है कि यहां के सम्बन्ध से अन्यत्र अर्थात् जोधपुराधीशों आदि राजाओं से हो जायगी । विशेष समाचार तुम्हारे पत्र आये के पश्चात् लिखूंगा ।

(रामानन्द ब्रह्मचारी उदयपुर)

—:०:—

२० १. सु० ११ लुप्त है । २२ या २३ अक्टूबर था । ७ अक्टूबर को आश्विन वदी ११ है । तथा पूर्ण संख्या ७१८ आश्विन वदी १४ के पत्र में इस पत्र की बातों का संकेत होने से यही तिथि ठीक प्रतीत होती है । जीवनचरित में कुछ भूल हुई है ।

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरित में भूल से रायपुर छप गया है । २५ रायपुर के स्थान में उदयपुर होना चाहिये ।

३. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है ।

४. १० अक्टूबर १८८२ ।

५. इस से प्रतीत होता है कि पूर्ण संख्या ६९४ (२४ जुलाई) के अनन्तर कुछ पत्र और भेजे गये थे, वे प्राप्त नहीं हुए ।

[पूर्ण संख्या ७१९] पत्र-सूचना

[सेवकलाल, बम्बई]

कागज भेजने के सम्बन्ध में[1]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७२०] पत्र-सूचना

[मास्टर प्राणजीवनलाल कानदास बम्बई] ५

सेवकलाल से पत्रों का उत्तर भिजवाने के विषय में[2]।

सं० १९३९ आश्विन सुदी ३ रवि[3]।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७२१] पत्र

ओम्[4]

प्रबन्धकर्त्ता मुंशी समर्थदान जी आनन्दित रहो। १०

विदित हो कि ७।१०।८२ नम्बर १३०५ का पत्र आया। समाचार विदित हुए। हम तुम्हारे पत्र भेजने में कुछ भी विलम्ब नहीं करते। हमने बाहर के काम लेने के लिये तुम को पत्र द्वारा आज्ञा देदी थी। उस बात को कोई एक मास हुआ होगा[5]। तुमने कुछ भी नहीं लिखा कि अभी तक लिया वा नहीं। इसका उत्तर देना। जो १५ एक फारम के अनुमान नित्यप्रति शोध कर तुम्हारे पास भेजा जाय तो यहां का सब काम अर्थात् वेदभाष्यादि का बनाना छूट जाय।

---

१. पूर्ण संख्या ७२१ में ३,४ पत्र भेजने का उल्लेख है। ये पत्र कब कब भेजे गये, यह अज्ञात है। हमने निदर्शनार्थ एक ही पत्र-सूचना छापी है। २०

२. इस का निर्देश अगले पूर्ण संख्या ७२१ के पत्र में है। द्र०—पृ० ७५१, पं० ८।

३. १५ अक्टूबर १८८२।

४. शताब्दी संस्करण, भूमिका पृ० १८ पर खण्डशः मुद्रित। works of Maharshi Dayanand, पृ० १२८ पर शताब्दी संस्करण की २५ अपेक्षा कुछ अधिक भाग मुद्रित। मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

५. देखो पूर्ण संख्या ७१२ पृष्ठ ७४३ का पत्र।

प्रत्युत इस काम के लिये महाराणा आदि जी से कह दिया गया कि सन्ध्या समय आया करें। हम को कुछ भी अवकाश नहीं मिलता। अर्थात् प्रातःकाल से ११ वा १२ बजे तक वेदभाष्य बनाते हैं। पश्चात् अन्य काम शोधने आदि का। और वह काम
५ ऐसा है कि बिना हमारे बन नहीं सकता। जो कहीं भाषा असंबध हो और अभिप्राय वा अक्षर मात्रा आदि से अशुद्ध हो उसको तुम ही शोध लिया करो। बाहर के काम के लिये बिना यहां से तुम्हारे योग्य इस समय छपवाने के लिये नहीं भेज सकते। जैसी तुम जल्दी चाहते हो ऐसा तो तब हो सके कि जब हम स्वयं छापेखाने में
१० आकर तुम को शोध शोध दिया करें और तुम छापो।

कल तुम्हारे पास ३३ पृष्ठ से सत्यार्थप्रकाश के पत्रे[1] और पारिभाषिक भूमिका सहित ४३ पृष्ठ तथा जितना यहां **वेदार्थ-यत्न**[2] के अङ्क हैं अर्थात् २० अङ्क वे सब भेजेंगे। तुम हम को यह लिखना कि सत्यार्थप्रकाश के कितने पृष्ठ एक फारम में लगते हैं।
१५ सो ब्यौरे वार से जब लिख भेजोगे तब हम यहाँ से अनुमान करके लिख देंगे कि सब सत्यार्थप्रकाश के इतने फार्म होंगे। हम ने तुम को कई एक बार लिखा कि वहां जो कुछ हमारी फुटकर चीज व वस्तु पड़ी है उस का सूची बना के भेजो। सो अभी तक नहीं भेजा। शीघ्र अब लिखके भेजना।

२० शोक की बात है कि **तीन चार पत्र हम भी सेवकलाल को भेज चुके हैं।** परन्तु एक का भी उत्तर न दिया। इसी प्रकार तुह-मारे[3] पत्रों के विषय में कर्त्ता होगा। जो तुम इस से काम चलते न देखो तो स्वतन्त्र किसी मातबर आदमी की दुकान से कागज आदि मंगवाने के लिये प्रबन्ध कर लो। क्योंकि अब तुम्हारे पास वहां
२५ कुल १० रीम बाकी है। जो शीघ्र न भेजेगा तो कागज के बिना काम ही बन्ध हो जायगा। जहां से टैप मिले वहां से जितना चाहो

---

१. २९ अगस्त को ३२ पृष्ठ तक भेजे थे। देखो पत्र पूर्ण संख्या ७०८।

२. सायणकृत अथर्ववेदभाष्य के सम्पादक पण्डित बालकृष्ण शङ्कर पाण्डुरङ्ग इस वेदार्थयत्न को निकाला करते थे। इस में सायणभाष्य के
३० आधार पर ऋग्वेद का मराठी और अंग्रेजी में अनुवाद रहता था।

३. अर्थात् तुह्मारे = तुम्हारे।

मंगवा लो। इस विषय में **पण्डित जी को भी हमने लिखा था कि टैप मंगवाने की तुम को आज्ञा देदें**। न जाने तुम को आज्ञा दी वा नहीं। आशा है कि अवश्य वे तुम को आज्ञा देंगे। और तुम शीघ्र टैप मंगवा लो। परन्तु हमको यह लिखो कि तुम कै मन टैप मंगवाना चाहते हो और क्या खर्च पड़ेगा। इस बात का निश्चय कर के लिखो। अब तुम रजिस्ट्री कराके पत्र सेवकलाल के नाम से भेजो कि जिसमें उसकी सही तुम्हारे पास आ सके। **हमने भी आज एक पत्र मास्टर प्राणजीवनलाल कानदास जी के नाम से भेजा है।** क्योंकि वे उस को समझा देंगे और जिन बातों का उत्तर हमने मांगा था सो सो भी सब उसमें लिखवा भेजेंगे। हमारा आशीर्वाद जज कार्ष्टीफन साहेब को लिख भेजना। **कुंवर जवाहरसिंह जी के रुपये अर्थात् २२॥ -) भीमसेन के मार्फत हमारे पास आये, सो तुमको लिखा था** वेदभाष्य में क्यों नहीं छपे। क्या अगले में छापोगे? और रजिस्टर में जमा कर लेना।

सम्वत् १९३९ आश्विन सुदी ३ रवि।[1]　　　(उदयपुर)
[दयानन्द सरस्वती]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७२२]　　पारसल-सूचना

[मुंशी समर्थदान, प्रयाग]

१. सत्यार्थप्रकाश के ३३ पृष्ठ से ५७ पृष्ठ तक[2]।
२. पारिभाषिक भूमिका सहित ४३ पृष्ठ।
३. वेदार्थयत्न के २० अङ्क।

सं० १९३९ आश्विन सुदी ४ सोम (१६ अक्टूबर १८८२)।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७२३]　　कार्ड

ओ३म्[3]

लाला कालीचरणदास जी आनन्दित रहो।

---

१. १५ अक्टूबर १८८२।

२. इन को भेजने का निर्देश तथा तिथि की सूचना पूर्ण संख्या ७२१ के पत्र में है।

३. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में सुरक्षित है। फर्रुखाबाद का

विदित हो कि तुम **आर्य्यसमाज के पत्र में नाटक का विषय मत छापो।[1] यह अनुचित बात है। यह आर्य्यसमाज है। भडुआ समाज नहीं।** जो तुम नाटक का विषय छापते हैं[2] ऐसा करना भडुआपन की बात है। इसलिये ऐसा वर्त्तना उचित नहीं।

५ ता० १६ अक्टूबर[3]। [द० स०]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७२४] पत्र-सारांश

[पं० इन्द्रनारायण, प्रधान आर्यसमाज लखनऊ]

समाज में नाटक प्रहसन आदि करना अनुचित है।[4]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७२५] पत्रांश

१० [माई भगवती[5]...... ....हरियाना पञ्जाब]

.... तू लाहौर जा सके तो हम लाहौर आर्यसमाज को तेरे वास्ते लिखें।.......

१६ अक्तूबर १८८२[6]।

—:०:—

इतिहास पृ० २०२ पर भी छपा है। इस की प्रतिलिपि म० मामराज ने

१५ की।

१. पूर्ण संख्या ६६७ के विज्ञापन में 'नाटक' का निर्देश है। सम्भव है उसमें 'नाटक' पद ऋषि दयानन्द की सम्मति के बिना मुद्रण काल में बढ़ाया होगा।

२. यहां 'हो' चाहिये। ३. सन् १८८२ [आश्विन सुदी ४,

२० सोम० सं० १९३९] पत्र की मोहर पर उदयपुर से पत्र का चलना लिखा है।

४. इस पत्र का संकेत पं० इन्द्रनारायण, प्रधान आ० स० लखनऊ के २८ अक्टूबर १८८२ के पत्र में मिलता है। अत: यह पत्र ऋ० द० ने १६ अक्टूबर के आस पास लिखा होगा। पं० इन्द्र नारायण का पत्र तीसरे भाग में देखें।

२५ ५. इस ने बम्बई में श्री स्वामी जी के दर्शन किये थे। देखो पं० देवेन्द्र नाथ संक० जी० च० पृष्ठ ३४७।

६. आश्विन सुदी ४ सं० १९३९। यह पत्रांश और इसका संकेत माई

## [पूर्ण संख्या ७२९]				पत्र

ओ३म्[1]

महाशय बाबू रूपसिंह जी योग्य रामानन्द ब्रह्मचारी का नमस्ते विदित हो—

पत्र तुम्हारा पहुंचा। कुशल समाचार ज्ञात हुए। परमात्मा की कृपा से यहां श्री परमगुरु जी आदि सब आनन्द मङ्गलयुत हैं। अनुमान है कि अब थोड़े दिनों के पश्चात् स्वामी जी की उदयपुर से अन्य स्थ[ा]न को य[ा]त्रा होगी। मेरा निज समाचार आप से मित्रता होने के कारण विदित करता हूं कि मेरे पिताजी का स्वर्ग-लोक हो गया है। इस क[ा]रण से अब मैं घर को जाने वाला हूं। अनुमान है कि दश वा बारह दिन के पश्चात् जाऊंगा। दूसरा प्रयोज[न] यह भी है कि मैं कुछ काल निरन्तर पढ़ना चाहता हूं। क्योंकि ब्रह्मचर्याश्रम केवल मैंने विद्या पढ़कर परोपकार करने के अर्थ लिया है और श्री परम गुरु स्वामी जी की भी पूर्ण कृपादृष्टि है। अब आपको पत्र मैं फर्रुखाबाद पहुंचने पर दूंगा॥

अब जो आपके प्रश्न और जो फर्रुखाबाद में रुपये दिया करते हो उसका उत्तर श्री गुरुजी की आज्ञा से लिखता हूं। आप निश्चय समझना॥

१—रुपयों के विषय में स्वामी जी ने यह आज्ञा दी कि रुपये फर्रुखाबाद में ही भेजना चाहिये। और हमारे पास जितना रुपया पण्डितों के मासिक में लगता है वह फर्रुखाबाद ही से लगा करता है। अभी हाल में २००) रुपये मुम्बई में मंगवाये थे। तुम कुछ सन्देह मत करो। वहां से जब जब हम चाहते हैं, मंगवा लेते हैं। इसलिये तुम वहीं भेजना॥

प्रश्नों का उत्तर—धर्म कार्य के करने में जो पिता आदि किसी प्रकार का विघ्न करें तो उनकी ऐसी बात सर्वथा अमन्तव्य है।

भगवती हरियाणा के ४ नवम्बर १८८२ के पत्र में मिलता है। माई भगवती का पत्र तीसरे भाग में देखें।

१. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

हां, पुत्र को उचित है कि माता पिता चाहे कैसे ही दुष्टाचारी क्यों न हों उनकी अन्न वस्त्र से सेवा अवश्य ही करनी चाहिये। जो वे पुत्र की सेवा न चाहें तो ऐसा करना उचित है कि जिस समय पुत्र अपने माता पिता को दुःखी देखे, उस सम[य] विना पूछे गाछे सेवा
५ करना उसको चाहिये ॥

२—चाहे कोई निन्दा वा स्तुति करे वा न करे तो भी धर्म जो कि सत्य भाषणादि है नहीं छोड़ना। क्योंकि लौकिक जि[त]ने मनुष्य हैं उन से मित्रता यहीं काम में आती है परन्तु परलोक में धर्म्म के विना दूसरा सहायक मित्र कोई भी नहीं है। देखिये इस
१० विषय में एक श्लोक लिख देता हूं। आप कण्ठस्थ कर लेना—

(निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥)

१५ इसका अभिप्राय यह है कि संसार में चाहे कोई निन्दा करे वा स्तुति, लक्ष्मी अर्थात् धनादि पदार्थों की प्राप्ति हो चाहे अप्राप्ति, और मरण चाहे इसी समय हो वा कालान्तर में, परन्तु धीर पुरुष ऐसी ऐसी विपत पर भी धर्मरूपी मार्ग नहीं छोड़ते। इसका फल यह है कि जो पुरुष ऐसा दृढनिश्चययुक्त धर्म पथ में स्थिर होता है
२० उस के लिये धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों की प्राप्ति होती हैं ॥

स्त्री का पढ़ाना अत्युत्तम है, यथेष्ट पढ़ाओ। और संस्कार-विधि के अनुसार गर्भाधान संस्कार [कर] के पुत्रोत्पत्ति करना ॥

हे प्रिय ! अब मैं अपनी ओर से इतना विशेष लिखता हूं कि
२५ तुम अपनी स्त्री को इस मन्त्र को शुद्ध बतला देना—

(ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्न आसुव) यजु० अ० ३० म० ३ ॥

इसका अर्थ भूमिका[1] में देख के सुना देना। इस समय पिता जी के देवलोक हो जाने के कारण विशेष आप को नहीं लिख सका,
३० परन्तु जब जब आप को कुछ प्रष्टव्य हुआ करे, आप अवश्य लिखा

१. यह मन्त्र ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के आरम्भ में व्याख्यात है।

करें। मैं उत्तर देने में आलस्य न करूंगा ॥

कार्त्तिक शुदी १ सम्वत् १९३९[1]　　(रामानन्द ब्रह्मचारी)
उदयपुर

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७२७]　पत्र-सूचना

[लाला कालीचरण जी, फर्रुखाबाद]　　५

वैदिक यन्त्रालय के लिये रुपयों के सम्बन्ध में।[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७२८] यजुर्वेदभाष्य समाप्ति की सूचना

मार्ग कृष्ण १ शनिवार सं० १९३९[3] में समाप्त किया[4]।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७२९] महाराणा श्री सज्जनसिंह जी उदयपुर की दिनचर्या के नियम[5]　　१०

तत्

जब न्यायस्थान पर जावे तब सब प्रजास्थ वादी प्रतिवादी

---

१. ११ नवम्बर १८८२।

२. इस की सूचना आगे पूर्ण संख्या ७३१ के पत्र में मिलती है।

३. २५ नवम्बर १८८२।　　१५

४. यह सूचना मुद्रित यजुर्वेदभाष्य के अंक ११६, ११७ (सम्मिलित) के पृष्ठ १२९० के अन्त में छपी है। इस विषय का मुंशी समर्थदान प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय प्रयाग का निम्न विज्ञापन भी दर्शनीय है –

"सब सज्जनों को विदित हो कि श्री स्वामी जी महाराज ने यजुर्वेद-भाष्य बना कर पूरा कर लिया है और ईश्वर की कृपा से ऋग्वेदभाष्य भी　　२०
इसी प्रकार शीघ्र पूरा होगा.................।"

देखो ऋग्वेदभाष्य माघ कृष्ण सं० १९३९ अंक ४६,४७ (सम्मिलित) के अन्त में।

यजुर्वेदभाष्य का मुद्रण वैशाख शुक्ल ११, शनिवार, १९४६ में समाप्त हुआ था। देखो यजुर्वेदभाष्य अङ्क ११६, ११७ (सम्मिलित) पृष्ठ १२९०　　२५
के अन्त में।

इस विषय में जो अधिक देखना चाहें "ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास" नामक ग्रन्थ में (पृष्ठ १०४-१०८) देखें।

५. पूर्ण संख्या ७३० (पृष्ठ ७६५) तथा महाराणा सज्जनसिंह को

साक्षी राजपुरुष सम्प्रेक्षक आदि मनुष्यों को प्रसन्नवदन कृपादृष्टि से आनन्दित करे। दक्षिण हाथ उठा कर सब को स्वास्थ्य अभय-दान देकर न्यायासन पर बैठ सर्वव्यापक यथावत् न्यायकारी अन्तर्यामी को मन से नेत्रोन्मीलन करके प्रार्थना करे कि 'हे पर-

५ मेश्वर आप की कृपादृष्टि हो जिससे मैं चाहता हूं कि कभी काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, शोकादि के वश हो के अन्याय न करूं। ऐसा अनुग्रह आप भी कीजिये।' परन्तु इस बात को सदा ध्यान में रक्खे कि सब कामादि और अन्याय में फंसाने वाला लोभ है। उस को अपने से और आप उस से सदा दूर रहे। उस समय न किसी

१० का शत्रु और न किसी का मित्र तथा उदासीन बने। किन्तु सम दृष्टि कि जैसा पक्षपात छोड़ परमेश्वर वा आप्त पुरुष सब के साथ वर्तता है वैसे वर्त्ते। प्रत्येक सप्ताह में **गुरुवार** के [दिन] ऋणा-दानादि में विवाद अर्थात् दिवानी का न्याय करे। और **रविवार** के दिन साहसिकों का अर्थात् फहोजदारी का न्याय करे। जब

१५ अर्थी वा प्रत्यर्थी अथवा साक्षी जो कुछ स्वभाव से बोले उस पर अतीव ध्यान देकर विचार करे। और उन को कठिन से कठिन शपथ करावे। सब साक्षियों को पृथक् पृथक् रक्खे। सीखावट की साक्षी को न माने। और यह भी जना देवे कि मिथ्या बोलने, मानने और करने वाले को इस जन्म और पर जन्म में सुख व

२० प्रतिष्ठा नहीं होती। और देखो थोड़े से जीवन में धर्मात्मा अर्थात् सत्यवादी सत्यमानी सत्यकारी मनुष्य धर्मार्थ काम मोक्ष फलों को प्राप्त होता और मिथ्यावादी, मिथ्यामानी अनृतकारी सर्वदा दुःख को प्राप्त होता है। इसलिये किसी को आत्मा और परमेश्वर के मिथ्याभाषणादि से शत्रु न बनना चाहिये। जैसा कुछ तुम्हारे

२५ आत्मा में हो वैसा ही जीभ से बोलो। जब वे कुछ भाषण करें वह सब लिपिबध होवे। और उनके नेत्र तथा मुखाकृति की ओर देख

जोधपुर से लगभग १०-१६ सितम्बर १८८३ के मध्य लिखे पत्र में इस दिनचर्या का उल्लेख है। पं० चमूपति जी सम्पा० पत्रव्यवहार पृष्ठ १४८-१६२ तक छपी है। उस में दो तीन शब्द अशुद्ध हैं। हमने म० माम-

३० राज जी द्वारा की हुई प्रतिलिपि से छापा है। मूल लेख ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह में था।

कर भीतर के आशय को पहिचाने। यदि कोई बड़ा ढीठ अथवा प्राड्विवाक अर्थात् बारिस्टर वा वकील जो कुछ परस्पर प्रश्नोत्तर करें उस पर ध्यान देकर सुने तथा लिखे। यदि जहां जहां पूछ उचित हो पूछे। बीच में अन्य अन्य सम्वाद करके वक्र[ता] वा सरलता से प्रश्न करे। यदि इतने पर भी सत्यासत्य का निर्णय न हो तो उन पर विश्वास न करके जहां वह विरुद्ध कार्य हुआ हो वहां के सुपरीक्षित धार्मिक पुरुष और स्त्रियों की साक्षी में स्त्री जनों से पूछ कर निश्चय करे परन्तु स्त्रियों से राणी पूंछे। अथवा यदि पड़दे में रक्खे तो बड़े प्रबन्ध से रख के पूछे कि वहां उस के बदले दूसरी स्त्री न बोले। यदि सामने होवे तो न कोई उस पर दृष्टि डाले न हास्य करे और न डरावे। इतने पर भी सत्यासत्य का निर्णय न हो तो गुप्त में उन को बात करते सुन अथवा धार्मिक आप्तजन दूतों के द्वारा निश्चय करे। पश्चात् जो अपराधी हो उसको यथायोग्य दण्ड दे कर हरावे। और अनपराधी का मान्य कर जितावे। जो हारे उस पर ताना न मारे। किन्तु ऐसा कहे कि देखो भाई मैं तुमसे ऐसे काम करने की आशा नहीं करता था। तुमने ऐसे कुल वा ऐसे के पुत्र होकर ऐसा अनुचित काम किया। इस पर मुझ को बड़ा शोक है। हे भद्र यदि तू ऐसा काम न करता तो ऐसे दण्ड को प्राप्त क्यों होता। यदि कोई धूर्त वा आतुर बुरा शब्द बोले वा कुचेष्टा करे, सह लेना। परन्तु अपने शरीर की रक्षा सब प्रकार से करना। और सब की मानसी वा बाह्य चेष्टा को जानते रहना। चाहे कोई कितनी ही प्रार्थना करे वा क्रोड़ रुपैये भी देकर अन्याय कराया चाहै तो भी कभी अन्याय न करें। यही राजा के प्रताप, कीर्ति, श्री और राज्य बढ़ाने वाला कर्म है। यदि भूमि धन धरावट सीमा आदि जितने विवाद लेख वचन से हों अथवा साहस मारपीट कुवचन आदि से दूसरे को पीड़ा वा हानि पहुंचावें उनका भी न्याय यथोचित करे। जैसा मनुस्मृति के अष्टम और नवमाध्याय में न्याय व्यवस्था १८ प्रकारों में लिखी है यथायोग्य करे। ये सब काम मध्यान्होत्तर चार बजे तक कर के कुछ ४५ पल अर्थात् १५ मिनट तक स्वस्थ होकर जिन के साथ मिलके राज प्रबन्धार्थ विचार करना चाहिये ५। सवा [पांच] बजे तक प्रजास्थ जनों से बात करे। पश्चात् यदि

प्रात:काल १० बजे भोजन किया हो और उष्णकाल हो तो शौच आदि से निवृत्त होकर ६ छ: बजे तक भोजनादि से निवृत्त होकर जहां का शुद्ध वायु शुद्ध देश एकान्त हो पैदल घूमने को जाय। यदि चलने में असमर्थ हो तो सवारी पर बैठकर घूमे। परन्तु यदि ५ शीतकाल हो तो परमेश्वर की उपासना के पश्चात् भोजन करे। अर्थात् उष्णकाल में आठ बजे पर्यन्त भोजन के पश्चात् घूमना उपासना करनी उचित है। और शीतकाल में भी ५ बजे से सात बजे तक भ्रमण उपासना से निवृत्त होकर साड़े सात बजे तक भोजन कर ले[1]। पश्चात् ४५ पल अर्थात् १५ मिनट पर्यन्त किसी १० से न बोले। किन्तु हस्त मुख प्रक्षालन कर लघु शंका से निवृत्त हो ताम्बूल भक्षण कर शत पद घूम के किंचित् उत्तान, दक्षिण और वाम पार्श्व से लोटकर उठ बैठे। तत्पश्चात् अर्थात् पौने आठ बजे से नौ बजे तक दूत द्वारा स्वदेश स्वनगर परदेश पर-राज्य के समाचार जो कि अपने और दूसरे के सम्बन्ध में हो, सुने। और १५ उसे स्वकार्यसिद्धि के लिये आज्ञा भी देवे। नौ से दश बजे तक आय व्यय आदि का वृत्तान्त सुनकर अगले दिन के लिये यथोचित प्रबन्ध करे। पश्चात् आध घण्टे में इष्ट मित्र वा मन्त्री आदि से जो कि उस समय उपस्थित हो प्रसन्नता पूर्वक विदा करके साढ़े दश बजे शयन करे। यदि उष्ण काल हो तो १० बजे तक इन सब २० कामों से निवृत्त हो शयन करे। शयन एकान्त में करे। और उसी समय परमेश्वर को इसलिये धन्यवाद देना कि हे परमेश्वर आप की कृपा से गत अहोरात्र जैसा आनन्दपूर्वक बीता वैसे ही अग्रस्थ अहोरात्र भी आनन्दपूर्वक व्यतीत होवें। दो दिन[2] में पूर्वोक्त दो काम करने।[3] मङ्गल के दिन किसी राजपुरुष ने वा अन्य राज्य से २५ प्रजास्थ वा राजजन पीड़ित हुए हों उनकी बातें और तीन दिन अर्थात् बुध शुक्र और शनैश्चर में सब राज्य की उन्नति और स्वास्थ्य के लिये प्रबन्धार्थ अकेले वा मुख्य धार्मिक स्वराज्य भक्त मन्त्रियों के साथ विचार करना चाहिये।

---

१. तुलना करो पूर्ण संख्या ४१ पृष्ठ ५२-५३ दैनिक व्यवहार तथा सत्यार्थप्रकाश चतुर्थ समुल्लास प्रथम संस्करण पृष्ठ १२७-१२८।

३० २. अर्थात् गुरुवार, रविवार। देखो पृष्ठ ७५६।

३. सोमवार का निर्देश यहां छूट गया है।

विशेष नियम

१—जब पति और पत्नि समक्ष हों प्रसन्नता पूर्वक नमस्ते कर जिस जिस प्रकार दोनों में प्रेम बढ़े वैसा व्यवहार करे। विरुद्ध कभी नहीं।

२ ऋतुदान के पश्चात् किञ्चित् ठहर स्नान कर शालव[1] मिश्री केशर आदि सुगन्धियुक्त परीपक्व दुग्ध शीतल यथारुचि पी के ताम्बूल भक्षण कर मुख प्रक्षालन कर के पृथक् पृथक् शयन करें॥

३—दोनों सदा विद्या धर्म प्रजासुख के लिये तन मन धन से प्रयत्न किया करें॥

४—किसी वेदविद्या-युक्ति-विरुद्ध मतमतान्तर के झगड़े में दोनों कभी न फंसे। किन्तु पक्षपातरहित न्यायाचरण वेदोक्त धर्म ही का आचरण करे और करावें॥

५—अपने वा पराये राज्य में जहां तक शक्य हो किसी मत वाले की बहकावट से विद्यायुक्ति-विरुद्ध मत में किसी को न फंसने देवें। यदि कोई समझाने पर न माने जो कूप में गिरना ही चाहे तो उसका अभाग्य समझना चाहिये॥

६—जब बुरे बुराई नहीं छोड़ते तो भले भलाई क्यों छोड़ें।

७—सदा सनातन वेद शास्त्र आर्य राज राजपुरुषों की नीति पर निश्चित रहकर इनकी उन्नति तन मन धन से सदा किया करें। **इनसे विरुद्ध भाषाओं की प्रवृत्ति वा उन्नति न करे वा करावे। किन्तु जितना दूसरे राज्य के सम्बन्ध में यदि वे इस भाषा को न समझ सकें उतने ही के लिये उन भाषाओं का यत्न रक्खे, जो वह प्रबल राज्य हो।**

८—कभी विना विचारे लिखे नियत काल के आज्ञा न देवे। पश्चात् जैसी जितने समय में कार्यसिद्धि करने की आज्ञा दी हो वह यथावत् नियमित समय में पूरी हुई वा नहीं उसपर ध्यान सदा रक्खे।

९—जो यथोक्त समय में आज्ञा को यथावत् प्रीति से पूरी करे उसका सत्कार करना पारितोषिक देना और उसकी उन्नति करना

१. अर्थात् सालम मिश्री।

अति योग्य है। और जो यथोचित न करें उसका अपमान दण्ड और ह्रास किये विना कभी न छोड़े।

१०—विना योग्यता वा परीक्षा के किसी को बड़ा वा छोटा अधिकार न देवे। किन्तु जो धर्मात्मता से उस कार्य के करने में
५ समर्थ हो उसी के आधीन वह कार्य सिद्ध करे वा करावे। दरिद्र वा लोभी को प्रारम्भ में बड़ा अधिकार भी न देवे। और कुटुम्ब सम्बन्धी परस्पर मित्रों को भी एक अधिकार में न रक्खे।

११ **सदा वेदोक्त धर्मावलम्बी अधिकारियों पर अन्य मतावलम्बियों को अधिकार न देवे।** किन्तु जिस जिस कार्य में न्याय
१० वा (उपदा) अर्थात् रिश्वत खाने का सम्बन्ध हो उन को छोड़ अन्य गौणाधिकारों में वैदिक धर्मावलम्बियों से कार्य सिद्ध न हो सके, रक्खे।

१२-जो प्रीतिपूर्वक धर्मात्मता से ३० वर्ष तक राजकार्य करे उन को आधी नौकरी जबतक वे जीवें देवे। यदि संग्रामादि में जिस
१५ का मृत्यु हुआ हो उसकी स्त्री पुत्रों को भी उसी प्रकार देवे। यावत् उनके पुत्र समर्थ न हों। जब समर्थ हों तब उनके पुत्रों को यथायोग्य अधिकार देवे। परन्तु उस की स्त्री को योग क्षेमार्थ यथोचित जब तक व[ह] जिये सदा दिया करे। यदि वह पांच रुपये मासिक पाता हो पूरा देवे। पुत्रों के समर्थ हुए पर स्त्री को
२० आधा देवे।

१३—सब के लड़के लड़कियों को ब्रह्मचर्यपूर्वक विद्या दान दिलावे।

१४—न्यून से न्यून सोलहवें वर्ष कन्या और २५वें वर्ष लड़के का स्वयम्वर विवाह होने देवे, पूर्व नहीं।

२५ १५—अपनी सत्ता शक्ति को यथासम्भव बढ़ाता जावे, न्यून न होने देवे।

१६—अपने अंश को न छोड़े और पराये अंश का स्वीकार कभी न करे।

१७—संग्राम में जो सेनास्थ पुरुष जीत में शत्रुओं के पदार्थ
३० पावें उन में से १६वां भाग आप लेवे। और समुदाय के जीते हुये पदार्थों में से १६वां भाग चाहे कितने ही क्रोड़ों रु० क्यों न हों सेना को अवश्य देवे। १५वां भाग आप रक्खे।

१८—युद्ध में जो शत्रु घायल हो उसकी रक्षा ओषधी अवश्य करे। स्त्री बालक, वृद्ध, आतुर, भीरु, शरणागत पर शस्त्र कभी न चलावे।

१९—हारे हुए शत्रु की अप्रतिष्ठा कभी न करे, किन्तु उस का यथायोग्य मान्य रखे। परन्तु उस को छोड़ कर स्वतन्त्रता कदाचित् न देवे। ५

२०—सदा प्रयत्न से अलब्ध के लाभ की इच्छा, लब्ध की सम्हाल से रक्षा, रक्षित की व्य[ाजा]दि से वृद्धि और बढ़े हुए पदार्थों का व्यय विद्या धर्म राज्य की वृद्धि इन[के] प्रचार [और] अनाथों के पालनादि शुभ व्यवहारों में करे। १०

२१—सर्वदा सन्तानों की शिक्षा में धन का व्यय करे, किन्तु विवाह, मृत्यु आदि में न करे।

२२—सदा दासी वेश्यागमन हास्य नृत्य भांड चारण आदि के मिथ्या स्तुति कराने आदि व्यवहार से पृथक् रहे। और अन्य को भी ऐसे प्रसंगों से सदा बचाया करे। १५

२३—सदा पूर्ण युवाऽवस्था में अर्थात् २५ वर्ष के उपरान्त हृद्य स्व[स] दृश्य एक स्त्री से विवाह करे और उसी से सदा ऋतुगामी रहे। यदि प्रमाद से अनेक स्त्री हों तो भी उनके साथ पक्षपात छोड़ नियमित समय में एक सा वर्त्ते।

२४—उन में परस्पर द्वेष उत्पन्न न होने दे। किन्तु सब को तुल्य अन्न वस्त्राभूषण सम्भाषणादि प्रेम व्यवहार तुल्य रक्खे और प्रेम रखवावे। २०

२५—उन स्त्रियों को योग्य है कि एक के पुत्र होने में सब अपने को पुत्रवती समझें। तथा सब भाई भी एक के पुत्र होने में अपने को पुत्रवन्त मानें। २५

२६—राजा और राज्ञी का जिस जिस कर्म से पति पत्नी में और प्रजा में परस्पर प्रेम बढ़े उस उस का सेवन और विपरीत का सर्वथा त्याग करे।

२७—सुपरीक्षित दूत द्वारा राज्य और राजपुरुषों की सुचेष्टा और कुचेष्टा से अपने को अभिज्ञ रक्खे। जिस जिस यत्न से उनकी कुचेष्टा छूटें और सुचेष्टा बढ़े, वैसा यत्न सदा किया करे। ३०

२८—अपराध में प्रजा से राजपुरुषों पर अधिक दण्ड होना चाहिये। क्योंकि बकरी के प्रमाद रोकने से सिंह का प्रमाद रोकने में अधि[क] प्रयत्न होना उचित है।

२९—जैसे राजा और कृषीवलादि प्रजा सुखी रहे वैसा कर-
५ प्रबन्ध प्रजा में करे। और उन्हीं कृषीवलादि को सब राज्य के सुख का मूल कारण समझ उन से पितावत् वर्ते।

३०—जहां (साम) मेल (दाम)[1] कुछ दे (भेद) तोड़ फोड़ से शत्रु वश में न आवें वहीं दण्ड प्रचरित करना चाहिये।

३१—किसी धर्मात्मा से विरोध वा लड़ाई करना न चाहे और
१० दुष्ट से विरोध वा लड़ाई निःशङ्क करे।

३२—सब काम धार्मिक सभ्यों के बहुपक्षानुसार नियत करे। और वह आज्ञा जो कि प्रजा के साथ सम्बन्ध रखती हो, सब में प्रजा की सम्मति लेवे और सर्वत्र [प्र]सिद्ध करके गुण दोष समझे। पश्चात् गुणाढ्य नियमों को नियत और दोषयुक्तों का त्याग करे।

१५ ३३—अपना वा अपने कुटुम्ब का नित्य नैमित्तिक व्यय भी नियमपूर्वक करे।

३४—जिस किसी को मासिक धन वा भूमि धर्मार्थ अथवा गुणानुसार कुछ भी देवे वह यावत् माननीय जीवे वा अन्यथा न वर्ते तावत् वह दान रहे पश्चात् नहीं।

२० ३५—यदि पूर्वजों ने इससे विपरीताशय लेखपूर्वक किया हो और उस के कुलोत्पन्न वैसे न वर्तते हों तो भी वह दिया न दिया हो जावे। क्योंकि वह जिस समय दिया जाता है वह उत्तम काम के लिये होता है।

३६—परन्तु धर्मार्थादि के लिये जो दिया हो उस के भोक्ता
२५ अन्याय से वर्तते हों तो भी उस अंश के राजांश में न मिलावे, किन्तु कुकर्मी से छुड़ा योग्य धर्मात्मा को उस का अधिकारी करे।

---

१. तु०—स० प्रकाश, समु० ६, पृष्ठ २४१, पं० १६-१८ (आ० स० शताब्दी संस्करण २)। संस्कृत का शुद्ध शब्द दान है। राजधर्म प्रकरण में साम दान दण्ड और भेद इन चार उपायों का उल्लेख सर्वत्र मिलता है।
३० (द्र०—मनु० ७।१९८; कौ० अर्थशास्त्र अधि० ९, अ० ५; शुक्रनीति ४, २७) हिन्दी भाषा में साम के साहचर्य्य से दान का दाम बन गया है।

यदि वह भी प्रमादी हो तो पूर्वोक्त प्रकार उस से भी लेके अन्य योग्य को, यदि उसी के कुल में योग्य न हो तो देवे।

३७—यदि उन के सन्तान पितरों से अधिक योग्य हों तो उन को अयोग्य के अंश में से अधिकांश देवे और अधिक प्रतिष्ठा करे। ५

३८—यदि न्यायाधीश ही प्रमादी होकर अन्याय किया चाहे तो उन को राज्य और प्रजा के धार्मिक प्रधान पुरुष समझावें कि आप अन्याय मत कीजिये। यदि न मानें तो उसको पदच्युत करके जो उसी के कुल में निकट सम्बन्ध से न्यायास्पद के योग्य पुरुष हो उसको न्यायाधिकारी करें। परन्तु यह काम पक्षपात रहितता से १० होना उचित है। क्योंकि राज्य और विद्या, तथा धर्म की वृद्धि और अधर्म की हानि के लिये सब प्रतिष्ठा है प्रमाद के अर्थ नहीं।

३६—सब राज्य के आय में से दशांश धर्मादि के लिये नियत रक्खे। उस से वेदविद्या धर्म सुशिक्षा की वृद्धि के लिये अध्यापक १५ और उपदेशक प्रचरित करें। आपत् काल में राज्य और अनाथों की रक्षा भी उसी धन से करे।

४०—और राज्य से आय के नवांशों में से दो भाग स्थिर कोश, दो अंश राजकुल, तीन अंश सेना विभाग, एक अंश स्थान-विशेष और एक अंश शिल्प विद्या की उन्नति में लगावे। २०

४१—राज का कार्य एक पर निर्भर न रक्खे। किन्तु राज-पुरुष और प्रजापुरुष की अनुमति के अनुकूल प्रचलित करें।

४२—जो राजासन पर नियत हो उस का किंचित् भी अपमान कोई मन कर्म वचन से न करे। किन्तु जो जिस पर प्रधान हो चाहे उस से अप्रधान किसी गुण में अधिक भी क्यों न हो तथापि २५ परमेश्वर से द्वितीय स्थान में माननीय राजा और स्वामीवत् मान-नीय अपने अपने प्रधान को मानें।

४३—अधिष्ठाता लोग राजाज्ञा को अपने प्राण से भी अधिक मानें, चाहे कोई कैसा ही सम्बन्धी वा मित्र क्यों न हो। परन्तु जब राजाज्ञा भङ्ग वा उसमें आलस्य करे तब यह शत्रुवत् दण्डनीय ३० हो जावे।

४४—प्रथम सब प्रयत्न से विचारकर सर्वहित समझ के आज्ञा

देनी चाहिये। पश्चात् उस को पूरी करने में पूरा ध्यान और पुरु-
षार्थ रक्खे।

४५—अपने आत्मा वा शरीर को राजा वा अधिकारी न
समझें, किन्तु राजनीति ही को राजा और राज्याधिकारिणी
५ मानें।

४६—इस को निर्दोष और चलाने के लिए एक राजसमाज,
दूसरा विद्यासमाज और तीसरा धर्मसमाज नियत करे।

४७—इन समाजों में राजपुरुष और प्रजापुरुष नियत रहें।
राजपुरुष राजोन्नति और प्रजापुरुष प्रजा की वृद्धि में प्रयत्न किया
१० करें। और तीनों समाजों के विचारानुकूल नये नियम प्रचरित
किये जावें।

४८—जो जो आज्ञा इन समाजों से निश्चित हो कर प्रचरित
की जायें उनका उलङ्घन कोई भी न करे। यदि करे तो वह सब
का अमाननीय और दण्डनीय [हो]।

१५ ४९—सदा वेदादिशास्त्र मनुस्मृति के सप्तम, अष्टम और
नवम अध्याय, महाभारत के राजधर्म, आपत्धर्म और विदुर-
प्रजागर विदुर नीति के शब्दार्थ सम्बन्ध और कर्त्तव्य को सब राज-
पुरुष जान के तदनुकूल वर्त्तें। और इनके प्रचार में सदा प्रयत्न
किया करें।

२० ५०—जो जो सामयिक नियम और उपनियम नियत करना
होवे तो पूर्वोक्त समाज और वेदादिशास्त्रों के अनुसार निश्चित
करें और करावें।

५१—यह निश्चय है कि जैसा शील आचरण उत्साह और
पुरुषार्थ प्रधान पुरुष करता है वैसा ही इतरजन वर्तते हैं। इसलिये
२५ प्रधान पुरुषों को अत्यावश्यक है कि सदा अधर्मयुक्त कर्मों को छोड़
कर न्याय रूप धर्मकृत्यों में वर्त्ता करें। क्योंकि जो जो धर्म वा
अधर्म प्रधानपुरुष दृष्टान्त से इतर जनों में प्रवर्तमान होता है उस
का मुख्यनिमित्त प्रधान होकर फलभागी होता है। इसलिये मुख्य
पुरुषों को बहुत विचार से वर्तना चाहिये।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७३०] **कार्ड**

ओ३म्[1]

बाबू कृपाराम जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि पत्र तुम्हारा पहुंचा। समाचार ज्ञात हुए। और जो तुमने ५०००[०] पचास हजार की सही कराके मेरठ भेज दी, सो अच्छा किया। और ब्राह्मी औषधी सेर भर का पारसल कर के उदयपुर में भेज दो। यहां उदयपुर का समाचार अतीव प्रशंसनीय है। और सुनकर सब को आनन्द भी होगा। श्रीमान् आर्य्यकुल-दिवाकर महाराणाजी बहुत योग्य हैं। उन्होंने **हमारे उपदेशानुसार[2] अपनी दिनचर्य्या, राजकार्य्य और धर्मकृत्य भी करना आरम्भ कर दिया है**। प्रातः सायं काल सात बजे मेरे पास नित्य प्रति आया करते हैं। कभी कभी रात्रि को मैं शम्भु-विलास महिल में जाया कर्त्ता हूं। **प्रातः काल कुछ योग वा राजनीति की शिक्षा होती है। और सायंकाल दर्शन शास्त्रों के उपयोगी विषय पढ़ते हैं। उनके साथ बहुत से भाई बेटे तथा अमात्यवर्ग भी पढ़ते हैं।** और सब अच्छी बातें हैं। आगे जो जो उत्तम बात होनेवाली हैं, होंगी, तो सबको प्रसिद्ध कर दी जायंगी।

सं० १९३९ मार्गशीर्ष वदि ५, ता० २९ नवम्बर [१८८२]।

दयानन्द सरस्वती

---:o:---

[पूर्ण संख्या ७३१] **पत्र**

श्रीयुत बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो[3]।

विदित हो कि बहुत दिनों से अवकाश नहीं होने के कारण पत्र नहीं लिखा। अब कुछ प्रसङ्ग से लिखते हैं। **यहां का वर्त्तमान बहुत**

---

१. मूल पत्र पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार की भगिनी के पास गुरुकुल कांगड़ी में है। उस से सन् ३३ में म० मामराज ने शुद्ध किया। पहले मेरठ से आई प्रतिलिपि से छापा गया था।

२. पूर्ण संख्या ७२९ पर छपी दिनचर्य्यानुसार।

३. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में सुरक्षित है। म० मामराज ने इस की प्रतिलिपि की। फर्रुखाबाद का इतिहास पृष्ठ २१९-२० पर भी कुछ पाठ भेद के साथ छपा है।

अच्छा है। जो लिखने लगे तो एक पुस्तक बन जावे। सो पीछे सूक्ष्मता से आप को विदित कर देंगे। परन्तु यही समझ लेना कि समाचार बहुत ही अच्छा है। जब आप सुनेंगे प्रसन्न तो अवश्य हो जावेंगे। और हर साल आप शीतकाल में घूमने को जाते थे। यदि
५ आप की इच्छा हो तो यहां हम कम से कम १५ दिन रहेंगे। आप आवें तो यहां का वर्त्तमान भी सब विदित हो जावेगा। और श्री महा[रा]णा जी तथा अन्य राजपुरुषों से भी आप का मेल मिलाप हो जावेगा। सो यदि आप आवें तो १५ दिन के भीतर ही विचार करना चाहिये। सो जो आप के आने का पत्र यहां आवेगा, तब
१० चित्तौड़गढ़ रेल से यहां तक आने के लिये सवारी का प्रबन्ध भी हम कर देंगे। और लाला कालीचरण जी से कह दीजिये कि उन का पत्र हमारे पास आया। हमारा अभिप्राय यह नहीं था कि ६००) वा ३००) तुमको देने पड़ेंगे। किन्तु लिखने वाले की भूल है। हमारा अभिप्राय यह है कि २००) रु० कम से कम देना
१५ चाहिये कि जिस से ३ फारम का नवीन टाईप मंगा लिया जा[वे]। और ६००) रुपये के विषय में यह अभिप्राय है कि जो समाजों के समाचारपत्रादि सब पुस्तक छपने लगेंगे, तो दूसरा प्रेस मंगवाने के लिये जिन जिन के पुस्तक छपेंगे सब से रु० लिये जायेंगे। और निकाल भी दिये जायेंगे। और अब भारत-सुदशाप्रवर्तक [में] पं०
२० लक्ष्मीदत्त जी से लिखाना चाहिये! **वे संस्कृतयुक्त अच्छा विषय लिखेंगे। और नाटक का विषय तो नाम मात्र भी नहीं आना चाहिये।** जो अच्छा विषय भी लिखना हो वह प्रश्नोत्तर वा अन्य प्रकार से लिखा जावे। नाटक[नाम]तमाशे का है। क्योंकि तुम्हारे नाटक को[लिखा]देख के लखनऊ के समाज में नाटक का व्याख्यान
२५ ही होने लगा[1]। **जब हमने मने किया तो कहने लगे कि अपने फर्रुखाबाद समाज [के] पत्र में नाटक क्यों छपता है[2]। यह नाटक**

---

१. १० सितम्बर सन् १८८२ को लखनऊ आर्यसमाज के मन्त्री श्री हरनामप्रसाद जी ने एक पत्र श्री स्वामी जी को लिखा। उस में नाटक का उल्लेख है। आ० स० लखनऊ के मन्त्री हरनामप्रसाद का पत्र तीसरे भाग
३० में देखें। (पृष्ठ ७५१) पूर्ण संख्या ७२३ का पत्र तथा टि० ३ भी देखें।

२. यह पत्र आ. स. लखनऊ पं० इन्द्रनारायण प्रधान ने २८ अक्टूबर १८८२ को लिखा था। इन का पत्र तीसरे भाग में देखें।

से बिगाड़ का उदाहरण है। और पाठशाला में संस्कृत पढ़ के कितने विद्यार्थी समर्थ हुए। अथवा अंगरेजी फारसी में ही व्यर्थ धन जाता है, सो लिखो। जो व्यर्थ ही हो तो क्यों पाठशाला रक्खी जाय। सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।

मि० मार्ग वदी १४ शनिवार सं० १९३९[1]। ५

यह रुक्का सेठ निर्भयराम जी को देके १२) रु० मंगवा कर हजुं कहार के लड़के रामदीन को दिला देना। और वहां के मुनीम से कहना कि रु० देने में देर न करें[2]।

[दयानन्द सरस्वती]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७३२] पत्र-सूचना १०

[मुंशी समर्थदान जी, प्रयाग]

गत महिने कितने फार्म छपे। आख्यातिक और पारिभाषिक भेजो[3]।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७३३] पत्र

श्रीयुत लाला श्यामसुन्दर जी आनन्दित रहो।[4] १५

कुछ दिन हुये कि एक रजिष्टरी पत्र आर्यसमाज मुरादाबाद की ओर से आया था। उसमें यह विषय था कि जो देशहितैषी में प्रश्नोत्तरी के विषय में छपा है सो किसकी ओर से है। आप की सम्मति से है वा नहीं। उस का यही उत्तर है कि वह किसी की ओर से छपा हो, अच्छा २० है। क्योंकि प्रश्नोत्तरी में जितने विरुद्ध विषय लिखे गये थे उनके सत्यासत्य निर्णय के लिए उन का उत्तर छपना योग्य था। और मैं भी उस प्रश्नोत्तरी के विरुद्ध विषय के उत्तर में सम्मत हूं, क्योंकि जो ऐसा न हो तो जिसके मन में जैसा आवे वैसी ही बात लिख

---

१. ९ दिसम्बर १८८२। २५

२. यह सारा पत्र ऋषि दयानन्द सरस्वती जी महाराज की अपनी लेखनी का लिखा हुआ है।

३. इस की पत्र सूचना मार्गशीर्ष शु० १०, मंगल, १९३९ (१९ दिसम्बर १८८२) के पूर्ण संख्या ७३६ के पत्र में है।

४. मूल पत्र आर्यसमाज मुरादाबाद में सुरक्षित है। ३०

कर चला देवे। सब मनुष्यों को यही उचित है कि सत्यासत्य का निर्णय कर करा के सत्य को मानना, मिथ्या को छोड़ देना। अब इस का उत्तर दीजिये कि जो १००) रुपये वैदिक यन्त्रालय के सहाय में आर्यसमाज मुरादाबाद से आये थे, उस के देने की
५ प्रतिज्ञा तीसरे वर्ष की पूर्ति तक थी। सो आगामी वैशाख की पूर्ति में तीसरा वर्ष पूरा होगा। सो वैशाख तक जहां जहां से जितने जितने रुपये आये हैं, दिये जांयगे। अब उस में यह प्रतिज्ञा थी कि व्याज के बदले १०) रु० के पुस्तक और मूल रुपये भी दिये जांयगे। सो किस प्रकार किस के पास भेजा जाय। समाज से
१० सम्मति ले कर लिखिये। और १०) रु० के कौन पुस्तक लेना है सो भी लिखना। यहां का समाचार बहुत अच्छा है, पीछे लिखेंगे। और हमारा आशीर्वाद सब से कह दीजिये।

सं० १९३९ मार्ग शु० ७ रविवार[1]। (दयानन्द सरस्वती)

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७३४] पत्राशय

१५ [माई भगवती ....हरियाना पंजाब[2]]

हमारा उत्तर लिखने का अवकाश नहीं। सत्यार्थप्रकाश और भूमिका[3] में लिखा है।

१७ दिसम्बर १८८२[4]।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७३५] पारसल-सूचना

२० [मुंशी समर्थदान, प्रयाग]

निघण्टु सूचीपत्र सहित।[5]

—:o:—

१. १७ दिसम्बर १८८२।

२. इस पत्र का संकेत माई भगवती के ६ जनवरी १८८३ के पत्र में है। माई भगवती का पत्र तीसरे भाग में देखें।

२५ ३. अर्थात् ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका।

४. मार्गशीर्ष शुक्ल ७, रविवार, सं० १९३९।

५. इसे भेजने की सूचना पूर्णसंख्या ७३६ के पत्र में मिलती है। निघण्टु के अन्त में संशोधन काल इस प्रकार लिखा है— **निधिरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे**

[पूर्ण संख्या ७३६]　　　　**पत्र**

ओ३म्[1]

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो—

पत्र तुम्हारा आया समाचार विदित हुआ। अब तुम बहुतशीघ्र नया टैप मंगाओ, नहीं तो सत्यार्थप्रकाशादि सब पुस्तक बिगड़ जायेंगे। चाहे दोनों ओर से मंगाओ, पर शीघ्र मंगाओ। **हम लिख चुके हैं कि गत महीने में कितने फर्मे छपे और आख्यातिक तथा पारिभाषिक आदि पुस्तक मंगाये हैं,** क्यों नहीं भेजे वा उत्तर दिया? अब शीघ्र भेजो। और कोश के विषय में जो तुमने लिखा सो हम ऐसा कोश नहीं बनाते हैं कि सब कोशों से सब शब्दों का संग्रह करते हों। **किन्तु उणादि के ऊपर अनुकूल सुगम संस्कृत में वृत्ति बनाई है।** उसके प्रत्ययों के प्रसङ्ग में जो अन्य शब्द आये हैं वे भी लिख दिये हैं। सो वन के तो तैयार हो गया है। सूचीपत्र बाकी है। **निघण्टु सूचीपत्र के सहित तुम्हारे पास भेज दिया है। और निरुक्त तथा ब्राह्मणों के प्रसिद्ध शब्दों की संक्षिप्त सूची भी बनाकर भेजेंगे। सो निघण्टु की सूची के अन्त में छपवाना।** और ज्वालादत्त के पास भाषा बनाने के लिये अब भेजें वा ऐसा ही रक्खोगे। ५ भूमिका और सत्यार्थप्रकाश के फारम भेजे थे सो पहुंच गये। परन्तु सत्यार्थप्रकाश अक्षरों के घिस जाने से अच्छा नहा छपता।

मि० मार्ग शुदी १० मंगल १९३९[2]।　　　　दयानन्द सरस्वती।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७३७]　　　　**पत्र**

ओ३म्[3]

मार्गशीर्षसिते दले। चतुर्थ्यां गुरुवारेऽयं निघण्टुः संशोधितो मया॥ सं० १९३९ मार्गशीर्ष शु० ४ गुरुवार = २४ दिसम्बर १८८२।

१. आर्यधर्मेन्द्र जीवन तृतीय संस्करण पृ० ३७० पर मुद्रित। मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में होगा।

२. १९ दिसम्बर १८८२।

३. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है। [यह पत्र प्रथम

मुंशी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि तुम्हारा पत्र पहुंचा, समाचार ज्ञात हुये। परन्तु उत्तर जो तुमने कागजात भेजे हैं उनके पहुंचने के पश्चात् भेजेंगे। **सत्यार्थप्रकाशादि किसी ग्रन्थ में जो नोट लिखो**[1] **तो उसमें किसी**
५ **का नाम न लिखना**[2]। किन्तु टाइटल पेज के ऊपर तो तुम्हारा नाम रहना ही चाहिये। **परन्तु ग्रन्थ के नोट पर न रहना चाहिये**[2]। सरदार विष्णुसिंह जी मोहतमिम जंगलात उदयपुर के पास आज तक का जितना दोनों वेदों का भाष्य आरम्भ से छपा है भेज दो और आगे को भी सदा भेजा करो। परन्तु भूमिका मत
१० भेजना। क्योंकि वह यहां से लेली है और जैसा ऊपर लिखा है .... ।[3]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७३८] पत्राशय-सूचना

[सेवकलाल कृष्णदास, बम्बई]

और द्वितीय संस्करण में सं० १९३९ आश्विन वदी ६ चं० (२ अक्टूबर
१५ १८८२) के पत्र (पूर्ण संख्या ७१६) के आगे अस्थान में छपा था, हम इस संस्करण में प्रकरणानुसार यहां छाप रहे हैं।]

१. सत्यार्थप्रकाश में नोट लिखने की स्वीकृति स्वामी जी ने पूर्ण संख्या ७१० (पृष्ठ ७४१) तथा ७१६ (पृष्ठ ७४६) के पत्रों में दी थी।

२. समर्थदान ने सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय संस्करण में कुछ स्थानों पर
२० अपने नोटों के आगे 'समर्थदान' तथा 'स. दा.' ऐसा निर्देश छापा था। सम्भवतः उसे देख कर ऋ० द० ने यह निर्देश दिया, अथवा कहीं समर्थदान नोटों के साथ अपना नाम न दे देवे, यह सोचकर छपे पृष्ठ बिना देखे ही निर्देश दिया, यह हम नहीं कह सकते। यदि पहले दिया होगा तब भी इतना निर्विवाद है कि इस पत्र के पहुंचने से पूर्व सत्यार्थप्रकाश के कुछ पृष्ठों पर
२५ उसका नाम छप चुका था। ऋ० द० के आदेशानुसार समर्थदान ने उन पर सादी चिप्पी चिपका दी थी। परन्तु वै. य. अजमेर से सं. १९२५ के शताब्दी संस्करण से आगे कई सस्करणों तक पुनः समर्थदान का नाम छप रहा है।

३. यहां से आगे पत्र फटा हुआ है। इसी कारण तिथि का ज्ञान न होने
३० से ठीक स्थान पर जोड़ने में असमर्थ हैं।

पुरोहित उदयलाल के लिये घड़ी भेजो, गोरक्षा की सही के कागजात भी।[1]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७३६]　　　　**पत्र**

श्रीयुत लाला श्यामसुन्दर जी आनन्दित रहो[2]।

पत्र आप का आया समाचार विदित हुआ। ऐसे जो आर्य- ५
समाज के नियमों से विरुद्ध व्याख्यान होते हैं तो उन को रोक दीजिये। यदि रोकने से न मानें तो दूसरे स्थान में करें। **और मेरी निन्दा करते हों उस पर कुछ ध्यान न देना चाहिये, क्योंकि निन्दक निन्दा ही किया करते हैं और क्षमावान् क्षमा ही करते** १०
हैं। ऐसों की निन्दा से क्या हो सकता है। इन मुन्शी इन्द्रमणि तथा जगन्नाथदास का हाल मुझ से अधिक आप जानते ही हैं, क्योंकि **सहवासी विजानीयात् चरित्रं सहवासिनाम्**। सो जैसे इन में गुण कर्म हैं वैसा करते हैं, करो। अब एक नई बात की है कि विज्ञापन के तौर पर लिख के छपवा के जहां तहां भेजा है कि जो धन मेरे मुकद्दमा के लिए आया था उस के मालिक स्वामी जी १५
तथा लाला रामशरणदास जी बन बैठे। **देखो कैसी मिथ्या बात है**। ऐसी ऐसी बातों के प्रसिद्ध करने से इन की ही फजियत होगी। और **जगन्नाथदास आदि को समाज का सभासद नहीं, किन्तु कलंक समझना चाहिये**। ऐसे लोगों से कुछ सुधार की आशा नहीं होती कि जो पहिले अच्छे जान पड़ें और पीछे से बिगड़ २०
जांय। अब इन की सब बातें खुलेंगी तब कोई भी इन का विश्वास न करेगा। सब से हमारा आशीर्वाद कह देना। सं० १६३६ पौष वदी १२ शनिवार[3]।

(दयानन्द सरस्वती)

—:o:—

१. इस पत्र की सूचना सेवकलाल कृष्णदास के ६ जनवरी १८८३ के २५
पत्र में है। इसी पत्र के आधार पर यह आशय बनाकर लिखा है। सेवकलाल कृष्णदास का पत्र तीसरे भाग में देखें।

२. मूल पत्र आर्यसमाज मुरादाबाद में सुरक्षित है।

३. ६ जनवरी १८८३।

[पूर्ण संख्या ७४०] **पत्र**

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो[1]।

विदित हो कि इस पत्र के भेजने का मुख्य प्रयोजन यही है कि जो यात्रा करने का प्रथम विचार किया था कि १५ दिन के
५ पश्चात् यहां से अन्यत्र की यात्रा करेंगे[2], उस में श्रीयुत आर्य्यकुल दिवाकर उदयपुराधीशों के अत्याग्रह से अब माघ शुक्ल १५ पर्यन्त रहना होगा। छः **शास्त्रों का विषय तो पढ़ा दिया है। अब मुख्य जो राजनीति का विषय है उसके लिये मनुस्मृति के ७वें अध्याय से ९वें तक पढ़ावेंगे।** यदि अब आप आना चाहें तो हम को पत्र
१० लिखो। जब हमारा पत्र तुम्हारे पास पहुंच जावे कि अब चलो, सवारी भेज दी है तब वहां से चलना चाहिये। और यदि अब न आया चाहो तो जब रेल[3] पर पहुंचेंगे तब आपको खबर देंगे। उस समय मिलना हो जायगा। पंडित लक्ष्मीदत्त आदि सभासदों से हमारा आशीर्वाद कहियेगा। शुभम्।

१५ पौष वदी १४ सं० १९३९[4]।

[दयानन्द सरस्वती]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७४१] **पत्राशय**

[लालजी बैंजनाथ जी, बम्बई]

विट्ठल रसोइया का बेतन दिलवा दो।[5]

---

२० १. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. इस का संकेत दुर्गाप्रसाद जी को लिखे गये पूर्ण संख्या ७३१ के पत्र पृष्ठ ७६६, पं० ८-९ में है।

३. अर्थात् ऐसे स्थान पर जहां रेल है।

४. ८ जनवरी सन् १८८३ सोम।

२५ ५. लालजी बैंजनाथ के नाम का एक पत्र पूर्ण संख्या ६८ पर छपा है। उक्त पत्राशय की सूचना लालजी बैंजनाथ के २० जनवरी १८८३ के पत्र में है (इसे तीसरे भाग में देखें)। इन रुपयों के देने के लिये १ जून को आ० स० बम्बई की अन्तरङ्ग सभा ने निश्चय किया, परन्तु २५ जून तक नहीं दिये (द्र०—तीसरे भाग में सेवकलाल कृष्णदास का २५ जून १८८३ का

[पूर्ण संख्या ७४२]　　पत्र

श्रीयुत देशहितैषी सम्पादक समीपेषु। मान्यवर नमस्ते।[1]

विदित होय कि एक पत्र मुन्शी इन्द्रमणि जी के विज्ञापनरूप मेरे पास आया।[2] इसका उत्तर बहुत लम्बा है। परन्तु इस समय इस पत्र के थोड़े से उत्तर को आप अपने पत्र में स्थान देकर मुझ　५
को कृतार्थ कीजिये। यदि मुन्शी इन्द्रमणि जी अपने लेखानुसार सच्च हों तो उस व्यवहार में अन्यत्र से जितना आय व्यय हुआ हो आपके पत्र (दे० हि०) में छपवा के प्रसिद्ध करें। और इसी प्रकार लाला रामशरणदास जी भी। जिस के देखने से सज्जन लोगों को स्वयं सत्यासत्य का विचार हो जायगा, अर्थात् समझ　१०
लेंगे। और उसी हिसाब के नीचे यह भी लिखा हो कि जिस जिस भद्र आर्यजन ने मुन्शी जी और मुसलमान मुरादाबाद के झगड़े में जितने रुपये जिस जिस के पास भेजे होयं और जिस जिस की रसीद भी उन के पास हो नाम लेख पूर्वक वह वह देशहितैषी पत्र सम्पादक के पास भेजें। और उस उस के पत्र को आप अपने पत्र　१५
में छपा कर प्रसिद्ध कर दिया करें। जिस से सत्य और असत्य सब साम्हने प्रकाशित हो जाय।

पत्र)। इसी बीच लालजी का ज्येष्ठ वदी ८ सं० १९४०=२९ मई का पत्र ऋ० द० को मिला, जिसमें ४० रु० मनीआर्डर से भेजने को लिखा था (द्र०—लालजी बैजनाथ का पत्र तीसरे भाग में) तदनुसार ऋ० द० ने　२०
अपने पास से ज्येष्ठ शु० ७ सं० १९४० (१२ जून १८८३) को ४० रु० मनीआर्डर से भेजे (द्र०—तीसरे भाग में ज्येष्ठ सुदी ७ सं० १९४०=१२ जून १८८३ का तथा उससे अगला बिना तिथि का लालजी बैजनाथ का पत्र)।

१. मासिक पत्र देशहितैषी अजमेर मास माघ सं० १९३९ के अंक १० खण्ड १ के पृष्ठ २८-३६ से लिया गया। रजिस्टर देशहितैषी अजमेर में इस　२५
का संकेत है। श्री मुन्नालाल ने ३-१-१८८३ को श्री स्वामी जी को "मुन्शी इन्द्रमणी के विज्ञापन का खण्डन" लिखने के लिये पत्र लिखा था। उसी के उत्तर में यह खण्डन श्री स्वामी जी ने लिखकर भेजा। पूर्ण संख्या ७३९ के पत्र पृष्ठ ७७१ पर छपे **'अब इन की सब बातें खुलेंगी'** शब्दों का संकेत सम्भवत: इसी उत्तर की ओर है।　३०

२. मुंशी इन्द्रमणि का विज्ञापन तृतीय परिशिष्ट में देखें।

इस में सत्य तो यह है कि मुन्शी जी जो झूठा अपराध स्वामी दयानन्द सरस्वती जी और लाला रामशरणदास रईस मेरठ के ऊपर आरोपित करते हैं, वह सब अपराध मुन्शी जी का है। क्योंकि जब मुन्शी जी पर मैजिस्टरेट मुरादाबाद ने ५००) रु० ५ दण्ड किये थे उसके पश्चात् मुन्शी जी मेरठ में आये (जहां उस समय स्वामी जी भी उपस्थित थे) और कहा कि यह विवाद सब वेदमतानुयाइयों के ऊपर समझना चाहिये, न केवल मुझपर[1]। इस पर स्वामीजी और अन्य सब सज्जनों ने कहा कि यह ठीक है। क्योंकि मुन्शी जी ने वेदमत की रक्षा के लिये इतना बड़ा परिश्रम १० किया है। इसलिये इस समय इस मामले में सब वैदिकों को सहाय करना उचित है। इस पर सब की यही सम्मति हुई कि इस बात के लिये एक सभा नियत हो और चन्दा इकट्ठा करे। जिस से उस के आय व्यय का हिसाब वह सभा रक्खे। और मुन्शी जी को उस में से इतना धन दिया जाय कि जितना खरच होना उचित होय। १५ अन्त को यह सभा मेरठ में नियत हुई। और मुन्शी जी से कहा कि जो कोई आप के पास रुपये भेजे उन को आप भी इस सभा के कोषाध्यक्ष लाला रामशरणदास जी के पास भेज दिया करें[2]। और उस के आय व्यय की परताल (जांच) यह सभा किया करे और हिसाब भी लेवे। इन सब बातों को मुन्शी जी ने भी स्वीकार २० स्वामी जी आदि के सम्मुख किया था। और यह भी उसी समय निश्चय हुआ था कि सिवाय उस सभा के सभासद् के दूसरे से उस धन का आय व्यय वा संख्या प्रसिद्ध तब तक न करनी चाहिए कि जब तक यह कार्य पूरा न हो जाय। यदि चन्दे का धन कम आवे और खर्च अधिक करना होय तो किसी योग्य धनाढ्य पुरुष २५ से सभा उधार लेकर कार्य्य करे। इसी लिये लाला रामशरणदास जी ने जमा धन की संख्या मुंशी जी को नहीं बतलाई थी। क्योंकि

---

१. बाबू दुर्गाप्रसाद, फर्रुखाबाद को २५ अगस्त सन् १८८० के पत्र में मुं० इन्द्रमणि जी लिखते हैं—"चूं कि वह काम धर्म का है, इस में सब आर्यों को कोशिश करनी चाहिये।"

३० २. अपने ६ सितम्बर १८८० के पत्र में मुंशी इन्द्रमणि जी बाबू दुर्गाप्रसाद को पुन: लिखते हैं---"चंदा सब जगह का स्वामी जी के पास जमा हो रहा है। बवक्त जरूरत आजावेगा।"

सभा की आज्ञा बतलाने की नहीं थी। इस गुण को मुंशी जी ने दोष समझा। धन्य है मुंशी जी की बुद्धिमत्ता को। इससे सब सज्जन लोग समझ सकते हैं कि यह मुंशी जी को संख्या न बतलाने में लाला रामशरणदास जी का दोष है वा इस पर क्रोधित होकर यथा तथा कुवाच्य कहने लिखने में मुंशी इन्द्रमणि जी का।　　५

इस विपरीत व्यवहार का कारण यह विदित होता है कि जब इधर-उधर से बहुत धन मुन्शी जी के पास आने लगा तब लोभ के वश में होकर जो पूर्वकृत नियम अर्थात् जितना धन मुंशी जी के पास आवे वह मेरठ सभा के कोषाध्यक्ष लाला रामशरण जी के पास तो भेजना दूर रहा, किन्तु जब लाला रामशरणदास जी ने　　१० कई बार पत्र भेज कर हिसाब मांगा तो मुंशी जी ने मौन साध के हिसाब नहीं दिया। तब लाला रामशरणदास जी को निश्चय हुआ कि मुन्शीजी के मन में कुछ अन्य आशय है। इस बात के निश्चयार्थ लाला श्यामसुन्दर रहीस मुरादाबाद के पास लाला रामशरण दास जी ने पत्र भेजा कि मुन्शी जी से हिसाब पूछ कर मेरे पास　　१५ भेजो। उनको भी मुन्शी जी ने हिसाब नहीं दिया, किन्तु इस सर्व-वैदिक मत के रक्षार्थ धन को अपना निज धन ही समझ लिया। जब से लाला रामशरणदास जी ने मुंशी जी को धन देना बन्द किया और स्वामी जी को पत्र द्वारा विदित किया तब **स्वामी जी ने उत्तर दिया कि इस समय इस बात के होने से कार्य्य में विघ्न**　　२० **होगा, कार्य्य होने दीजिये।** और (६००) रु० जो मांगते हैं दे दीजिये। तब उन्होंने दे दिये। और इस से अधिक धन मुंशी जी को कितना दिया और कितना लाला रामशरणदास जी के पास जमा रहा यह बात हिसाब छपने से सब को प्रसिद्ध हो जाएगी। **और स्वामी जी ने उक्त लाला श्यामसुन्दर कोठी वाले रहीस**　　२५ **मुरादाबाद के पास पत्र भेजा कि मुंशी जी से हिसाब लेकर लाला रामशरणदास जी के पास भिजवा दीजिये।** उन्होंने उत्तर दिया कि मुंशी जी हिसाब तो नहीं बतलाते, किन्तु इस विषय में पूछा जाता है तो कुछ भी नहीं कहते। **धन्य रे धन, तेरे में बड़ी आकर्षण शक्ति है, कि तू बड़ों-बड़ों को भी धर्म से डिगा कर नीचे गिरा**　　३० **देता है।** जब देहरादून से आते समय मेरठ के स्टेशन पर लाला रामशरणदासादि से मेल हुआ तब मुन्शी जी के विषय की बात

सुन बड़ा आश्चर्य मान के उन से (स्वामी जी ने) कहा कि मैं कोयल[1] इसी लिये ठहर के वहां मुन्शी जी को बुला कर समझा दूंगा।

स्वामी जी ने कोयल में आकर मुन्शी जी को बुलाने के लिये तार दिया। उस के उत्तर में मुंशी जी ने तार में खबर दी कि मैं ५ बीमार हूं। नारायणदास प्रयाग को गया है। अर्थात् मैं नहीं आ सकता। **पश्चात् स्वामी जी ने आगरा में आकर मुन्शी जी के पास पत्र भेजा कि यदि यह बात सत्य है तो इस में आप की बड़ी निन्दा होगी। आप यहां शीघ्र आइये।** मुन्शी जी ने बहुत क्रोधित होकर असभ्यता की बातें जो कि उनके लिखने के योग्य न थीं १० लाला रामशरणदास जी की निन्दापूर्वक बहुत सी लिखीं। और यह भी उस पत्र में लिखा कि आप लाला रामशरणदास जी से हिसाब मंगवाइये। **स्वामी जी ने तब लाला रामशरणदास जी को लिखा कि आप हिसाब लिख कर मेरे पास यहां भेज दीजिये। जब मैं आप के हिसाब को मुन्शी जी को दिखला दूंगा तब वे भी १५ अपना हिसाब देंगे।** इस के थोड़े ही दिनों के पश्चात् मुन्शी जी तथा लाला जगन्नाथदासजी आदि मथुरा होते हुए आगरे में स्वामी जी के पास आए। जब स्वामी जी ने उन से कहा कि हिसाब लाए हो या नहीं, तब मुन्शी जी ने कहा कि हां लाये हैं। परन्तु पहले लाला रामशरणदास जी का हिसाब मंगा लो तब हम भी दिखा २० देंगे। तब स्वामी जी ने कहा कि जब आप के पास हिसाब है तो क्यों नहीं दिखलाते। तब पुनः मुन्शी जी और लाला जगन्नाथदास जी ने कहा कि उन का हिसाब आने दीजिये तब दिखलावेंगे।

पाठकगणों! परमेश्वर की कृपा और लाला रामशरणदास जी की सच्चाई से दूसरे ही दिन मेरठ से हिसाब आ गया। स्वामी जी २५ ने मुन्शी जी तथा लाला जगन्नाथदास जी को दिखला दिया। पश्चात् स्वामी जी ने कहा कि अब तुम दिखलाओ। तब मुन्शी जी के कहने से लाला जगन्नाथदास जी ने बैग को हाथ लगाया। इधर उधर हाथ फेर कर कहा कि वह हिसाब का कागज तो मैं

---

१. **कोयल**—अलीगढ़ का नाम है। कोयल अर्थात् अलीगढ़ जाने का ३० वृत्त पं० लेखराम, पं० घासीराम, स्वामी सत्यानन्द आदि किसी ने नहीं लिखा। इस लेख से निश्चित हो जाता है कि श्री स्वामी जी कुछ दिन कोयल में रहे।

मुरादाबाद ही में भूल आया। सभ्यगणों ! देखो। क्या मिली हुई गुरु चेले की भक्ति है। तब स्वामी जी ने कहा कि जितना आप को स्मरण होय उतना ही कण्ठ से लिखवाइये। तब मुन्शी जी लिखवाने लगे। अनुमान है कि २०००) दो हजार तक का हिसाब तो लिखवाया। और कहने लगे कि अब मुझे याद नहीं है। हम मुरादाबाद पहुंच कर शीघ्र हिसाब भेज देंगे। सो आज तक नहीं भेजा। अब आप लोग इन बातों से विचार लेंय कि मुन्शी जी सच्चे हैं वा लाला रामशरणदास जी।

तब मुंशी जी और लाला जगन्नाथ जी व्यर्थ वितंडावाद करने लगे। और कहा कि जो २५०) लाला बल्लभदास जी ने भेजे थे, सो इस हिसाब में जमा क्यों नहीं। तब स्वामी जी ने कहा कि वे रुपये तो गुरदासपुर में मेरे नाम आये थे। मैंने लाला रामशरण-दास जी को दिये थे। न जाने उन्होंने जमा क्यों नहीं किये। इस का समाचार मैं लिख कर मंगवा दूंगा। **स्वामी जी ने उसी दिन लाला रामसरनदास जी को पत्र लिख उत्तर मंगवाया।** तब उन्होंने लिखा कि यह मेरे मुंशी की भूल से लाहौर के रुपयों के साथ गुरदासपुर के भी २५०) रु० जमा लिखे गये हैं। अर्थात् जिस दिन १५०) रु० लाहौर समाज से आये थे। उसी दिन २५०) के नोट आपने भी दिये थे। भूल से ४००) रु० लाहौर समाज के नाम जमा किये गये हैं। अब मुंशी जी इस का निश्चय करें वा करावें। अर्थात् इन २५०) रु० के सिवाय किसी ने स्वामी जी के पास रुपया नहीं भेजा। यदि भेजा हो तो जिस के पास स्वामी जी के हस्ताक्षर रसीद होगी, भले ही प्रसिद्ध से छपवा देवे। किन्तु स्वामीजी की कुछ इस में विपरीत बात हो तो स्वामी जी प्रतिज्ञा पूर्वक कहते हैं कि सिवाय २५०) रुपयों के मेरे पास एक कौड़ी किसी की नहीं आई। क्योंकि जो कोई स्वामी जी से पूछता वा पत्र भेजता था तो स्वामी जी यही उत्तर देते थे कि जो भेजना हो सो लाला रामशरणदास जी के पास मेरठ सभा को भेजो। क्योंकि उसी सभा के आधीन यह सब प्रबन्ध है। इस उत्तम प्रबन्ध को तोड़ने वाले मुंशी जी है, कि जिन्होंने भारतमित्रादि समाचारों में अपना मतलब सिद्ध करने के लिए अंड बंड छपवा कर स्वप्रयोजन सिद्ध किया। और अपनी प्रशंसा पर बट्टा

लगाया। शोक है कि यह धन बुरी बला है, जो बड़े बड़े चतुरों को भी फंसा लेती है।

उसी दिन स्वामी जी ने मुंशी जी से कहा कि हिसाब ठीक ठीक मेरठ सभा में भेज दीजिए। जो एक नियम हुआ है उसका ५ तोड़ना अच्छा नहीं। आप पूर्वकृत नियमानुसार वर्तिये, जिस से प्रीतिपूर्वक सब सहायक रहें। इसी में अच्छा है। विरोध होना अच्छा नहीं। तब तो मुंशी जी और लाला जगन्नाथदास जी दोनों क्रोधाविष्ट होकर कहने लगे कि हम से हिसाब लेने वाला कौन है। इसके मालिक हम हैं। हमारे पर यह सब मामला चला है। १० हमारे नाम चन्दा आता है। जो आता है हमारा ही है। और लाला जगन्नाथदास जी बोले कि यदि आप से कोई वैदिक यन्त्रालय का हिसाब पूछे, क्या आप देंगे? स्वामी जी ने कहा कल्ल लेते आज ही लो। यहां कोई बात गुप्त नहीं। किन्तु जब कोई आर्य्य समाज का प्रतिष्ठित सभासद् हिसाब लेना चाहे उसको कोई १५ अटकाव नहीं। तब स्वामी जी ने मुंशी जी को एकांत में ले जाके समझाया कि ऐसी बात करना आप को उचित नहीं है। एक तो वह बात थी जो मेरठ में आपने कही थी कि यह सब वैदिक धर्म वालों का मामला है। मेरा अकेले का नहीं और इस से विरुद्ध आज की बात है कि मेरे ही अकेले का मामला आदि है। सुनिये २० मुंशी जी यदि मैं आप को पहले से ऐसा जानता तो आपके साथ एक क्षणमात्र भी न ठहरता और आप का कुछ भी समर्थ नहीं था कि अकेले इस प्रकार का सहाय प्राप्त कर सकते। अस्तु मैं तो उसी बात को समझता हूं कि यह सब वैदिकमतानुयायियों के साथ की बात है। तब तो मुंशी जी कुछ शान्त हुए। तब स्वामी जी ने २५ कहा कि अब शेष कार्य्य आप सिद्ध कीजिये। और प्रयाग में एक दो पुरुषों का नाम लिखवाया कि उन की सम्मति से सब काम कीजियेगा। और मुरादाबाद पहुंच के हिसाब मेरठ में शीघ्र भेज दीजियेगा। मुंशी जी ने कहा कि जाते ही भेज दूंगा। सो भी न किया और न हिसाब भेजा। करते और भेजते तब, जब उन के ३० मन में शुद्ध भाव होता। किंतु वहां प्रयाग में भी गुप्त व्यय कर कराके जैसा कि मुरादाबाद जजी में व्यय व्यवस्था हुई थी वैसे ही प्रयाग से करा अपनी नीयत का फल पा कर चले आये। फिर भी

न जाने किस किस सज्जन पुरुष के पुरुषार्थ से श्रीमान् गवर्नर जनरल साहब बहादुर से प्रार्थना करके १००) रु० का दण्ड भी माफ कराया गया।

यदि अब भी मुंशी जी अपनी बात को सच्चा करना चाहे तो उस मुसलमानों के साथ के मामले में जहां जहां से जितना जितना धन जिस जिस ने भेजा उनका नाम ठिकानादि सहित लिख और जितना जितना जिस जिस कार्य में व्यय हुआ हो प्रसिद्ध सब समाचारों में छपवादें। और जितना धन उस मामले के विषय में व्यय से शेष रहा हो उसको मेरठ सभा में भेज देवें। क्योंकि जो मेरठ सभा का वह निश्चित हुआ था कि यदि मुंशी जी के मामले से चन्दे का धन बचे तो उसका क्या किया जाय। इस पर सब की यही सम्मति हुई थी कि उस धन को ।।) आने ब्याज में किसी धनाढ्य के पास रखा जाय और जब जब अन्य मतावलम्बियों के साथ वैदिक आर्यों का विवाद राजन्याय घर में चले तब उसी में इसका व्यय किया जाय अन्यत्र नहीं। क्योंकि यह धन इसी बात के लिए इकट्ठा किया जाता है। और जैसा आज मुंशी जी पर कष्ट पड़ा है सम्भव है कि अन्य पर भी कभी न कभी आ पड़े। इस लिए इस धन की स्थिरता और उन्नति सदा करते जाना चाहिए। परन्तु पाठकगणो इस महोपकारक कार्य को मुंशी जी के लोभ ने बढ़ने न दिया। अब बुद्धिमान् लोग विचार कर लेवें कि इस में स्वामी जी और लाला रामशरणदास जी का अन्यथा व्यवहार है वा मुंशी इन्द्रमणि जी का। अधिक लिखना बुद्धिमानों के साम्हने आवश्यक नहीं। क्योंकि प्राज्ञ जन थोड़े ही लेख से बहुत समझ लेते हैं। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु।

निधिरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे पौषमासे सिते दले।
प्रतिपत् सौम्यवारे हि पत्रमेतदलेखिषम् ॥१॥

सम्वत् १९३९ पौष शुक्ले १ बुधवासरे[1] ॥

वही आप का परम मित्र
उचित वक्ता

—:o:—

[1] १० जनवरी सन् १८८३।

[पूर्ण संख्या ७४३] मनिआर्डर-सूचना

[सेवकलाल कृष्णदास, बम्बई]

२५) रु० घड़ी के लिये।[1]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७४४] पत्र-सारांश

५ **[सेवकलाल कृष्णदास मन्त्री आर्यसमाज मुम्बई]**

घड़ी भेजो। गोरक्षा की सही के कागज भेजो। समाजस्थान का सब हिसाब भेजो। विट्ठल का लेना देना चुका दो।[2] [अथर्ववेद की टीका और ऋषि छन्द ढूंढ कर भेजो।][3]

१७ जनवरी १८८३[4]।

—:o:—

१० [पूर्ण संख्या ७४५] पत्र

संख्या १॥[5] ओ३म्

पंडित गौरीशङ्कर जी आनन्दित रहो॥[6]

---

१. इस मनिआर्डर की सूचना सेवकलाल कृष्णदास के २० जनवरी १८८३ के पत्र में है। पत्र तीसरे भाग में देखें।

१५ २. इस पत्र का संकेत और अभिप्राय सेवकलाल कृष्णदास के १९ जनवरी के पत्र में है। पत्र तीसरे भाग में देखें।

३. इस का संकेत सेवकलाल कृष्णदास के १९ जनवरी १८८३ के पत्र में तो नहीं है, परन्तु २० जनवरी के पत्र में मिलता है। हो सकता है यह अंश ऋ० द० ने किसी अन्य पत्र में लिखा हो। आवश्यक अंश होने से

२० हमने इसे यहां जोड़ कर सुरक्षित किया है।

४. पौष शुक्ल ९, सं० १९३९, बुधवार।

५. यह संख्या पीछे से लिखी गई है। इस का सम्बन्ध कई मास पश्चात् श्री पं० कालूराम को लिखे गये उपदेशक रूप पत्र के साथ है। उस पत्र संख्या २ डाली गई है। से दोनों पत्र श्री गोरीशंकर जी के परिवार

२५ से प्राप्त हुए हैं।

६. इस पत्र की मूल प्रति पं० गौरीशंकर के पौत्र श्री सुधाकर दीक्षित के दामाद श्री जितेन्द्र जी आर्य, फोटो ग्राफर 'टाइम्स आफ इण्डिया' बम्बई के पास है।

पत्र आया समाचार जाना। जो तुमने लिखा सो ठीक है। कायस्थ और कारीगर लोग जो मन्त्रोपदेश चाहते हों उनको (विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रं तन्न आसुव) इस मन्त्र का उपदेश कर दिया करें। वेदों का अधिकार सब को है और जो उच्चारण करने में असमर्थ हों उनके लिये (नमः पर- ५ मेश्वराय) इतना ही उपदेश कर देना॥

पहले से हमको यह सन्देह था कि जितनी राजनीति वेदशास्त्रों के अनुकूल हम जानते हैं सो कदाचित् शरीर के साथ ही न जावे। सो इसका जानना अब सफल हुआ और हमारा चित्त भी सन्तुष्ट हुवा। यहां श्री दरबार महाराणा जी सब राजनीति को पढ़ते १० सुनते और आचरण भी यथोचित करते हैं॥

तुम्हारे समाज का ······[1] उन्नति सुनकर बड़ा आनन्द हुवा। शेष समाचार लिखने योग्य लिखा जावेगा। सब से हमारा आशीर्वाद कह देना॥

मिति पोष शुदि १० बुधवार॥[2] १५

संवत् १९३९ (दयानन्द सरस्वती)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७४६] पत्र-सूचना

[लाला रामशरणदास, मेरठ]

इन्द्रमणि के विज्ञापन के साथ।[3]

—:०:—

२०

[पूर्ण संख्या ७४७] पत्र-सारांश

[श्रीयुत बाबू दुर्गाप्रसाद जी, फर्रुखाबाद]

कहार रसोइया तथा शोधक और कोषाध्यक्ष के लिये[4]।

—:०:—

---

१. यहां एक शब्द बहुत अस्पष्ट होने से पढ़ा नहीं गया।

२. पौष शुदि १० को बृहस्पतिवार था। सम्भव है बुधवार को भी १०मी रही हो। १७ जनवरी १८८३। २५

३. इस पत्र का निर्देश लाला रामशरणदास के २१ जनवरी १८८३ के पत्र में है। रामशरणदास का पत्र तीसरे भाग में देखें।

४. इस पत्र का संकेत ४ मार्च १८८३ (=फा० व० १० सं० १९३९)

[पूर्ण संख्या ७४८] पत्र

ओ३म्[1]

मुदरिस रामदयाल आनन्दित रहो विदित हो कि गोरक्षार्थ जो तुमने श्रम किया सो धन्यवाद देने की योग्यता है। आगे जितनी ५ सही हुई हो उस को रजिष्टरी कराके हमारे नाम से उदयपुर में भेज दो। और आगे को जहां तक हो सके कराते जाना॥ और माधोसिह आदि के सहायता से जो सही में अधिकता हुई है इस-लिये उन सज्जनों से हमारा आशीर्वाद कह देना।

मिति माघवदी ५ रवि[2] [सं० १९३९]

१० दयानन्द सरस्वती

उदयपुर

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७४९] पत्र

ओ३म्[3]

मुंशी समर्थदान जी आनन्दित रहो—

१५ विदित हो कि कई एक पत्र भेज चुके हैं[4]। एक का भी प्रत्युत्तर नहीं मिला, क्या कारण है? तुम्हारा शरीर तो स्वस्थ है? जैसा हो वैसा शीघ्र लिखो। और भेजे हुए पत्रों का भी उत्तर भेजना। **आज अत्यन्त अयोग्यता के कारण भीमसेन को सब दिन के लिए**

के पूर्ण संख्या ७६५ (पृ० ७९७) के पत्र में है। इस विषय में बा० दुर्गा-
२० प्रसाद का २० फरवरी १८८४ का पत्र तीसरे भाग में देखें।

१. स्वामी दयानन्द जी द्वारा पं० रामदयाल जी को गोरक्षार्थ हस्ताक्षर कराने हेतु लिये गये पत्र की प्रतिलिपि परोपकारिणी सभा (अजमेर) के संग्रह में है।

२. २८ जनवरी १८८३।

२५ ३. आर्यधर्मेन्द्रजीवन तृतीय संस्करण, पृ० ३७६ पर मुद्रित। मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित होगा।

४. इस से पूर्व का मार्ग शु० १० सं० १९३९ (=१९ दिस० १८८२) का पत्र पूर्ण संख्या ७३६ पर छप चुका है। एक अज्ञात तिथि का अधूरा पत्र पूर्ण संख्या ७३७ पर छपा है। यहां जिन पत्रों की ओर संकेत है, वे पत्र
३० हमें प्राप्त नहीं हुए।

निकाल दिया है। उस को मुख न लगाना। लिखे लिखावे तो कुछ ध्यान न देना॥

मार्ग बदी ५ रवि[1]।
उदयपुर। दयानन्द सरस्वती

—:०:—

५

[पूर्ण संख्या ७५०] पत्र-सूचना

[आनन्दीलाल जी (?) मन्त्री आ० स० मेरठ]
गुरुदासपुर के १५०) रुपये के सम्बन्ध में[2]।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७५१] आशीःपत्र-सूचना

पुत्र जन्म पर शुभाशीः[3]।
[माघ शु० २ शुक्र सं० १९३९][4]

१०

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७५२] पत्र

ओ३म्[5]

---

१. २८ जनवरी १८८३। आर्यधर्मेन्द्रजीवन में भूल से 'मार्ग' लिखा है। मार्ग वदी ५ को बुधवार था, मार्ग शु० ५ को शुक्रवार। अतः यहां माघ होना चाहिये।

१५

२. आर्यसमाज मेरठ के रजिस्टर (जो लाहौर में नष्ट हो गया) में अन्तरङ्ग सभा १५ फरवरी १८८३ के विषय में लिखा है—

"श्री स्वामी जी महाराज का खत पेश होकर तजवीज हुई कि गुरुदासपुर समाज के १५०) रुपये की बाबत खबर मंगानी चाहिये"। यह पत्र जनवरी १८८३ के अन्त में उदयपुर से भेजा गया होगा।

२०

३. इस आशीःपत्र का उल्लेख महाराणा सज्जनसिंह के सं० १९३९ माघ शु० २ मंगलवार के पत्र में है। महाराणा जी का पत्र तीसरे भाग में देखें।

४. यह तिथि आनुमानिक है। ९ फरवरी १८८३।

५. पं० रामदयाल जी द्वारा गोरक्षा हस्ताक्षर करा कर भेजने पर महर्षि द्वारा धन्यवाद में लिखे गये पत्र की प्रतिलिपि परोपकारिणी सभा (अजमेर) के संग्रह में है।

२५

पण्डित रामदयाल जी आनन्दित रहो विदित हो कि आप के यहां से गोरक्षार्थ सही कराके जो भेजा सो पहुंचा इस कार्य के बदले हम सब को धन्यवाद देते हैं ॥

सबसे हमारा आशीर्वाद कह देना ॥

५   मिती माघसुदी ६ मङ्गल संवत् १९३९[1]

दयानन्द सरस्वती
उदयपुर

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७५३]   पत्रांश

[भाई जवाहरसिंह मन्त्री आर्यसमाज लाहौर]

१०   हम मद्रास्यों को भूल रहे हैं। उधर जाना उत्तम होगा।[2]

१७ फरवरी १८८३ से पहले।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७५४]   पत्रांश

[भाई जवाहरसिंह मन्त्री आर्यसमाज लाहौर]।

दो स्त्रियां ऐसी चाहिये जो पतिवाली शुद्धाचरणवाली, कसीदा १५ काढ़ना और पढ़ाना जाननेवाली हों। एक अन्तरङ्ग मन्त्री शाहपुरा राज्य के लिये चाहिये। एक ओवरसियर भी चाहिये। "यह देश के हित का काम है।......जिन के भाग्य होंगे वह आवेंगे।"[3]

[१७ फरवरी से पहिले।]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७५५]   पत्र-सूचना

२०   [जोशी लालजी कल्याणजी][4]

—:०:—

१. १३ फरवरी १८८३।

२. इस का संकेत भाई जवाहरसिंह के १७ फरवरी १८८३ के पत्र में है। इस पत्र को तीसरे भाग में देखें।

३. इन विषयों का सकेत भी भाई जवाहरसिंह के १७ फरवरी १८८३ २५ के पत्र में ही है। वहां ऋ० द० के दो पत्र पहुंचने का निर्देश है। जवाहरसिंह का पत्र तीसरे भाग में देखें।

४. इस पत्र की सूचना जोशी लालजी कल्याणजी के सं० १९४०

[पूर्ण संख्या ७८६] कार्ड

ओ३म्

आर्यवर श्री बाबू रूपसिंह जी योग्य रामानन्द ब्रह्मचारी का आशीर्वाद विदित हो। जगदीश की कृपा से यहां सब प्रकार आनन्द मङ्गल है। आशा है कि तुम्हारे यहां भी सब प्रकार से कुशलता होगी। अब श्रीयुत जगद्गुरु श्री स्वामी जी यहां उदयपुर से फाल्गुन शुदी[1] ७ गुरु० सम्वत् १९३९ को यात्रा अजमेर की ओर करेंगे, सो जानना। आगे जहां जाके निवास करेंगे सो तुम को लिखूंगा। बहुत दिनों से तुम ने अपना कुशल पत्र नहीं दिया। इस में क्या कारण हुआ? अब आप इस पत्र के पहुंचते ही अपना कुशल पत्र भेजना। क्या मैंने एक वार तुमको लिखा था कि मैं श्री गुरु जी के पास से जाने वाला हूं, इस बात से न [पत्र] भेजा हो। परन्तु जिस बात के न होने से मैं जाना चाहता था अर्थात् पठन [न] होने से[2] सो दयानिधि गुरु जी ने मेरे पढ़ने के लिये आधा दिन दे दिया है। सो बड़ा पढ़ना होता है। अब अष्टाध्यायी के ५ अध्याय कंठ हो गये हैं। ६[ठा] अध्याय पढ़ता हूं। श्री गुरु जी का आशीर्वाद विदित हो॥

मिति माघ शुदी १२ रवि० सं० १९३९[3]।

रामानन्द ब्रह्मचारी उदयपुर।

—:o:—

वैशाख सुदी ९ (१५ मई १८८३) के पत्र में है। जोशी जी के पत्र के अनुसार ऋ० द० का यह संकेतित पत्र ४-५ मास पूर्व कानपुर में पहुंचा था। जोशी लालजी कल्याणजी का पत्र तीसरे भाग में देखें।

१. "बदी" चाहिये। १ मार्च १८८३ को चले। देखो पत्र पूर्ण संख्या ७९३ (पृष्ठ ७९४)।

२. इस का संकेत पूर्ण संख्या ७२६ के पत्र के आरम्भ में 'दूसरा प्रयोजन' के अन्तर्गत है। द्र०—पृष्ठ ७५३, पं० ११-१२।

३. २८ फरवरी सन् १८८३। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

[पूर्ण संख्या ७५७] पत्र

ओ३म्[1]

मुन्शी समर्थ दानजी आनन्दित रहो

विदित हो कि आज यजुर्वेद के ४७४ से ४९१ वे तक पत्रे[2] भेजे
५ हैं और कुछ बांधने वालों की भूल से यजुर्वेद के रह गये थे सो भी भेज दिये थे पहुंचे होंगे अब तुम्हारा काम तो कर दिया परन्तु तुमने हमारे पास मासिक हिसाब नहीं भेजा और हम लिख भी बहुत बार चुके अब शीघ्र मासिक हिसाब भेज देना। और जो तुम ने भीमसेन के विषय में लिखा सो ठीक है। आज पुस्तकादि सब
१० चित्तौड़ को भेज दिये हैं और आगामी बृहस्पति[3] के प्रातःकाल यात्रा करेंगे……… [4] दिन पहुंचेंगे मिति फाल्गुन वदी ४ सोम[5]।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७५८] पत्र

[डी०रे०ए० राजा पाकसा कापनिया वालनवा मालपति मदुरा
१५ लङ्का]

---

१. इस पत्र की प्रतिकृति (फोटो) नवम्बर सन् १९८३ में अजमेर में सम्पन्न दयानन्द निर्वाण शताब्दी के विवरणात्मक 'परोपकारी' पत्र के वर्ष २६, अङ्क १, दिस० ८३, जन० ८५ के सम्मिलित अङ्क में छपी है।

२. 'पत्रे' यह शब्द ऋ० द० ने चिह्न देकर स्वहस्त से बढ़ाया है।

२० ३. जीवन-चरितों के अनुसार ऋ० द० ने उदयपुर से २८ फरवरी १८८३ बुधवार के दिन प्रस्थान किया और १ मार्च बृहस्पतिवार को चित्तौड़ पहुंचे थे।

४. यहां भी ऋ० द० ने स्वहस्त से बढ़ाया है। इस में 'दिन' शब्द से पूर्व तीन अक्षर स्पष्ट पढ़े नहीं जाते। 'दूसरे' शब्द सम्भव है।

२५ ५. सं० १९३९। २६ फरवरी सन् १८८३।

यह पत्र पोस्ट कार्ड पर लिखा गया था। इस पर पता लिखा था—

प्रबन्धकर्ता मुन्शी समर्थदान वैदिक

यन्त्रालय प्रयाग (इलाहाबाद)

इस पर इलाहाबाद पोस्ट आफिस की २८ फरवरी १८८३ की मोहर
३० लगी है।

मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि आप लङ्का के एक प्रतिष्ठित परिवार के हैं[1]।

२७ फरवरी [सन् १८८३]।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७५६]　　पत्र-सारांश

[श्री बाबू दुर्गाप्रसाद जी फरुखाबाद]　　५

रामनाथ कौन है, क्या पढ़ा है और नागरी लिखना जानता है वा नहीं। और हमारे साथ कब रहा है?[2] कौन वर्ण है? कहां का रहने वाला है और मुरादाबाद वाले के लिये लिखा था कि जब तक बड़ा हानिकारक अपराध न करे न निकाला जायगा। सो भी आप के अधीन निकालना वा रखना होगा।[3]　　१०

—:o:—

[पूर्ण संख्या ७६०]　　स्वीकार-पत्र[4]

।।श्रीरामजी।।

परमहंसपरिव्राजकाचार्य श्रीमद्दयानन्द सरस्वतीस्वामिकृत स्वीकारपत्र की प्रति।।

---

१. देखो मास्टर लक्ष्मण जी सम्पादित उर्दू जीवन चरित परिशिष्ट पृष्ठ २७६ [यहां पृष्ठ संख्या अशुद्ध छपी है, २६३ चाहिये। यु० मी०]　　१५

२. इस रामनाथ को बा० दुर्गाप्रसाद जी ने फर्रुखाबाद से श्री स्वामी जी महाराज के पास लेखक के रूप में भेजा था। यह स्वामी जी महाराज के पास भाद्र शु० ७, शनिवार, १६३७ (११ सितम्बर १८८०) को मेरठ पहुंचा था। द्र० पूर्ण संख्या ४६२ (प्रथम भाग, पृष्ठ ५१५)।　　२०

३. यह सारांश ४ मार्च १८८३ (=फा० व० १० सं० १६३६) पूर्ण संख्या ७६५ (पृष्ठ ७६७) के पत्र में निर्दिष्ट है। ऋ० द० ने यह पत्र बाबू दुर्गाप्रसाद के माघ सु० १४, सं० १६३६ (२० फरवरी १८८३) के पत्र के उत्तर में लिखा था। बा० दुर्गाप्रसाद का पत्र तीसरे भाग में देखें।

४. प्रथम स्वीकार पत्र की रजिस्ट्री १० अगस्त १८८० (=श्रावण शु० ४, मङ्गलवार, सं० १६३७) के दिन मेरठ में हुई थी। वह पूर्ण संख्या ४४७ पृष्ठ ४८८-४६३ पर छपा है। यह दूसरा तथा अन्तिम स्वीकार पत्र है। राजयन्त्रालय उदयपुर में मुद्रित मूल स्वीकार-पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।　　२५

राजकीय

मुद्रा

आज्ञा (राज्ये श्रीमहद्राजसभा) संख्या २६०

आज यह स्वीकारपत्र श्रीमान् श्री १०८ श्रीजी धीरवर चिर-
५ प्रतापी विराजमानराज्ये श्रीमहद्राजसभा के सम्मुख स्वामीजी श्री दयानन्द सरस्वती जी ने सर्वरीत्या अङ्गीकार किया अत एव:—

आज्ञा हुई—

कि प्रथम प्रति तो इस स्वीकारपत्र की स्वामीजी श्री दयानन्द
१० सरस्वतीजी को राज्ये श्री महद्राजसभा के हस्ताक्षरी और मुद्राङ्कित दी जावे और दूसरी प्रति उक्त सभा के पत्रालय में रहे और एक-एक प्रति इसकी राज यन्त्रालय में मुद्रित होकर इस स्वीकारपत्र में लिखे सब सभासदों के पास उन के ज्ञातार्थ और इसके नियमानुसार वर्तने के लिये भेजी जाये, संवत् १९३९ फाल्गुन
१५ शुक्ला[1] ५ मङ्गलवार तदनुसार ता० २७ फेब्रुएरी सन् १८८३ ई०।

हस्ताक्षर महाराणा सज्जनसिंहस्य

(श्रीमेदपाटेश्वर और राज्ये श्रीमहद्राजसभापति)

—:०:—

(राज्ये श्रीमहद्राजसभा के सभासदों के हस्ताक्षर—

२० १ राव तख्तसिंह वेदले — ४ द० महाराज रायसिंह
२ राव रत्नसिंह पारसोली — ५ हस्ताक्षर मामा बख्तावरसिंहस्य
३ द० महाराज गजसिंह का — ६ द० राणवत उदयसिंह

---

१. यहां भूल से "कृष्णा" के स्थान में "शुक्ला" छपा है। कृष्णा ५ चाहिये, क्योंकि २७ फरवरी को फाल्गुन कृष्णा ५ मङ्गलवार था। फाल्गुन
२५ शुक्ला ५ को भी मङ्गलवार था, परन्तु उस दिन तारीख १३ मार्च थी। अगले फाल्गुन वदी १० पूर्ण संख्या ७६३, के पत्र पृष्ठ ७६४ से भी इस भूल पर प्रकाश पड़ता है। उस में लिखा है—"हम उदयपुर से फाल्गुन वदी ७ गुरुवार के दिन………चले। गत पञ्चमी मङ्गलवार के दिन सायंकाल ७ बजे ………स्वीकारपत्र………श्रीमानों के हस्ताक्षर और राजकीय
३० मोहर लगाकर………।"

७ हस्ताक्षर ठाकुर मनोहरसिंह　　११ ह० पुरोहित पद्मनाथस्य
८ हस्ताक्षर कविराज श्यामलदासस्य　　१२ जा० मुकुन्दलाल
९ हस्ताक्षर सहीवाला अर्जुनसिंह का १३ ह० मोहनलाल पण्ड्या
१० दा० रा० पन्नालाल

स्वीकारपत्र ॥　　५

मैं स्वामी दयानन्दसरस्वती निम्नलिखित नियमानुसार त्रयोविंशति सज्जन आर्य्यपुरुषों की सभा को वस्त्र, पुस्तक, धन और यन्त्रालय आदि अपने सर्वस्व का अधिकार देता हूं और उस को परोपकार सुकार्य में लगाने के लिये अधिष्ठाता करके यह पत्र लिखे देता हूं कि समय पर कार्यकारी हो। जो यह एक सभा कि　१० जिसका नाम परोपकारिणीसभा है उस के निम्नलिखित त्रयोविंशति सज्जन पुरुष सभासद् हैं उन में से इस सभा के सभापतिः—

१ श्रीमन्महाराजाधिराज महीमहेन्द्र यावदार्य्यकुलदिवाकर महाराणा जी श्री १०८ श्रीसज्जनसिंहजी वर्म्मा धीरवर जी०　१५ सी० एस० आई० उदयपुराधीश हैं, उदयपुर राज मेवाड़।

२ उपसभापति लाला मूलराज एम० ए० एक्स्ट्रा एसिस्टेण्ट कमिश्नर प्रधान आर्य्यसमाज लाहौर जन्मस्थान लुधियाना।

३ मन्त्री श्रीयुत कविराज श्यामलदासजी उदयपुर राज मेवाड़।　२०

४ मन्त्री लाला रामशरणदास रईस उपप्रधान आर्य्यसमाज मेरठ।

५ उपमन्त्री पण्ड्या मोहनलाल विष्णुलालजी निवास उदयपुर जन्मभूमि मथुरा।

सभासद्।　　२५

नाम	स्थान
१ श्रीमन्महाराजाधिराज श्री नाहरसिंहजी वर्मा	शाहपुरा राज मेवाड़
२ श्रीमत् राव तख्तसिंहजी वर्म्मा	बेदला राज मेवाड़
३ श्रीमत् राज्य राणा श्रीफतहसिंहजीवर्म्मा	देलवाड़ा राज मेवाड़　३०
४ श्रीमत् रावत अर्जुनसिंहजी वर्मा	आसींद राज मेवाड़

५ श्रीमत् महाराज श्रीगजसिंहजी वर्म्मा उदयपुर मेवाड़
६ श्रीमत् राव श्री बहादुरसिंहजी वर्म्मा मसूदा जिले अजमेर
७ रावबहादुर पं० सुन्दरलाल सुपरेंटेंडेंट वर्कशोप और प्रेस अलीगढ़ आगरा[1]
५ ८ राजा जयकृष्णदास सी० एस० आई० डिपुटी-कलक्टर बिजनौर मुरादाबाद[1]
९ बाबू दुर्गाप्रसाद कोशाध्यक्ष आर्य्यसमाज व रईस फर्रुखाबाद
१० लाला जगन्नाथप्रसाद रईस फर्रुखाबाद
११ सेठ निर्भयराम प्रधान आर्य्यसमाज फर्रुखाबाद [1]बिसाऊ
१० राजपूताना
१२ लाला कालीचरण रामचरण मन्त्री आर्यसमाज फर्रुखाबाद
१३ बाबू छेदीलाल गुमाश्ते कमसर्यट छावनी मुरार कानपुर
१४ लाला साईंदास मन्त्री आर्य्यसमाज लाहौर
१५ बाबू माधवदास[2] मन्त्री आर्य्यसमाज दानापुर
१५ १६ रावबहादुर रा० रा० पण्डित गोपालराव हरि देशमुख मेम्बर कौन्सिल गवर्नल बम्बई और प्रधान आर्य्य समाज बम्बई पूना
१७ रावबहादुर रा० रा० महादेव गोविन्द रान्डे जज्ज पूना
१८ पं० श्यामजी कृष्ण वर्म्मा प्रोफेसर संस्कृत यूनीवरसिटी
२० आक्सफोर्ड लंडन [1]बम्बई

नियम।

१ उक्त सभा जैसे कि वर्तमानकाल वा आपत्काल में नियमानुसार मेरी और मेरे समस्त पदार्थों की रक्षा करके सर्वहितकारी कार्य में लगाती है, वैसे मेरे पश्चात् अर्थात् मेरे मृत्यु के पीछे भी
२५ लगाया करे:—

प्रथम—वेद और वेदाङ्गादि शास्त्रों के प्रचार अर्थात् उनकी व्याख्या करने कराने पढ़ने पढ़ाने सुनने सुनाने छापने छपवाने आदि में॥

---

१. वर्तमान पते के साथ निर्दिष्ट यह नगर का नाम मूल स्थान का
३० निर्देशक है।

२. इन का उल्लेख पत्रों में माधोलाल, माधोप्रसाद नामों से हुआ है।

द्वितीय—वेदोक्त धर्म के उपदेश और शिक्षा अर्थात् उपदेशक-मंडली नियत करके देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में भेज कर सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग कराने आदि में ॥

तृतीय—आर्यावर्त्तीय अनाथ और दीन मनुष्यों के संरक्षण पोषण और सुशिक्षा में व्यय करे और करावे ॥　　५

२ जैसे मेरी विद्यमानता में यह सभा सब प्रबन्ध करती है वैसे मेरे पश्चात् भी तीसरे वा छठे महीने किसी सभासद् को वैदिक यन्त्रालय का हिसाब किताब समझने और पड़तालने के लिये भेजा करे और वह सभासद् जाकर समस्त आय व्यय और संचय आदि की जांच पड़ताल करे और उनके तले अपने हस्ताक्षर लिखदे और　　१० उस विषय का एक-एक पत्र प्रति सभासद् के पास भेजे और उसके प्रबन्ध में कुछ हानि लाभ देखे उसकी सूचना अपने भी परामर्श सहित प्रत्येक सभासद् के पास लिख भेजे, पश्चात् प्रत्येक सभासद् को उचित है कि अपनी-अपनी सम्मति सभापति के पास लिख कर भेजदे और सभापति सब की सम्मति से यथोचित प्रबन्ध करे और　　१५ कोई सभासद् इस विषय में आलस्य अथवा अन्यथा व्यवहार न करे ॥

३ इस सभा को उचित है किन्तु अत्यावश्यक है कि जैसा यह परमधर्म और परमार्थ का कार्य है उसको वैसा ही उत्साह, पुरुषार्थ, गम्भीरता और उदारता से करे ॥　　२०

४ मेरे पीछे उक्त त्रयोविंशति आर्यजनों की सभा सर्वथा मेरे स्थानापन्न समझी जाय अर्थात् जो अधिकार मुझे अपने सर्वस्व का है वही अधिकार सभा को है और रहे। यदि उक्त सभासदों में से कोई इन नियमों से विरुद्ध स्वार्थ के वश होकर वा कोई अन्य जन अपना अधिकार जतावे तो वह सर्वथा मिथ्या समझा जाय।　　२५

५ जैसे इस सभा को अपने सामर्थ्य के अनुसार वर्त्तमान समय में मेरी और मेरे समस्त पदार्थों की रक्षा और उन्नति करने का अधिकार है वैसे ही मेरे मृतक शरीर के संस्कार करने कराने का भी अधिकार है अर्थात् जब मेरा देह छूटे तो न उसको गाड़ने, न जल में बहाने, न जङ्गल में फेंकने दे, केवल चन्दन की चिता　　३० बनावे और जो यह सम्भव न हो तो दो मन चन्दन, चार मन घी, पांच सेर कपूर, ढाई सेर अगर तगर और दश मन काष्ठ लेकर

वेदानुकूल जैसे कि संस्कारविधि में लिखा है वेदी बनाकर तदुक्त वेदमन्त्रों से होम करके भस्म करे इस से भिन्न कुछ भी वेदविरुद्ध क्रिया न करे और जो सभाजन उपस्थित न हों तो जो कोई समय पर उपस्थित हो, वही पूर्वोक्त क्रिया कर दे और जितना धन उस
५ में लगे उतना सभा से ले ले और सभा उसको दे दे ॥

६ अपनी विद्यमानता में और मेरे पश्चात् यह सभा चाहे जिस सभासद् को पृथक् करके उसका प्रतिनिधि किसी अन्य योग्य सामाजिक आर्यपुरुष को नियत कर सकती है, परन्तु कोई सभासद् सभा से तब तक पृथक् न किया जाय, जब तक उसके कार्य में अन्यथा
१० व्यवहार न पाया जाय ॥

७ मेरे सदृश यह सभा सदैव स्वीकारपत्र की व्याख्या वा उस के नियम और प्रतिज्ञाओं के पालन वा किसी सभासद् के पृथक् और उस के स्थान में अन्य सभासद् के नियत करने वा मेरे विपत् और आपत्काल के निवारण करने के उपाय और यत्न में वह
१५ उद्योग करे, जो समस्त सभासदों की सम्मति से निश्चय और निर्णय पाया वा पावे और जो सम्मति में परस्पर विरोध हो तो बहुपक्षानुसार प्रबन्ध करे और सभापति की सम्मति को सदैव द्विगुण जाने ॥

८ किसी समय भी यह सभा तीन से अधिक सभासद को अप-
२० राध की परीक्षा कर पृथक् न कर सके, जब तक पहिले तीन के प्रतिनिधि नियत न कर ले ॥

९ यदि सभा में से कोई पुरुष मर जाय वा पूर्वोक्त नियमों और वेदोक्त धर्मों को त्यागकर विरुद्ध चलने लगे तो इस सभा के सभापति को उचित है कि सब सभासदों की सम्मति से पृथक् कर के
२५ उसके स्थान में किसी अन्य योग्य वेदोक्त धर्मयुक्त आर्य पुरुष को नियत कर दे, परन्तु जब तक नित्यकार्य के अनन्तर नवीन कार्य का आरम्भ न हो ॥

१० इस सभा को सर्वथा प्रबन्ध करने और नवीन युक्ति निकालने का अधिकार है, परन्तु जो सभा को अपने परामर्श और
३० विचार पर पूरा-पूरा निश्चय और विश्वास न हो, पत्र द्वारा समय नियत करके सम्पूर्ण आर्यसमाजों से सम्मति ले ले और बहुपक्षानुसार उचित प्रबन्ध करे ॥

११ प्रबन्ध न्यूनाधिक करना वा स्वीकार वा अस्वीकार करना वा किसी सभासद् को पृथक् वा नियत करना वा आय व्यय और संचय की जांच पड़तात करना आदि लाभ हानि सब सभासदों को वार्षिक वा षाण्मासिक पत्र द्वारा सभापति छपवाकर विदित करै। ५

१२ इस स्वीकार-पत्र सम्बन्धी कोई झगड़ा टंटा सामयिक राज्याधिकारियों की कचहरी निवेदन न किया जाय। यह सभा अपने आप न्यायव्यवस्था करले, परन्तु जो अपनी सामर्थ्य से बाहर हो तो राज्यगृह में निवेदन करके अपना कार्य सिद्ध करले॥

१३ यदि मैं अपने जीते जी किसी योग्य आर्य्यजन को पारि- १० तोषिक अर्थात् पेनशन देना चाहूं और उसकी लिखित पढ़त कराके रजिस्टरी करा दूं तो सभा को उचित है कि उसको माने और दे।

१४ किसी विशेष लाभ उन्नति परोपकार और सर्वहितकारी कार्य के वश मुझे और मेरे पीछे सभा को पूर्वोक्त नियमों के न्यूना- १५ धिक करने का सर्वथा सदैव अधिकार है॥

ह० दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७६१]　　पत्र-सारांश

[श्री शाहपुराधीश नाहरसिंह वर्मा]

हम उदयपुर से चलकर चित्तौड़ पहुंच गये हैं।[1] २०

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७६२]　　पत्र-सारांश

[भाई जवाहरसिंह मन्त्री आर्यसमाज लाहौर]

वैदिक यन्त्रालय के सहाय में लाहौर समाज से कितना रुपया गया था।[2]

---

१. यह पत्र-सारांश शाहपुराधीश नाहरसिंह जी के फाल्गुन वदी २(१२ २५ चाहिये) के पत्रानुसार बनाया है। चित्तौड़ ऋ० द० फाल्गुन वदि ७ (१ मार्च १८८३) की रात को पहुंचे थे। द्र०—अगला पूर्ण संख्या ७६३ का पत्र।

२. इस पत्र का संकेत जवाहरसिंह के १६ मार्च १८८३ के पत्र में है।

लगभग ४ मार्च १८८३। [चित्तौड़गढ़]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७६३] पत्र

ओ३म्[1]

मुन्शी समर्थदानजी आनन्दित रहो—

५ हम उदयपुर से फाल्गुन वदी ७ गुरुवार[2] के दिन घड़ी रात से राज की चार घोड़े की डाक बग्गी में चल के शाम के ५ बजे नीमाहेड़े पहुं[च] कर ६ बजे रात के चित्तौड़ में पहुंच गये, रेल में बैठकर। यहां तीन दिन ठहरेंगे। पश्चात् जहां जायेंगे तुम को खबर देंगे। अब उदयपुर का वर्त्तमान लिखते हैं। जब से उदयपुर में
१० पहुंचे उस दिन से बहुत आनन्दित रहे। और नित्य प्रीति श्रीमान् महाशयों की बढ़ती ही गई। मनुस्मृति के सप्तम, अष्टम, नवम पर्यन्त राजधर्म सब यथातथ्य पढ़ लिये। अन्य बहुत से महाभारतस्थ विदुरप्रजागर तथा ६ शास्त्रों के मुख्य-मुख्य विषय और चलते वक्त थोड़ा सा व्याकरण का विषय और अन्वय की रीति
१५ भी पढ़ ली। जैसा कि राजाओं को सत्यप्रतिज्ञ और पुरुषपरीक्षक और गुणज्ञ तथा स्वगुण स्वदोष के मानने वाले होने चाहियें, वैसे श्रीमान् महाशयार्य्यकुलदिवाकरों को मैंने देखा। बहुत से राजा मुझ से मिले, परन्तु जैसी प्रसन्नता मेरी और उदयपुराधीश की परस्पर रही और आगे के लिये भी दृढ़ रहेगी, वैसी अन्य से बहुत
२० न्यून सम्भावना है। अब जिस समाचार को तुम पूछा करते थे वह निम्नलिखित जानो। संस्कृत के अपने जो कि वेदाङ्गप्रकाशादि हैं उनका प्रचार राजकीय पाठशाला तथा चारणों की पाठशाला में कर दिया है।

वो जो प्रसिद्ध वा रहस्य[3] में राजधर्म, ईश्वर तथा वैदिकधर्म

---

२५ उक्त पत्रानुसार ८ दिन पहले श्री स्वामी जी का पत्र आ चुका था। जवाहरसिंह का पत्र तीसरे भाग में देखें।

१. आर्यधर्मेन्द्रजीवन तृतीय संस्करण, पृष्ठ ३७१-३७२ से लिया गया। मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में होगा।

२. १ मार्च १८८३॥

३० ३. क्या रहस्य शब्द से अभिप्राय पूर्ण संख्या ७२६ पृष्ठ ७५५-७६४ तक मुद्रित दिनचर्य्या से है?

प्रचार, और शरीर, राजनीति आदि विषयों में उपदेश मैंने किया है, उसका आचरण बहुत सा कर लिया और करने की प्रतिज्ञा भी की है।

गत पञ्चमी मङ्गलवार के दिन[1] सायङ्काल ७ बजे बड़े-बड़े सर्दार तथा कामदारों की सभा बुला के स्वीकारपत्र जो कि मेरठ में हमने रजिस्टर कराया था, उस में से एच० एच० कर्नल आलकाट साहब तथा एच० पी० ब्लैवस्टकी, मुन्शी इन्द्रमणि को पृथक् कर किये, और डाक्टर बिहारीलाल जी का शरीर छूट गया, इन के ठिकाने में अन्य [चार तथा] पांच सभासद् और बढ़ा दिये अर्थात् प्रथम अठारह थे, अब तेईस हो गये। उन में सभापति श्रीमान् आर्य्यकुलदिवाकर श्रीयुत महाराणा जी और उपसभापति लाला मूलराज एम० ए०, मन्त्री कविराज श्यामलदास जी आदि नियत हुए हैं। उसकी एक प्रति श्रीमानों के हस्ताक्षर और राजकीय मोहर लगाकर सब ने माननीय प्रतिष्ठित माना है। यह बात महालाभदायक और बहुत बड़ा काम देगी। अब सरकारी राज में भी इस की रजिस्टरी करा लें, सो रजवाड़ों में और अंगरेजी राज में भी बड़ा माननीय होगा। और राजकीय यन्त्रालय उदयपुर में छपकर सभासदों के पास एक-एक प्रति पहुंचेगी। और जियादह छपेंगी तो अन्य योग्य पुरुषों के पास भेज दी जायंगी। यह तुम्हारे पास इसलिये भेजते हैं कि अपने परामर्श, अनुमति और महाराणा जी को धन्यवाद लेखपूर्वक-पत्र अन्त में, और आदि में, यह स्वीकार पत्र अच्छे कागज पर और अच्छे टैप में छपवा कर योग्य-योग्य वेदभाष्य के ग्राहक और भारतमित्रादि समाचारपत्र और मुख्य-मुख्य पुस्तकालय में भेज दो। और जब छप चुकेगा तब हम भी लिखेंगे कि फलाने-फलाने के पास भेज दो।

और एक पत्र हमारे पास आने वाला है कि उस को एक अच्छे कागज पर छापकर तुमको सब आर्य्यसमाजों के पास भेजना होगा।

---

१ यह पत्र फाल्गुन वदी १० का है। अतः यहां 'गत पञ्चमी मङ्गलवार' से अभिप्राय फाल्गुन वदी ५ (२७ फरवरी १८८३) से है। पूर्ण संख्या ७६० (पृष्ठ ७८३-७९३) पर जो स्वीकारपत्र छपा है, उसमें फाल्गुन शुक्ला ५ मङ्गलवार (२७ फरवरी) लिखा है, वह अशुद्ध है। यह इस पत्र से भी व्यक्त है। यहां पृष्ठ ७८८ की टि० भी देखें।

और वे श्रीमान् महाराणा जी के पास भेज देंगे।[1] और कुछ-कुछ अपने आनन्दप्रदर्शक बातें लिखकर भेजेंगे तो अच्छा होगा।

बारह सौ रुपये कलदार धर्मार्थ वेदभाष्य के सहाय में, एक दुशाला मुझको, तथा पांच सौ रुपये कलदार आर्य्यसमाज फीरोज-
५ पुर के अनाथाश्रम के लिये, और सौ रुपये कलदार वहां जो लड़-कियां कसीदा का काम करती हैं उनको पारितोषिक के लिये, और सौ रुपये कलदार और साधारण दुशाला रामानन्द ब्रह्मचारी को दिया। अर्थात् उन्नीस सौ कलदार रुपये और दो वस्त्र प्रदान किये।

१० इन बारह सौ रुपयों को उन्हीं के पास रक्खे हैं। इस प्रयोजन के लिये कि इस मुख्यस्थान से प्रधान वैदिक धर्म प्रचार होवे और उस को पूर्ण सहाय मिले। इसका नाम वैदिकनिधि रक्खा है। और मेरे नाम से स्थापित हुआ, ऐसा खाता राजकोष में और महद्राज-सभा में लिखित हो गया। इत्यादि सब उत्तम बातें वहां की यात्रा
१५ से हुईं जिस को तुम सुन कर बड़े आनन्दित होगे। इस लिये प्रथम तुम को लिखा। इस के आगे जो-जो वर्त्तमान होगा तुम को लिखा जायगा। और गोरक्षा में भी पूरा सहाय निश्चित मिलेगा।

चित्तौड़गढ़ |
मि० फाल्गुन वदी १० रविवार सं० १९३९ |
२० तदनुसार ता० ४ मार्च सन् १८८३ | (दयानन्द सरस्वती)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ७६४] पत्र-सूचना

[मन्त्री आर्यसमाज लाहौर]
लाहौर समाचार भेजने के विषय में[2]।

—:०:—

१. महाराणा उदयपुराधीश को आर्यसमाजों की ओर से जिस धन्यवाद
२५ पत्र को भेजने का निर्देश है, उसे तृतीय परिशिष्ट में देखें।

२. इसका संकेत अगले पूर्ण संख्या ७६५ के पत्र में है। (पृष्ठ ७६७, पं० १७-१८)।